मोहिनीविद्या

साधना और सिद्धी



अ. ल. भागवत

आचार्य अ. ल. भागवत लिखित
शीघ्र प्रसिद्ध होनेवाले महान् ग्रंथ.

मोहिनी विद्या
साधना और सिद्धि

: लेखक :
आचार्य अ. ल. भागवत,
B. Com., C. A. I. I. B.



श्रीगजानन बुक डिपो प्रकाशन, दादर, बम्बई २८.

प्रकाशक :
रमेशसिंह रघुवंशी
श्रीगजानन बुक डिपो
कबुतरखाना, भवानी शंकर रोड,
दादर, बम्बई ४०००२८

प्रथम संस्करण १ मई १९७४

मूल्य : पन्द्रह रुपये

विदेशमें : तीस शिलिंग

मुद्रक :
म. बा. जोशी, बी. ए.
ज्ञानविलास प्रेस
२७ बुधवार, पुना २

लेखक की ओरसे दो शब्द

मराठी भाषा में बहुचर्चित मेरी पुस्तक " **मोहिनी विद्या : साधना और सिद्धि** " हिन्दी भाषा के विशाल जगत् में प्रवेश कर रही है। इस सु-अवसर पर मुझे बहुत हर्ष हो रहा है। क्योंकि इस पुस्तक के प्रकाशन से मुझे हिन्दी भाषी देशवासियों की सेवा करने का मौका मिलनेवाला है।

बचपन से ही गूढ-शास्त्रों में मेरी रुचि रही है। अनेकों योगियों से मेरा संपर्क रहा है। भारत योगि-महात्माओं का देश रहा है। आत्मोन्नति के लिए यहाँ हमेशा योगियों ने अपने प्राण तक न्योछावर किए हैं। ऐसे ही साक्षात्कारी योगियों के पवित्रतम चरणों के पास बैठ कर मैंने जो भी ज्ञानराशी प्राप्त की है वही सब आपके सुपूर्द कर रहा हूँ।

आज की हमारे देश की अवनति, हमारे देशवासियों के चेहरे पर छाई हुई उदासी और चिंता, उनका दारिद्र आदि को देख कर मुझे अत्यन्त खेद होता है।

आशा करता हूँ कि मेरी बताई हुई साधनाओं को अपना कर आप अपनी आत्मोन्नति करेंगे और इस देश को फिर एक बार सुजला-सुफला बना देंगे।

इस पुस्तक का यह हिन्दी संस्करण तैयार करने में मेरे प्रिय मित्र श्री एकनाथ पाटिलजी की बडी सहायता रही है। अ-हिन्दी भाषी होते हुए भी सरल तथा सुन्दर हिन्दी में अनुवाद कर आपनें राष्ट्रभाषा की बडी ही सेवा की है। मैं आपका आभारी हूँ।

मेरे हिन्दी भाषी मित्र इस किताब का हार्दिक स्वागत कर, उसका पूरा लाभ उठाएंगे और मेरी आनेवाली किताबों की भी राह देखते रहेंगे और उनका भी स्वागत करेंगे ऐसी मुझे पूरी पूरी उम्मीद है।

आपका शुभचिंतक,
आचार्य अ. ल. भागवत

प्रकाशक की ओर से कुछ बातें

दोस्तों ! इस पुस्तक के द्वारा मैं आपसे पहली वार मिल रहा हूँ। यह मेरी पहली पुस्तक है, जिसको लेकर मैं हिन्दी जगत् में प्रवेश कर रहा हूँ।

आज की घड़ी ऐसी है कि हम इस देश के वासी बडे भयानक संकट-काल में से गुजर रहे हैं। पूरे देश में अनजानी उदासी छाई हुई है। बड़ा ही आर्थिक संकट हमारे ऊपर गिर पड़ा है। आश्चर्य की बात तो यह है कि नव्वे प्रति शत लोग तो यह क्या हो रहा है ? क्यों हो रहा है ? इससे भी अनभिज्ञ हैं। इस देश के ये नव्वे प्रति शत लोग तो जानवरों से भी निकृष्ट जीवन बिता रहे हैं। हमारे मूर्ख व स्वार्थी नेताओं ने जान-बूझकर जो रास्ता चुना है उसका बुरा फल हमें मिल रहा हैं।

हमारे देशके स्वार्थी नालायक नेताओं ने एक ऐसी शासनप्रणाली बनवाई जो उनके और पूंजीपतियों के पूरे हित में थी। एक बात तो सत्य है कि यह शासन-प्रणाली वनाते वक्त भी इस देश की नव्वे प्रति शत जनता से न कुछ पूछा गया न किसीने उसकी कुछ पर्वाह तक की। स्वार्थ से अंधे इन दस प्रति शत लोगों ने यह शासनप्रणाली हमारे ऊपर लाद दी है।

इस देश का संविधान देश के साधारण आदमी से कुछ भी ताल्लुक नहीं रखता। यह संविधान पूंजीपतियों के नंगे स्वार्थ की जीती जागती तस्वीर है। यहाँ की नव्वे प्रति शत जनता हमेशा गरीब और बुद्धिहीन जानवरों की तरह बोझ ढोती रहे यही इन पूंजीपतियों की तमन्ना रही है। आज भी हमारी आत्मा खोई हुई है। आज भी हमें वे जालीम अपने हाथोंकी अंगूलियों के इशारे पे नचा रहे हैं, हमारे कष्टोंका नाजायज लाभ उठा रहे है। याद रखिए आप-हम जो साँस लेते है, छोडते हैं वह भी पूंजीपतियों के हित में है। आप किसी दफ्तर में काम करते हैं। फैक्टरी में श्रम करते हैं। खेतमें हल चलाते हैं। उस श्रम का तीन चौथाई हिस्सा पूंजीपतियों के घर चला जाता है। आपके हाथ लग जाता है सिर्फ एक चौथाई हिस्सा। मान जाइए, आप रोज आठ रुपये कमा लेते हैं। पर उसमें से छें: रुपये तो शाम होते ही पूंजीपति अपने मुनाफे के नाते आपसे छीन लेते हैं। आपको मूर्ख, अज्ञानी, आत्माहीन रखना ही इस देश के आज के शासकों के हित में है। आपकी आत्मोन्नति उनके हित में नहीं है।

और हम जब तक इस बातको नहीं पहचानते तब तक आप निश्चित रूप से समझ रखिए कि इस देश के नव्वे प्रतिशत आप और हम सौ साल तो क्या हजार साल बीत जाने पर भी हमेशा हमेशा के लिए दाने दाने को तरसते रहेंगे।

आज इस शासनप्रणाली का इस भूमि से यहाँ के भूमिपुत्रों से कोई भी नाता-रिश्ता नहीं है। यह तो एक ऐसी दुष्ट, हीन योजना है जो हमें तथा हमारी भावी सन्तानों को हमेशा के लिए अंधकूप में रखनेवाली है।

दोस्तों! आजादी पाकर सत्ताईस साल हो चुके हैं। हमें अब तो निश्चित जागना है। कब तक हम सोते रहेंगे और इन दुष्टों को हमारा लोहू पीने देंगे। हमारी खोई हुई आत्मा की फिरसे खोज करनी है। आवाज बुलन्द करनी है। हमें लढ़ना है। वह भी पूरी ताकद के साथ। पूरा शक्ति-सर्वस्व लगाकर। सब कुछ न्योछावर कर। अगर आज हम कुछ नहीं कर सकेंगे तो याद रखिए, हमारी सारी जिंदगी भर हम कुछ भी नहीं कर पाएंगे।

तो हमें क्या करना होगा? पहले तो हमें अपने आपको पूरी तरह पहचानना होगा। अपने आपको पूरी तरह बदलना होगा। आज तक हम सोये हुए थे। दबे हुए थे। हम इन्सान नहीं थे, एक मशिन थे। जो रात-दिन पूंजीपतियों के स्वार्थ के लिए दौड-धूप कर रहे थे। अपना हित तक हमें मालूम नहीं था। हमें अपने आपको समझना होगा। हम इन्सान हैं न कि किसी पूंजीपति की कठपुतलियाँ। हम इन्सान हैं यह हम जान गये तो फिर हमें इन्सान की तरह आत्मविश्वास बढ़ाना होगा। अपनी इच्छाशक्ति (Will Power) जमीन-आसमानको एक कर बढानी होगी। वह कैसी बढाई जाय इसके लिए गुप्त और महानतम साधनाएँ इस किताब में दी गई हैं।

हमारी इच्छाशक्ति जाग उठने पर ही हम अपने को अच्छी तरहसे जान सकेंगे। हमारी ताकद प्रचंड है। उसके द्वारा हम सारे विश्व को हमारी मुट्ठी में बंद करा सकते हैं। जब हम इसको जानेंगे तो हमारा आत्मविश्वास इस तरह बढता जाएगा कि हमें संगठन बनानेकी ओर कदम बढाना ही पड़ेगा। एक आदमी का आत्मविश्वास भी अधूरा रह जाता है। जब हम सौ, हजार, लाख लोग अपनी इच्छाशक्ति को जगाकर एकात्म हो जाएंगे तब हमारे उस आत्मविश्वास तथा इच्छा-शक्ति को करोड़ गुणा बढा देंगे।

अगर आपका आत्मविश्वास बढ जाय तो, आपको इस आत्मविश्वास को निर्माण करनेवाली गुप्त साधनाओं का प्रचार करना होगा।

पहले तो हमें अपने मित्रों, रिश्तेदारों,पडोसियों से यह एक नया नाता-रिश्ता जोडना होगा। उन्हें अज्ञान के अंधःकार से मुक्त करना होगा। यह ग्रंथावलि उसका माध्यम रहेगी। बादमें हमारा लक्ष्य हमारा मोहल्ला, गाँव, कस्बा होगा।

ऐसे कुछ लोग तैयार हो जानेपर हमें एक संगठन बनाना होगा। संगठन के सिवाय तो हम कुछ कर न पाएंगे। इस संगठन का नाम होगा "नया मानव।" इसका हर सदस्य आत्मविश्वास से भरा होगा। यह संगठन जाति, धर्म, वर्ग,

प्रांत से भरा ऊँचा होगा। उसकी एकमेव ललकार रहेगी कि अपनी इच्छाशक्ति (Will Power) का असीम विकास करो।

हमें शीघ्र ही संगठित होना होगा। क्योंकि संगठित होकर ही हम कुछ न कुछ कर सकेंगे। जब पूर्ण विकसित इच्छाशक्ति–धारक एक लाख नौजवान एक हो जाएंगे तब उनकी शक्ति सारे विश्व की शक्ति की तुलना में कई गुणा अधिक होगी।

जब हम संगठित हो जाएंगे तो हमारी इच्छाशक्ति (Will Power) एकत्रित हो जाएगी। पूरे देश की नब्बे प्रति शत इच्छाशक्ति एक हो जाय तो हम न केवल इस दुष्ट शासनप्रणाली को ही हटा सकेंगे बल्कि हिमालय पहाड को भी उत्तर से दक्षिण में लाकर बसा देंगे।

हमारी हर क्षण की साँस भी इस देश के हित के लिए शरीर के अन्दर ली जाएगी और बाहर छोडी जाएगी। हमारी हर कृति, चाहे हम दफ्तर में काम करते हों, खेतों में हल चलाते हो, फैक्टरी में मेहनत करते हों, देशके कल्याण के लिए होगी।

इस " नया मानव " संगठन का माध्यम यह ग्रंथावली होगी। इस ग्रंथावलि में से आप की इच्छाशक्ति (Will Power) बढानेवाली सामग्री, साप्ताहिक पत्रिका, मासिक पत्रिका और ग्रंथ द्वारा प्रसारित होगी। हम शीघ्र ही साप्ताहिक पत्रिका, मासिक पत्रिका शुरू कर रहे हैं, जिसका एकमात्र उद्देश्य समाज के, देश के हीत में होगा।

आपका पहिला कर्तव्य होगा इस ग्रंथावलि का ज्यादह से ज्यादह लोगों तक प्रचार करना। उन्हें सदस्य बनाना। सदस्य बनने की न कोई फीस होगी और न कोई बन्धन। बन्धन सिर्फ होगा आपके आत्मविश्वास को बढाना। तो दोस्तों, आजसे शुरू हो जाय आत्मविश्वास बढाना, इच्छाशक्ति को बढाना, सदस्य बनाना, संगठन बांधना।

शुरुआत में सदस्य निम्नलिखित कार्य करें।

१. इस संगठन का प्रतिज्ञा-पत्र हमसे मंगवाकर उसकी खानापूर्ति कर भेजे।
२. इस ग्रंथावलिका, संगठन का अपने मित्रपरिवार में गाँवमे प्रचार करे। और सदस्य संख्या बढावें।
३. अपने मित्रों, रिश्तेदारों के पते हमें भेज दे।

कृपया हमारा पता नोट करे :–
श्री रमेशसिंह रघुवंशी
द्वारा गजानन बुक डिपो
दादर, बंबई ४०००२८

आचार्य अ. ल. भागवत लिखित शीघ्र ही

प्रकाशित होनेवाले ग्रंथ

१ मनकी अगाध शक्ति और स्वयंसूचना :

आपके मनकी शक्ति अपार और अगाध है। साधम-मार्गसे उसे जाग्रत कर और उसपर काबू पा कर आपका जीवन प्रभावशाली तथा सुखी बनानेकी कुंजी। इस ग्रंथमें ड़ोरा, तावीज, भभूत आदि को अभिमंत्रित करनेकी विधियाँ, नए और आसान प्राणायाम और अनेकों गुप्त साधनाएँ दी गई हैं।

२ असीमके उस पार :

दिन-रातकी चिंता, विचार, भय, दारिद्र, बेरोज़गारी आदि से आपका मन दुर्बल और क्षीण हो गया है। इस ग्रंथमें दी गई अति उच्च कोटिकी गुप्त साधना-ओंके द्वारा आपकी इच्छाशक्ति प्रबल कैसे बनाई जाय इसका मूलमंत्र आप पाएंगे।

३ हस्तरेषा-दर्पण :

इस ग्रंथकी रचना अत्यंत सरल भाषामें तथा ६८ महत्त्वपूर्ण आकृतियोंके साथ की गई है। इस ग्रंथके सहारे आप अपने रिश्तेदारों तथा मित्र-परिवारों के हाथ देखकर अचूक भविष्य-कथन कर सकते हैं। आधुनिक कालमें जिन दो नए ग्रहोंकी खोज हुई उन हर्षेल तथा नेपच्यून के स्थान हाथपर निश्चित करनेका पहला सफल प्रयत्न इस ग्रंथमें किया गया है। यह ग्रंथ प्रकाशित होते ही 'बाम्बे एस्ट्राला-जिकल सोसायटी' ने 'हस्तसामुद्रिक विज्ञानमें सर्वश्रेष्ठ योगदान' इस प्रकार गौरवित कर १५०० रु. का प्रथम पुरस्कार प्रदान किया।

४ प्रश्न-ज्योतिष :

आपके जीवनमें समय-बेसमय नीचे दिए हुए सवाल पैदा होते हैं जैसे कि अचानक संकट, नौकरी, बढती (प्रमोशन) ब्याह, सन्तान-प्राप्ति, धनलाभ, ऋण–मुक्ति, शत्रु-नाश, मुकदमे, बीमारी आदि; और इन सवालोंसे आप घबरा जाते हैं। लेकिन इनसे छुटकारा पानेके लिए किसी ज्योतिषीका दरवाजा खटखटानेकी अब जरूरत नहीं। इस पुस्तकको पासमें रखिए और आपकी सारी कठिनाइयोंसे छुटकारा पाइए। गत चालीस वर्षोंसे मैं इस प्रणालीसे ही लोगोंका मार्गदर्शन करते आया हूँ।

...

५ आपका जीवन सुखी करनेवाली उपासनाएँ और व्रत :

इस ग्रंथमें दी हुई उपासनाओं एवम् व्रतोंका मैंने अनुभव किया है। सन्तान, नौकरी, बढती (प्रमोशन), ऋण-मुक्ति, धनलाभ आदि समस्याओंको सुलझानेके लिए गुरु-प्रणित सैकडों उपासनाओं और व्रतोका अमूल्य संग्रह इस ग्रंथमें है। इन सारी उपासनाओं तथा व्रतोंकी सब सारी सामग्री गुरु-मुखसे प्राप्त देन है। इसलिए वह पवित्र, विशुद्ध तथा प्रभावशाली है।

६ दैवी उपासनाएँ और फलश्रुति :

शंकर भगवान, श्रीगणेशजी, गायत्री, श्रीदत्तात्रेय, श्रीहनुमानजी आदि देवताओंकी पूजा-विधियों सहित नवनाथ-पूजा, चक्रपूजा आदि पूजा-विधियोंका पूरा विवरण इस ग्रंथमें दिया गया है।

७ जीवनमें कैसा बर्ताव करें ?

दुनियामें रहना है तो आपका आचरण कैसा रहे? कोई आपको धोखा देना चाहे तो आप सावधान कैसे रहें? बुरी आदतें, पति-पत्नी संघर्ष, बुढापा आदि अनेकों पारिवारिक तथा व्यावहारिक समस्याओंका पूरा विवरण और उसका इलाज इस ग्रंथकी विशेपता है।

८ कल्पवृक्षकी छाँवमें :

क्या आपके मन के ऊपर निराशा का साया है? किसी भयानक संकटसे आप घबराए हुये हैं? क्या चितासे आपका मन क्षीण हो चुका हैं? इन सभी कठिनाइयोंका एक ही रामबाण इलाज—ईश्वरभक्ति। ईश्वरभक्ति के द्वारा दिव्य आनंद कैंसे प्राप्त होता है और संकटों, दुःखों, चिंताओं, दारिद्र आदिसे किस तरह छुटकारा पाया जा सकता हैं, इसका अनुभव आप इस ग्रंथ के द्वारा करेंगे। इस ग्रंथको पढ़ते समय क्षणक्षण आपको भगवान्‌की याद आ जाएगी और आपकी आँखोंसे आँसुओंकी धाराएँ बहने लगेंगी !

९ आजका आपका दिन कैसे बितेगा ?

आपके शरीरपर हर दिन छः ग्रहोंका अधिकार चलता है। हर अलग दिनकी कौन कौन से अलग ग्रह प्रभावशाली होते हैं इसका गणितके सहारे अध्ययन कर, उनका आपके शरीरपर होनेवाला असर मैंने इस ग्रंथमें पूर्णतः स्पष्ट किया है। शेयर्स का धंधा करनेवाले लोग, रेस (घुड–दौड), बाजारभाव आदिमें दिलचस्पी लेनेवाले लोगोंके लिए यह किताब बहुत ही उपयुक्त तथा मार्गदर्शक है। इस

किताबको लिखनेके बाद लगातार तीन सालतक मैंने इस प्रणालीका मेरे अपने जीवनमें अनुभव किया है। अतः इसकी उपयोगिता सिद्ध होनेके बाद ही मैं इस प्रणाली को आपके सुपूर्द कर रहा हूँ।

१० धनप्राप्तीके लिए प्रभावी साधनाएँ तथा व्रत

आजके संकटकालमें धन के महत्त्वको समझानेकी बिलकुल जरूरत नहीं है। धन-प्राप्तिके लिए मेरे परमादरणीय गुरूसे प्राप्त गुप्त एवम् दुर्लभ साधनाओंको जुटातर मैंने इस ग्रंथकी रचना की है। इन सभी साधनाओंकी परख अनुभवकी कसौटी पर हो चुकी है। अतः उनका फल निश्चित रूपसे प्राप्त होता है।

११ आपका भाग्यांक, अंगूठी, रत्न और रंग :

हर व्यक्तिका जन्म-समय अलग अलग होता है। वैसे ही उसका भाग्यांक (याने शुभांक) अलग अलग होता है। विशिष्ट भाग्यांक का महत्त्व, वह व्यक्ति कौनसी अंगूठी पहने, कौनसा रत्न इस्तेमाल करे, किस रंगके वस्त्र परिधान करे आदिका पूरा विवरण इस ग्रंथ में दिया गया है।

* * *

हमारी भव्य योजना

इसके अतिरिक्त हमारे देशमें ही नहीं, वरन् विदेशोंमें भी मशहूर योगियों, महात्माओं, सन्तो, तथा आचार्यों जैसे अनुभवी व्यक्तियों के ग्रंथ प्रकाशित करनेकी एक अत्यन्त उपयुक्त और भव्य योजना हमारे विचाराधीन है। जिन्हें अपने व्यक्तित्व तथा अपने जीवनको ऊँचा उठानेकी तमन्ना हो वे सज्जन अपना पता हमें भेज देनेकी कृपा करें। हम समय समय पर उन्हें हमारी नई किताबोंसे परिचित कराते रहेंगे।

हमारा नम्र निवेदन

श्रीगजानन बुक डिपो के इन प्रकाशनों के संदर्भ में सभी भाई अपने मित्रों रिश्तेदारों, मुहल्ले, गाँव, कस्बे में श्रीगजानन बुक डिपो प्रेमी मण्डल, अथवा 'श्री गजानन बुक डिपो फैन्स क्लब,' को स्थापित करें। वहाँ वे हर सप्ताहमें एक दिन एकत्र आवें, और अपना जीवन उँचा उठानेमें सहायक सिद्ध होनेवाली साधनाओं उपासनाओं आदि की चर्चा करें। अपनी चर्चा का पूरा ब्योरा हमें भेजें। हमारी शीघ्रही प्रकाशित होनेवाली मासिक पत्रिकामें हम उसका पूरा संवाद विनामूल्य प्रकाशित करेंगे।

संघशक्ति को जगाइए !

हमारे इन उपयुक्त प्रकाशनों के बारेमें इस तरहसे न केवल अपने संबंधी तथा परिचितोंमें ही प्रचार करें, लेकिन हमें ऐसे भी सज्जनोंके पते भेजनेकी कृपा करें जिन्हें अपने जीवनकी उन्नति तथा उसके विकासमें रस है।

मित्रों ! हमें इस देशमें एक ऐसी शक्ति पैदा करनी है जिसके द्वारा हम इस देशका पूरा रंग-रूप ही बदल दे सकें। यह कार्य एक अकेले व्यक्तिके बसकी बात नहीं है। जब किसी आदर्श विशेषसे युवावर्ग प्रेरित होता है तब वह इकट्ठा होने लगता है और उसी वक्त उसमें देशका नक्शा बदलनेकी शक्ति निर्माण होती है। देशका रंग-रूप बदलना हमेशा संघ-शक्तिका कार्य रहा है। कृष्ण भगवान्, बुद्ध से लेकर गांधीजी तक जिन महापुरुषोंने इस देशके रंग-रूपमें परिवर्तन लानेकी जो भी कुछ कोशिशें कीं वे केवल संघ-शक्तिके ही द्वारा ! आज हम भारतवासी इस संघ-शक्तिके महत्त्वको भूल चुकें हैं। संगठनमें जो अगाध, अपार, अमूल्य, अखंड शक्ति गुप्त रूपमें वास करती है उसेही हम भूल चुके हैं। इस संघ-शक्तिकी तुलना हम केवल कामधेनु, कल्पवृक्ष और पारसकी शक्तिके साथ ही कर सकते हैं ! आज इस शक्ति से हमारा कुछ भी परिचय नहीं रहा।

आजकी भयानक संकटकालीन परिस्थितियोंमें उस शक्तिको जगाकर उसका पुरा-पूरा लाभ उठाना हमारा आपका परम कर्तव्य हो चुका है। और इस महान दिव्य शक्तिको कैसे जगाया जाय इसकी पूरी जानकारी के लिए कृपया आज ही हमारा प्रतिज्ञा-पत्र मंगाएं।

कृपया संपर्क प्रस्थापित करें : श्री रमेशसिंह रघुवंशी
द्वारा श्रीगजानन बुक डिपो
दादर, बम्बई– ४०००२८

अनुक्रमणिका

प्राक्कथन

किसी भी साक्षात्कारी व्यक्ति के लिए यह ग्रंथ उपयुक्त नहीं है। क्योंकि साक्षात्कारी व्यक्ति वह है जो दृश्य-जगत् और उसका द्रष्टा दोनों भी " एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म " है इस सत्य का अनुभव कर चुका है। ऐसी दशा में ब्रह्म को छोडकर अन्य किसी वस्तु का होना संभव नहीं होता। अतः किसी वस्तुमात्र में दिलचस्पी लेना अथवा किसी वस्तु के प्रति तिरस्कार प्रकट करना ये दोनों बातें साक्षात्कारी मनुष्य के बारे में बिलकुल असंभव हैं। लोगों की दृष्टि में भले वह लौकिक व्यवहार में मग्न दिखाई दें, लेकिन आध्यात्मिक दृष्टि से वह किसी भी कर्म में व्यस्त नहीं होता। " गुणा गुणेषु वर्तन्ते " इस तत्त्व के अनुसार सभी भौतिक व्यवहार प्रकृति की क्रीड़ाएँ हैं। आत्म-रूप " मैं " (" अहम् ") प्रकृति से कोई संबंध नहीं रखता। साक्षात्कारी मनुष्य की यही धारणा रहती है। उसमें द्वैतभाव का पूर्ण अभाव रहता है। आत्मज्ञान के पथ पर चलनेवाले साधकों के लिए यह ग्रंथ उपयुक्त नहीं है। उनके सामने ब्रह्म-साक्षात्कार यही एकमेवाद्वितीयम् लक्ष्य होने के कारण दुनिया की रामकहानी में उन्हें कोई भी दिलचस्पी नहीं रहती। वैसे ही " आहार-निद्रा-भय-मैथुनं च " का नियम बनाकर पशुवत् चरने और विचरनेवाले नीरे अज्ञानी लोगों के लिए भी इस ग्रंथ का कुछ मूल्य नहीं। तो फिर यह ग्रंथ किसके लिए उपयुक्त हो सकता है ? संसार को सत्य माननेवाले, पाप से डरनेवाले तथा नेकी की राहपर चलनेवाले लोगों के लिए यह ग्रंथ एक दीपस्तंभ है।

इस संसार में जीवन बितानेवाले हर मनुष्यप्राणी को हर क्षण, हर जगह दुःखों, निराशाओं, खतरों तथा अपमानों का सामना करना पड़ता है। परिस्थितियाँ कितनी भी अनुकूल क्यों न हों, मन की गहराई में एक डर हमेशा पैठा हुआ रहता है कि क्या यह सुख हमेशा के लिए प्राप्त होगा ? समय की गति को कौन पहचानता है ? कब, कहा और कैसे व्रजपात होगा यह बताना कठिन है। संपन्न तथा सुखी

जीवन का अनुभव लेते समय एकाएक इकलौते पुत्र का देहान्त होनेसे जीवन निः-सार लगना, धंधे-व्यापार में हानी पहुँचकर पागल-सी दशा हो जाना, अचानक कोई बीमारी पैदा होने से चिन्तित हो जाना और मृत्युभय ये नित्य अनुभव की बातें रहीं। भगवान के पूजा-पाठों, यात्राओं, दान तथा दार्शनिक ग्रंथों के पठन से भी सच्ची मनःशांति का प्राप्त होना कितना कठिन है इसका सभी ने अनुभव किया ही होगा। होनहार होकर ही चुकती है। महानतम ईश्वर भक्त भी नसीब के चक्कर से नहीं बच पाता। साध्वी मीराबाई को जननिंदा का शिकार बनना पडा, सन्त तुकाराम का सारा जीवन दारिद्र्यावस्था में बित गया, संत ज्ञानेश्वर को अपमानों का जहर पीना पडा, गुरु गोविंद और अर्जुनसिंग का मुगल सम्राट ने वध किया। नियति का एक अलग ही कानून रहता है। अतः हर मनुष्य के सामने हमेशा यही एक समस्या रहती है कि क्या इस भीषण तथा हर क्षण व्यस्त बना देनेवाले संसाररूपी सागर को सफलता से पार करने का भी कोई उपाय हो सकता है ?

मनुष्य-जीवन सुखी और समृद्ध बनाने के बीसों ज्ञात और अज्ञात मार्ग होते हैं। फिर एक बार मैं सूचित करना चाहता हूँ कि इस ग्रंथ की रचना केवल ऐसे व्यक्तियों के लिए की गई है कि जो रस संसार को सत्य मानते हैं। जिस प्रकार सपने में लगी प्यास बुझाने के लिए सपने में मिला पानी का घूंट काफी हो जाता है, उसी प्रकार इस ग्रंथ में बताए गए व्यावहारिक मार्ग एवम् साधनाएँ व्यवहार में उपयुक्त सिद्ध होंगी इसमें कोई भी शक नहीं। सिरदर्द पर अवेदन की टिकिया काम आती है, उद्जन और प्राणवायु विशिष्ट तरीके से मिला देने पर जल बन जाता है; ये जिस प्रकार व्यवहार की बातें हैं उसी प्रकार इस ग्रंथ में कथित साधनाओं से विशिष्ट परिणाम सिद्ध हो जाते हैं, इस बात का कभी विस्मरण न हो। पारमार्थिक या आध्यत्मिक दृष्टि से देखा जाय तो केवल एक परमात्मा को छोड़कर कुछ भी अस्तित्व में नहीं है। अर्थात्, "सर्वं खलु इदं ब्रह्म" यह भाव केवल ज्ञानियों में पाया जाता है। फिर भी पारमार्थिक दृष्टि को जरा दूर रखकर पूर्ण व्यावहारिक भूमिका को स्वीकार कर इस ग्रंथ का अध्ययन किया जाय।

"मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः" इस सूत्र के अनुसार मन ही लौकिक सुख-दुःखों की जड़ है। अतः हमारे मन को सुखाभिमुख प्रवृत्तिवादी कैसे किया जाय इसके संबंध में इस ग्रंथ में चर्चा की गई है। दिनरात की चिंता, जटिल समस्याएँ, भविष्यकालिन संकट, दारिद्र्य आदि आदि बातों के कारण मनुष्य-प्राणी का मन बिलकुल दुर्बल और पंगु बन चुका है। ऐसी विषम परिस्थितियों में मन प्रसन्न रखकर उसे बलवान कैसे बनाया जाय, लोगों पर प्रभाव डालकर उन्हें वश कैसे किया जाय, संकट के समय मानसिक सन्तुलन को कैसे साधा जाय;

इच्छाशक्ति को असीम विकसित कर अपने संकल्पों को कैसे सिद्ध किया जाय, मोहिनी विद्या की साधना को अपना कर उसका प्रयोग जनहितार्थ कैसे किया जाए, इन समस्याओं का पूरा हल इस ग्रंथ में उपलब्ध है। इस ग्रंथ में वताई सभी साधनाएँ पूर्णरूपेण सुरक्षित हैं । उनसे साधकों को लाभ ही होगा। इनमें से कुछ साधनाओं का लाभ मुझे मेरे आदरणीय गुरु की कृपा से हुआ है और उनकी आज्ञा एवम् अनुमति से ही मैं उन्हें प्रकट कर रहा हूँ। यह सच है कि इस ग्रंथ में वर्णित सभी साधनाओं को अपनाना एक अकेले व्यक्ति के बस की बात नहीं है। फिर भी इनमें से किसी भी एक-दो साधनाओं का अध्ययन जरूर किया जाय। इस सत्य को भी न भूलना चाहिए कि किसी भी साधना की सफलता का अनुभव उस साधना को प्रारंभ करने के वाद लगभग चार महीने में होता है। साधना करने में नियत समय तथा नियत स्थान का वडा महत्त्व है। साधना को हर दिन दोहराना भी चाहिए।

साधकों के उत्तर-दायित्व स्पष्ट करने के लिए यह छोटीसी भूमिका काफी है ।

□ □ □

.१.

प्राणायाम

लोगों के मन को जीतने तथा अपने संकल्पों को सफलता का रूप देने के लिए मन का शक्तिशाली होना नितांत आवश्यक है। "अति सर्वत्र वर्जयेत्" इस न्याय से अति–विचार एवम् अति–चिंता का त्याग करना चाहिए। इनसे मानसिक क्षीणता आ जाती है। हमारा मन प्राणतत्त्व (Will Power) का स्थूल स्वरूप है और यह मन पूर्णतया प्राणतत्त्व के आधीन है। इतना ही नहीं तो, इस संसार में पाई जानेवाली सभी जड तथा चेतन वस्तुएँ इस प्राणतत्त्व के आधीन होती हैं। यह प्राणशक्ति (Will Power) असीमित और विश्वव्यापी है। यही प्राणशक्ति फूलों को आकर्षक रंगों में रँगाती है। सूर्य–चन्द्र–तारों के तेज का मूल स्रोत यही प्राणशक्ति है। अन्नपाचन तथा शरीर के अन्तर्गत अन्य क्रियाएँ इसी प्राणशक्ति के कारण संपन्न होती हैं। इतना ही नहीं तो, संसार की हरबात के पीछे यही प्राणशक्ति एक प्रेरक शक्ति के रूप में कार्य कर रही है। प्राणशक्ति के कारण ही हमारा दिमाग सोच सकता है। उसी के ही कारण हम साँस लेते–छोडते हैं। इसका अर्थ यही हुआ कि जिस प्राणशक्ति से मन अर्थात् विचार का निर्माण होता है उसी प्राणशक्ति से श्वासोच्छ्वास की क्रिया चलती है। मन के अन्तर्गत चलनेवाले विचारों को रोकने पर श्वासोच्छ्वास की क्रिया की गति भी कम हो जाती है और क्रोध अथवा द्वेष के कारण जब हमारा मन उत्तेजित हो जाता है तब श्वासोच्छ्वास की क्रिया की गति भी तेज हो जाती है।

श्वासोच्छ्वास और मन के अन्तर्गत विचार इनका पारस्पारिक संबंध जोडकर ही प्राणायाम शास्त्र का निर्माण हुआ है।

योगशास्त्र में प्राणायाम की अनेकविध क्रियाओं की चर्चा आ गई है। उनमें से भस्त्रिका, उज्जयी, कपालभाती, अन्तर्कुंभक और बहिर्कुंभक आदि क्रियाएँ प्रसिद्ध हैं। अनुभव–सिद्ध होने के बावजूद भी प्राणशक्ति को बढावा देने

में अथवा मन को निर्विकार करा देने में इन क्रियाओं का वहुत कम उपयोग हो सकता है। भस्त्रिका नामक प्राणायाम क्रिया में फेफडों में हवा लेने का तथा वाहर फेंक देने का कार्य इतनी शीघ्रता से और जोर से होता है कि मन के शान्त होने की वात तो दूर ही रही, मन की वेचैनी वेहद वढ जाती है। श्वासोच्छ्वास और मन के परस्पर संवंध के कारण ही यह वात होती है। जो साधक अपनी प्राणशक्ति को असीम विकसित करना चाहते हैं और अपने मन को विलकुल प्रशान्त कर शक्तिशाली वनाना चाहते हैं उनके लिए निम्नलिखित तीन प्राणायाम विधियाँ, उनकी फलश्रुतियों के सहित देना मैं उचित समझता हूँ। ये तीनों क्रियाएँ अत्यन्त सुरक्षित हैं और उनसे निश्चित लाभ पहुँचता है, ऐसा मेरा व्यक्तिगत अनुभव रहा ह।

प्राणायाम करना खतरनाक है, उससे शारीरिक व्याधियाँ जोर पकडती हैं और मनुष्य पागल बन जाता है आदि मूर्खतापूर्ण बातों को मन से हटा देना चाहिए। प्राणायाम–विधि अमृतस्पर्श के समान है। अमृत–सागर में कूद कर अगर कोई, " बचाओ ! मर गया ! " इस प्रकार चिल्लाता है, तो वह एक मूर्खता है। उसी प्रकार प्राणायाम करनेवाला शरीर–पीडा तथा पागलपन से डरता हो, तो वह भी एक मूर्खता ही है ।

हर दिन एक ही स्थान पर तथा एक ही नियत समय पर प्राणायाम–क्रिया को लगातार लगभग चार महीने तक करते रहने से साधक दिव्य अनुभव कर सकता है। प्राणायाम के लिए प्रसन्न मन, शान्त वातावरण और सबेरे का समय लाभदायक सिद्ध होता है।

प्राणायाम : १ :

कमरे में दीवार के विलकुल पास एकाद चटाई या कम्वल विछाइए और उसपर धोती या चद्दर को तह कर रखिए। दीवार से सटकर इस आसनपर बैठ जाइए। कमरे में एकाद अगरवत्ती जलती रहे तो वहुत अच्छा। विशिष्ट दिशा के सम्मुख वैठना, आसन को पदस्पर्श होता है इसलिये उसे प्रणाम करना आदि वातों में कुछ मतलव नहीं होता। रीढ की हड्डी को सरल रखिए और पीठ पर कूवड हो ऐसी स्थिति में न वैठे। विशिष्ट आसन का नियम भी अनिवार्य नहीं है। पद्मासन ठीक रहेगा। जंघाओं पर हाथ टेककर आँखें मूँद लीजिए। वाद में मिनट दो मिनट के लिये शान्त वैठिए और जितना हो सके उतना अपने मनको निर्विचार रखनेकी कोशिश कीजिए। प्रारंभिक दशा में इसमें कठिनाई महसूस होगी। इस प्रकार शान्त बैठने से अननुभूत शान्ति का अनुभव हो आता है। वाद

में फेफडों में से सारी हवा को धीरे-धीरे निकाल दीजिए । हवाको निकाल देने के बाद पेट और पीठ एक होना आवश्यक है । फिर मन-ही-मन " हरिः ॐ " मंत्र का आठ बार उच्चारण करने के लिये जो समय लगता है उसमें धीरे-धीरे श्वास को अन्दर लीजिए । फिर झट से, सिट्टी वजाते समय जिस प्रकार मूँह का आकार हो जाता है, उस ढंग से, सोलह बार मन में उसी मंत्र का जप करते करते मुखद्वारा श्वास को वाहर छोड दीजिए । इस क्रिया को एक प्राणायाम कहते हैं। इस प्राणायाम के वारे में एक खास बात बताना मैं उचित समझता हूँ । श्वास अन्दर लेते समय आप सोचते रहिए कि " यह वाहरी संसार असीम प्राणशक्ति से ठूंस ठूंस कर भरा हुआ है । उसी प्राणशक्ति को मैं अपने शरीर के भीतर खींच रहा हूँ ।" मुँह के द्वारा साँस वाहर छोडते वक्त यह सोचते रहिए कि जो हवा और प्राण-शक्ति मेरे शरीर में प्रवेश कर चुकी है उसमें से केवल हवा और मेरे शरीर में संचित अशुद्ध वायु को मैं मेरे शरीर के वाहर फेंक रहा हूँ और प्राणशक्ति (Will Power) को मेरी देह में होनेवाली नाडियों में संचित कर रहा हूँ । साथ साथ यह भी सोचते रहिएगा कि साँस लेते समय मैं संसार भर का चैतन्यमय आनंद ले रहा हूँ और साँस को छोडते समय मैं उनके साथ मेरी कुवासनाएँ, डर, चिंता आदि का त्याग कर रहा हूँ ।

हर दिन के लिए इस तरह के प्राणायाम की संख्या आयु+तीन इस प्रकार होनी चाहिए । मान लीजिए की आपकी आयु ३२ वर्ष की है । फिर ३२+३=३५ प्राणायाम आपके लिये आवश्यक हैं । जिनकी आयु अधिक है उनके लिए प्राणायामों की संख्या भी अधिक होती है । इसका कारण यही है कि वढती आयु के साथ-साथ उनकी प्राणशक्ति घटती जाती है । अतः बाह्य संसार में होनेवाली प्राणशक्ति के संचयों में से अधिक से अधिक मात्रा में उस प्राणशक्ति को आपने भीतर लेना आवश्यक हो जाता है । इस प्रकार प्राणायाम-विधि को शुरू करनेके वाद १५-२० दिनों में आपको एक तरह के दिव्य आनंद का लाभ होगा और आप शरीर में एक नया उत्साह अनुभव कर पाएंगे । प्राणशक्ति को आकर्षित करने से मन शक्तिशाली बन जाता है । आपका मन डर तथा चिंता से मुक्त होकर आप जीवन में रस लेना शुरू कर देंगे । आपका जीवन खुशीसे भर जाएगा । अग्नि-मांद्य और वद्धकोष्ठता जैसी बीमारियाँ दूर होंगी । निद्रानाश दूर होगा । लेकिन इस प्राणायाम-क्रिया के दिनों में उपवास अपथ्यकारक है । क्योंकि इस प्राणायाम के परिणाम स्वरूप जठराग्नि इतनी प्रदीप्त होती है कि पेट खाली रखने से अंतडियोंपर विपरीत परिणाम होनेका वडा डर रहता है । दो समय अच्छा सात्त्विक भोजन तथा दो भोजनों के वीच थोडासा खा लेना आवश्यक है । अतः भूख को न रोकिए । यह प्राणायाम-क्रिया चार महीने में सिद्ध होती है ।

प्राणायाम : २ :

ऊपर बताई हुई प्राणायाम की साधना लगातार चार महीने तक करने के उपरान्त इस नई प्राणायाम–क्रिया का प्रारंभ करना चाहिए । जैसे मैं पहले बता चुका हूँ आप दीवार के पास आसनस्थ हो जाइए और आँखों को मूंद कर स्वस्थचित्त बैठ जाइए । दो–तीन मिनट के इस समय के दरमियान श्वासोच्छ्वास स्वाभाविक ढंग से होता है, उसकी ओर ध्यान दीजिए । फेंफडों में से सारी हवा को बाहर छोडिए और बाद में " हरिः ॐ " मंत्र की चार बार आवृत्ति होने के लिए जो समय लगेगा उसमें श्वास को अन्दर लीजिए । इसके बाद झट से उसी मंत्र की आठ बार आवृत्ति होने के लिए जो समय लगेगा उसमें साँस को बाहर छोडिए । फिर कुछ ही क्षणों के लिए श्वासोच्छ्वास कीजिए और फेंफडों को बिलकुल खाली रखिए । इस दशा में " हरिः ॐ " मंत्र की बत्तीस बार आवृत्ति करने के लिए जो समय लगेगा उसमें साँस अथवा उच्छ्वास, दोनों भी क्रियाओं को रोकिए । अगर बीच में ही कुछ घबराहट महसूस हो गई तो सोलह बार उसी मंत्र को मन-ही-मन दोहरा कर थोडी–सी हवासे फेंफडों को भर दीजिए और झट उस हवा को भी बाहर फेंक दीजिए । इस विधि से बचे हुए मंत्रोच्चार को पूर्ण करने में कठिनाई महसूस न होगी । इस प्राणायाम–क्रिया की विशेषता यह है कि इसमें अन्तर्कुंभक तथा बहिर्कुंभक दोनों का भी अभाव रहता है । श्वासोच्छ्वास-क्रिया की गति इतनी कम होती जाती है कि आगे चलकर श्वासोच्छ्वास-क्रिया बिलकुल रुक जाती है। इस विशिष्ट दशा का नाम है Apnea अथवा Suspension of breathing (श्वासोच्छ्वास में खंड) । इस प्राणायाम–क्रिया का अभ्यास हर दिन अपनी अवस्था और शारीरिक दशा के अनुसार करते रहिए । प्राणायाम की यह विधि मेरे परमपूज्य गुरुजी की देन है और जहाँ तक मेरा ख्याल है, इस क्रिया का उल्लेख किसी भी ग्रंथ में नहीं है ।

इस प्राणायाम साधना को भी लगातार चार महिने जारी रखना चाहिए । इस प्राणायाम की तुलना केवल संजीवनी मंत्र अथवा स्वर्गीय अमृत के साथ ही हो सकती है। श्वासोच्छ्वास क्रिया रुक जाने से मन में पैदा होनेवाले अनेकविध विचार नष्ट हो जाते हैं, साधक की देहबुद्धि का लोप हो जाता है और वह शुद्ध चैतन्यमय स्थिति में प्रवेश करता है । देहबुद्धि के नष्ट होते ही, इसी देहबुद्धि को भासमान होनेवाला संसार अदृश्य हो जाता है और साधक विश्वव्याप्त चैतन्य को अनुभव करता है। परमात्मा का विशुद्ध रूप साधक के परम शुद्ध मन में प्रतिबिंबित हो जाता है । इस दशा में साधक को जो अनोखा आनन्द प्राप्त होता है उसका वर्णन करनेवाली लेखनी अभीतक पैदा ही नहीं हुई है । सभी सांसारिक सुख

उसे तृणावत् लगते हैं। रात के समय निद्राधीन होने के वक्त उसे सुन्दर सुन्दर दृश्य दिखाई देते हैं। सुख–दुःख, शत्रु–मित्र, सगे–संबंधी इतना ही नहीं तो सभी सांसारिक वस्तुएँ अलग न होकर वे केवल " मैं " (" अहम् ") के ही रूप हैं इस सत्य की उसे अनुभूति हो जाती है और वह सुख–दुःखों की मर्यादा को पार कर आगे बढ जाता है। वह अति–मानव (Superman) बन जाता है। और हर एक का आदर भाजन बन जाता है। उसकी मर्जी के खिलाफ कौन जा सकता है ? उसके सर्वसाधारण संकल्प शीघ्र ही सफल हो जाते हैं। क्योंकि वह अब परमात्मस्वरूप हो जाता है।

जिस प्रकार पानी के सूख जाने पर उसमें दिखाई देनेवाला सूर्य–प्रतिबिंब भी अदृश्य हो जाता है और शेष रह जाता है केवल सूर्य, उसी प्रकार साधक का मान–सरोवर सूख जाने से उसमें प्रतिबिंबित जीव–दशा भी नष्ट हो जाती है और फलस्वरूप वह साक्षात् परमात्मा ही बन जाता है। " सा काष्ठा सा परागति " इस श्रुतिवचन के अनुसार मनुष्य की अन्तिम उड़ान तो यही है। अतः साधकों, आलस छोड कर ऊपर बताई प्राणायाम–क्रिया को हररोज नियमित रूप से करते रहिए। जीवन की सार्थकता उसमें ही है !

अब सवाल पैदा होता है कि अगर यह प्राणायाम–क्रिया मनुष्य को आत्मसाक्षात्कार की चरम सीमा तक ले जाने में समर्थ है, तो फिर ईश्वरभक्ति, जप–तप, प्रार्थना, तीर्थाटन, वेदान्तग्रंथ–वाचन आदि आदि पारमार्थिक उपायों की बडी चर्चा किस लिए की जाती है ? इसका जवाब बिलकुल साफ है । मन के अस्तित्व के बिना ये क्रियाएँ चल ही नहीं सकती; और जब तक मन का अस्तित्व बना रहा है, तब तक साक्षात्कार एक असंभव बात है। मैंने जिस प्राणायाम-क्रिया की सिफारीश की है उसमें मन का ही नाश हो जाता है और द्रष्टा–मन और जगत्रूपी दृश्य इन दोनों का भी लोप हो जाता है और पीछे रह जाता है केवल " स्वरूप. "

केवल प्राणायाम के द्वारा ऊपर लिखी बातों का हम अनुभव करेंगे यह समझना गलत है । प्राणायाम साधना के जारी रहते साधकों ने भी बार बार इस बात पर सोचना चाहिए कि वस्तुजात और उनका द्रष्टा जो " मैं " ये सभी चीजें आत्मा के ऊपर भ्रम पैदा कर देती हैं। सूरज की धूप में रेगिस्तान में जल भासमान होता है, जिसे मृगतृष्णा या मृगजल कहते हैं। लेकिन सूरज की किरणों-के सिवाय वहाँ अन्य कुछ भी नहीं होता । इस मृगजल के भासमान अस्तित्व के कारण शीतलता कैसे प्राप्त हो सकती है ? बिलकुल उसी प्रकार आत्मस्वरूप " मैं " (" अहम् ") अज्ञान के कारण दृश्य और द्रष्टा के सांसारिक भ्रम में फँसा रहता

है। दृश्य और द्रष्टा इस तरह की कोई द्वैतावस्था का अस्तित्व न के बराबर है। क्योंकि परमात्मा यही एक अस्तित्व है। वही परमात्मा "मैं" ही हूँ इस भाव को नहीं छोडना चाहिए। "अहं ब्रह्मास्मि" इस श्रुतिवचन का यही अर्थ है।

इस विवर्त-मत को ठीक समझ लेने के बाद मन में हमेशा सोचते रहना चाहिए कि जिस प्रकार सूर्य का अस्तित्व अंधकार के अस्तित्व को अमान्य करता है, उसी प्रकार आत्मज्ञानस्वरूप "अहम्" के साथ अज्ञान और अज्ञान के द्वारा निर्मित संसार का होना बिलकुल असंभव है। उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। सूर्यप्रकाश और अंधकार, ज्ञान और अज्ञान एक साथ कैसे रह सकते हैं? समूचा संसार, सभी देवता, सभी जड़ तथा चेतन वस्तुएँ, बंध, मोक्ष आदि कल्पनाओं का मूल स्रोत है अज्ञान। और जब अज्ञान का ही अभाव रहेगा तब ज्ञानस्वरूप "अहम्" में इन कल्पनाओं का पूर्ण अभाव रहेगा। अज्ञान भी एक सापेक्ष ज्ञान है। अतः अज्ञान नष्ट होनेपर तत्सापेक्ष ज्ञान की कल्पना का अस्त हो जाता है और ज्ञान और अज्ञान के परे जो परमात्मा है उसका सही ज्ञान हो जाता है। यही परमात्मा "मैं" ("अहम्") ही हूँ; इस प्रकार का भाव दिन-रात होना आवश्यक है।

प्राणायाम-विधि और इस विचारधारा की एकरूपता प्राणायाम के उद्देश्य को सफल बना देती है। द्रष्टा-दृश्य भाव एक भ्रम है। इस सत्य को अनुभव करने से बाह्य सांसारिक चीजों के प्रति जो आसक्ति मन में रहा करती है वह मीट जाएगी। आसक्ति और विचार से ही मन का स्वरूप सिद्ध हो जाता है। अतः साधना की चरम सीमा पर पहुँचते ही आसक्ति-नाश हो जाता है और उसके साथ तत्संबंधी विचार भी नष्ट होकर मन अ-रूप स्थिति में पहुँच जाता है। इस अ-रूप मन की स्थिति का वर्णन करना इस छोटे-से ग्रंथ में कठिन है।

प्राणायाम : ३ :

इस प्राणायाम-विधि में क्रिया का अभाव रहता है। हमेशा की तरह आसनस्थ हो कर आँखों को मूँद लीजिए। मन को विचारहीन कर स्वाभाविक ढंगसे चली श्वासोच्छ्वास-क्रिया की ओर ध्यान दीजिए। इस एकाग्रता के कारण धीरे धीरे साँस की गति बिलकुल कम होती जाएगी और एक ऐसा भी क्षण आ जाएगा जब कि यह श्वसन-क्रिया बिलकुल रुक जाएगी और साधक अपनी देह का अस्तित्व पूर्ण रूपेण भूल जाएगा। देह विस्मृति की इसी अवस्था का नाम है "तुरीयावस्था"। इस तुरीयावस्था में केवल "अहम्" के अस्तित्व का भाव रह जाता है। लेकिन इस "अहम्" का अर्थ किसी विवथशिष्ट देह आ व्यक्ति से

नहीं है । इस प्राणायाम का अभ्यास अधिकाधिक समय करना आवश्यक है । आम तौर पर हर दिन आधे घण्टे का समय काफी हो सकता है । इस तुरीयावस्था में स्थित मानवी मन के द्वारा कौनसी अद्भुत बातें हो जाती हैं इसका वर्णन आगे पढिए ।

प्राणायाम की और भी दो-तीन विधियाँ मैं जानता हूँ । लेकिन उनकी सिफारीश प्रगत-साधकों के लिए ही करना उचित है । क्योंकि उन विधियों में अनेकविध बन्धनों का पालन नितांत आवश्यक रहता है । अतः केवल जिज्ञासु पाठकों को पत्र द्वारा इनकी जानकारी करा देने में मुझे हर्ष ही होगा ।

प्राणायाम-क्रिया में अभ्यस्त होने के बाद योगमार्ग में प्रसिद्ध "त्राटक" साधना को प्रारंभ करना उचित होगा।

□ □ □

.२.

त्राटक साधना

मन एकाग्र (Concentration of mind) करने की जितनी भी साधनाएँ हैं उन में त्राटक साधना बहुत ही ऊँचा स्थान रखती है । हटयोग शास्त्र में इसे " दिव्य त्राटक योग " का यथार्थ नाम दिया गया है । त्राटक साधना की चरम सीमा की स्थिति में विचार-संक्रमण, अन्य व्यक्ति के मन में चले विचारों को पहचानना, संमोहन (Mesmerism) और दूर-दर्शन (Clairvoyance) ये सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। मन तुरीयावस्था (Fourth dimension) में ले जाने के लिए त्राटक के समान अन्य कोई भी साधना प्रभावशाली नहीं है । इसकी सफलता से आँखों को एक अतींद्रिय-शक्ति (psychic power) का लाभ हो जाता है जिसके परिणाम स्वरूप किसी व्यक्ति की आँखों में जरा दृढतापूर्वक देखने से ही वह व्यक्ति साधक के वश में आ जाता है । संमोहन-शास्त्र (Mesmerism) में अधिकार प्राप्त करने की महत्त्वाकांक्षा रखनेवाले साधकों के लिए एक सालभर त्राटक की साधना करते रहना नितान्त आवश्यक है । हिप्नाटिज्म संबंधी अन्य ग्रंथों में इस विद्या के संबंध में ऐतिहासिक जानकारी के सिवाय अन्य तात्त्विक चर्चा का आमतौर पर अभाव रहता है । उदा०–किसी डॉक्टर के द्वारा संमोहित लडकी के माध्यम से किए चमत्कारों के वर्णनों की भरमार ऐसी किताबों में पाई जाती है । इस विद्या को कैसे हासिल किया जाए इसके मार्गदर्शन के बारे में ये ग्रंथ असफल रह जाते हैं। लेकिन मेरे इस ग्रंथ का स्पष्ट उद्देश्य संमोहनविद्या अथवा मोहिनी विद्या से संबंधित पूरी जानकारी देना है । इसीलिए ऐतिहासिक मीमांसा को छोडकर इस विद्या की प्राप्ति के लिए जिन साधनाओं की आवश्यकता है उनकी संपूर्ण चर्चा करना मैं उचित समझता हूँ । यह विद्या दस-पंधरह दिनों में प्राप्त होनेवाली चीज नहीं है। इस सत्य को साधक न भूलें। लेकिन यह भी सच है कि कुछ वर्षों के दीर्घ परिश्रम से इस दिव्य शक्ति को प्राप्त कर लेना कठिन नहीं है।

त्राटक साधना का स्वरूप क्या है इसकी चर्चा अब मैं करता हूँ।

त्राटक साधना सात प्रकार की होती है (१) मूर्ति त्राटक (२) ताम्रवस्त्र त्राटक (३) बिंदु त्राटक (४) प्रतिबिंब त्राटक (५) ज्योति त्राटक (६) अग्नि त्राटक और (७) सूर्य त्राटक। तारा त्राटक और दृश्य त्राटक, त्राटक के दो और भी प्रकार हैं। इन सभी विधियों की वैज्ञानिक जानकारी तथा फलश्रुति को अब हम देखेंगे।

मूर्ति त्राटक : १ :

तीन इंच लंबी और उतनी ही चौडी एक देवता अथवा सत्पुरुष की प्रतिमा (तस्वीर) लीजिए। यह प्रतिमा रंगीन न हो। इस प्रतिमा को साढेतीन फीट की ऊँचाई पर दीवाल पर बिलकुल आँखों के सम्मुख लटका दीजिए। धार्मिक बातों में रुचि न लेनेवाले साधक किसी फूल की प्रतिमा चुन सकते हैं। उस प्रतिमा से तीन फीट की दूरी पर बैठ जाइए। बाद में उस प्रतिमा की ओर एकाग्र मन से बीस पच्चीस सेकंद तक अपलक देखते रहिए। झट आँखों को मूँद लीजिए। अब उस प्रतिमा को आँखों के सामने लाने की कोशिश कीजिए। कुछ ही क्षणों के बाद वह दृश्य अस्पष्ट बनता जाएगा। फिर एक बार उस प्रतिमा को बीस-पच्चीस सेकंद तक देखते रहिए। आँखों को मूँद, उसी प्रतिमा को मनःचक्षु के द्वारा देखने की कोशिश कीजिए। इस क्रिया को हरदिन इक्कीस बार दोहराइए। कुछ ही दिनों के बाद आँखों के बन्द होते हुए भी ध्यानमूर्ति मनःचक्षू के सामने उपस्थित हो जाएगी। यह इच्छित प्रतिमा जब आधे से एक मिनट तक मनःचक्षु के सामने टीकेगी, तब उसे साधना की सफलता समझ लीजिए।

यह साधना मनःचक्षु अर्थात तृतीय नेत्र The Third Eye को जागृत करने में सहायक सिद्ध हो जाती है। मनःचक्षु अथवा तृतीय नेत्र को कार्यान्वित करने के लिए माथे पर छिद्र बनाने के तिब्बती तरीके की अपेक्षा हमारी यह साधना बिलकुल प्रभावशाली और सुरक्षित है। इस तीसरी आँख की जागृति होने पर आँखों के बन्द रहने के बावजूद भी अनेकविध दृश्य दिखाई देने लगते हैं। अर्थात् प्राथमिक दशा में दिखाई देनेवाले दृश्य विशेष महत्त्व नहीं रखते। इस साधना से बुद्धि तीव्र होती है और भुलक्कड़पन दूर हो जाता है, यह इसका अनोखा लाभ है। यह साधना दिन भर किसी भी समय कर सकते हैं। घडी की ओर देख कर आँखें मुंद कर उस घडी को मनःचक्षु के सामने लाने की कोशिश कीजिए। ऐसी बीसों वस्तुएँ हम चुन सकते हैं। मूर्तिध्यान साधना के कारण उच्चतर स्थिति में वे देवता विशेष अथवा वे महात्मा हमारे वश में आ जाते हैं। इस साधना की आगे की फलश्रुति प्रकट करने के संबंधी कुछ रोक-टोक लगाया गया है। अतः उन्हें यहाँ प्रकट करना अप्रस्तुत है।

ताम्रवस्त्र त्राटक : २ :

छः इंच लंबा तथा उतना ही चौडा लाल रंग का सैटिन के कपडे का टुकडा लीजिए। जमीन पर अथवा चारपाई पर आसनस्थ हो जाइए। अपने सम्मुख एक बडा तकिया रखिए। जिसपर सफेद रंग का आच्छादन हो। उसपर बीचोबीच सैटिन का टुकडा बिछाइए। इस सैटिन के कपडे के ऊपर बीचोबीज ज्वार का एक दाना रखिए। मन स्वस्थ रखिए। मन को एकाग्र कीजिए। उस ज्वार के दाने की ओर अपलक देखते रहिए। मन जैसे जैसे अधिकाधिक एकाग्र बनेगा, वैसे वैसे सैटिन का मूल काला रंग बदलता जाएगा और वह ज्वार का दाना प्रकाशमय बन चमक उठेगा। और जब मन पूर्ण एकाग्रता की अवस्था तक पहुँचेगा तब वह कपडा और ज्वार का दाना, दोनों भी पूर्णरूपेण प्रकाशमान हो जाएँगे। बीच बीच में वह दाना आँखों के सामने से अदृश्य भी होता जाएगा। इस साधना का अभ्यास करते समय प्रारंभिक दशा में आँखें भारी-सी हो जाएंगी और वे अश्रुजल से भर आएंगी। ऐसे वक्त क्षणभर आँखों को मुंद कर फिर से साधना को जारी रखिए। इस साधना का अभ्यास हर दिन कम से कम पंधरह मिनटों तक करते रहना नितांत आवश्यक है। हर दिन, साधना समाप्त होने के बाद ठंडे पानी में आँखों को स्नान देना आवश्यक है। इस साधना के फलस्वरूप मन की एकाग्रता इस प्रकार बढ जाती है कि एक तरह के दिव्य आनन्द को हम पाते हैं। वस्त्र का मूल लाल रंग बिलकुल अदृश्य होकर अन्त में वह वस्त्र पूर्ण प्रकाशमान दिखाई देता है। यह अनुभव आत्मप्रकाश के अनुभव का छोटासा रूप है। मनके अत्यन्त एकाग्र हो जाने के कारण बहिर्मन (Conscious mind) और अन्तर्मन (Sub-conscious mind) एक दूसरे को स्पर्श करने लगते हैं और परिणाम स्वरूप मनमें दिव्य विचारों की लहरें उभर आती है। साधक शुभ-स्वप्न देखने लगता है और उनमें देवताओं, साधू-पुरुषों, मंदिरों, वनों-उपवनों आदि के दर्शन होने लगते हैं। आँखों के सामने एक प्रकाश-बिंदु निरंतर दिखाई देने लगता है जिस पर मन एकाग्र करने से बहुत लाभ होता है। इस साधना के लिए चुनी हुई जड़ वस्तु अपना जडत्व खोती है और वह अंतर्मन का एक प्रकाश-बिंदु बन जाती है। यह प्रकाश-बिंदु एक दिव्य अथवा अलौकिक वस्तु बन जाती है और फलस्वरूप दृश्य-मन भी अलौकिक दशा में प्रवेश करता है। साधना करते वक्त समय का ज्ञान (Sense of time) नष्ट हो जाता है। साधक के पूर्ण जाग्रत होने के बावजूद भी साधना के समय एक घंटे का लंबा समय भी दस मिनट के समान लगता है। फिर भी एक बात सूचित करना मेरा कर्तव्य है कि इस साधना का अभ्यास दिनभर में पंदरह-बीस मिनटों से अधिक समय तक नहीं करना चाहिए क्योंकि बहिर्मन को अन्तर्मन जैसी दिव्य और अति प्रभावशाली शक्ति से आनेवाले संपर्क को सहन करने की क्षमता प्राथमिक दशा में हर व्यक्ति में होना संभव नहीं है।

बिंदु त्राटक : ३ :

बिंदु त्राटक के बारे में वहुतेरे लोगों ने कुछ न कुछ सुना होगा। लेकिन पूरी जानकारी न होने के कारण इस त्राटक-विधि का फल प्राप्त होने में कठिनाइयाँ पैदा होती हैं। बिन्दु त्राटक की तीन सीढियाँ होती हैं। पहले एक ड्राइंग-पेपर लीजिए जो आठ इंच लंबा तथा उतना ही चौडा हो। उसपर एक दो इंच व्यास की वर्तुलाकृति को खींचिए। उसे काली स्याही में पूर्णतया रंगाइए। इस कागज को एक कार्डबोर्ड (दफ्ती) पर चिपकाइए। फिर उसे बिलकुल आँखों के सामने दीवारपर लटका दीजिए। दीवार से तीन फीट की दूरीपर बैठ जाइए। इस साधना के लिए जगमगाती रोशनी अनावश्यक है। अतः दिन में साधना करनी हो तो दरवाजे तथा खिडकियाँ बन्द रखिए। अथवा साधना के लिए सूर्यास्त के बाद का संधिकाल पसन्द कीजिए। अपने सम्मुख काली वर्तुलाकृति की ओर एकाग्र मन से तथा स्थिर नजर से देखते रहिए। आँखों में तनाव महसूस होने पर अथवा अश्रुजल आने पर क्षणभर के लिए आँखें मूंद लीजिए और फिर देखना शुरू कीजिए। एक दो मिनट में उस काली वर्तुलाकृति में से दूसरी एक प्रकाशमय वर्तुलाकृति बाहेर आती दिखाई देगी जो पहली काली वर्तुलाकृति को पूर्णतया ढक देगी। इस अद्‌भूत अनुभव के बाद काली वर्तुलाकृति का कार्य समाप्त हो जाता है। आपका सारा ध्यान उस प्रकाशमान वर्तुलाकृति पर ही केंद्रित रखिए। बाद में आप ऐसा अनुभव करेंगे कि वह काले रंग की वर्तुलाकृति पूर्णतया नष्ट हो चुकी है। उसकी जगह प्रकाशमान सूरज के समान जगमगा रही है। इस स्थिति के प्राप्त होने पर आप बिलकुल समझ जाइए कि आपके बहिर्मन के सभी व्यवहार तथा उसमें पैदा होनेवाले सभी विचार बन्द हो चुके हैं और वे लुप्त भी हो चुके हैं। लेकिन यह स्थिति केवल कुछ ही क्षण रहती है। फिर से वह काली वर्तुलाकृति दृश्यमान हो जाएगी। फिर एक बार आप अपनी साधना को दोहराइए और उसी दशा में प्रवेश करने की कोशिश कीजिए। इस त्राटक साधना का अभ्यास भी दिन में पंदरह मिनटों से अधिक समय तक नहीं करना चाहिए। उस दिन की साधना पूर्ण होने पर ठंडे पानी से आँखों को धो डालिए। साधनाकाल के दरमियान आँखों में तेज उतर आता है और उनमें गरमी भी पैदा होती है। उसे दूर करना आवश्यक है। इस त्राटक का अभ्यास लगभग एक महीने तक करने के बाद साधना की दूसरी सीढ़ी की ओर कदम वढाइए।

जैसे पहले वता चुका हूँ, एक आठ इंच लंबा और उतनाही चौडा ड्राइंग-पेपर लीजिए। लेकिन अब की वर्तुलाकृति एक इंच व्यास की रहे। वर्तुलाकृति को काले ंग में रंगाइए। अब उस वर्तुलाकृति की सभी ओर सूर्य–किरणों के समान अठारह

रेखाएँ खींचिए। हर रेषा वर्तुलाकृति के मध्य से चार इंच की लंबाई की हो। इसका मतलब यह रहा कि दायरे से हर रेषा साढ़े तीन इंच की लंबाई की हो। इस आकृति को कार्डबोर्ड पर चिपका कर आँखों के सामने दीवारपर टाँग दीजिए। कमरे में ज्यादह रोशनी न हो इसलिए दरवाजे और खिडकियों को बन्द कीजिए अथवा साधना के लिए शाम का समय चुन लीजिए। सामने की आकृति की ओर एकाग्र मन से तथा स्थिर नजरों से देखते रहिए। अब आप अनुभव करेंगे कि वह काली वर्तुलाकृति और उससे निकलनेवाली काली रेषाएँ प्रकाशमान होती जा रही हैं। इनमें से कुछ रेषाएँ काली ही रहेंगी तो कुछ रेषाएँ प्रकाशमान होती जाएँगी। प्रकाश और अँधेर का यह क्रम कुछ समय के लिए जारी रहेगा। मन की एकाग्रता बढ़ने पर वह काली वर्तुलाकृति और वे काली रेषाएँ अदृश्य हो जायेगी और सूरज के समान प्रकाशमान दृश्य नजरों के सामने दिखाई देगा। फिर एकाग्रता को पूर्णता प्राप्त होने पर तो यह प्रकाशमान दृश्य भी अदृश्य हो जाएगा। तुरीयावस्था की यह एक प्रारंभिक अवस्था है। इस स्थिति में प्राप्त होनेवाले आनन्द का वर्णन करना कठिन है ! काले रंग की वर्तुलाकृति और काली रेषाओं की जगह जो सुनहरा और तेजोमय दृश्य दिखाई देने लगता है वह आत्मप्रकाश ही है। जाग्रत मन के व्यापार बन्द कर उसका लोप करने की जो भी विधियाँ प्रचलित हैं उनमें इस त्राटक साधना का बडा ही ऊँचा स्थान है। इस साधना में साधनकाल के दरमियान समय का ज्ञान (Sense of time) लुप्त हो जाता है [जिस प्रकार चिंटी शक्कर के दाने को चिपक कर रहती है उसी प्रकार साधक को इस साधना को बीच में ही छोड़ देना बड़ा कष्टदायक लगता है। फिर भी इस साधना के लिए एक वक्त पंधरह मिनटों से अधिक समय देना उचित नहीं है। ठंडे पानी से आँखों को ठंडा कीजिए । इस साधना को चार सप्ताह से अधिक काल तक नहीं करना चाहिए।

इसके बाद बिंदुत्राटक साधना की तीसरी और अन्तिम पादान पर कदम रखिएगा। जैसे पहले बताया है उसी प्रकार सफेद कागज़ को लेकर उस पर काली मिर्च के आकार का एक काला बिंदु रंगाइए। इस प्रतिमा को भी दीवार पर टाँग दीजिए। तीन फीट की दूरी पर बैठकर एकाग्र मन और स्थिर नजरों से उस बिंदु की ओर देखते रहिए। कुछ समय के बाद यह विन्दु अदृश्य हो जाएगा। इस दशा में ही अधिक से अधिक समय तक रहने की कोशिश कीजिए। वह बिन्दु फिर से दृश्यमान होगा। इसका स्पष्ट अर्थ यही है कि आपका जाग्रत मन फिर से अपने स्थानपर आ रहा है। फिर से मन को एकाग्र कर उस काले बिन्दु को अदृश्य करने की कोशिश कीजिए। अब आप क्या अनुभव कर रहे हैं ? पहली बार उस प्रतीक का आकार बढता जाएगा। दूसरी बार वह बिन्दु आधा हो जाएगा और अन्त में वह बिन्दु बिलकुल सूक्ष्म रूप धारण कर लेगा। प्रतीक जितना अधिक सूक्ष्म रहेगा

मन उतना अधिक एकाग्र होने में सहायता होगी। इस त्राटक विधि के अभ्यास के कारण साधक को विचार–संक्रमण (Thought transference) की शक्ति का लाभ हो जाता है। इस के बारे में मेरा एकाद अनुभव कथन करना अनुचित न होगाः एक दिन मैं रात के समय चुपचाप लेट रहा था। एकाएक सीढियों पर किसी के आने की आहट सुनाई दी। नासिक रहनेवाला वह मेरा मित्र था जिसकी दो साल तक मुलाकात ही नहीं हुई थी। उसके दर्शन होते ही मेरे मुँह से एक कविता की पंक्ति अचानक बाहर आ गई जिसका अर्थ है–" अडचनों से भरी राह पर मत चलो। " वह तो बेचारा अवाक् रह गया और मेरे पैर छूने लगा। कारण पूछने-पर उसने अपनी जेब में से कागज का एक टुकडा निकाला जिसपर मैंने जिसका उच्चारण किया था वही पंक्ति साफ-सुथरे अक्षरों में लिखी हुई थी !

जब मैं पूना में था तब पच्चीस सालका एक जवान लडका मुझसे मिलने आ गया। वह उस काल के फलटण रियासत के मंत्री का बेंटा था। वह हाथ दिखाने आया था। वह ब्राह्मण जातिका था। मैंने उसपर सहज नजर दौडाई और पूछा, " क्या तुमने सुन्नत कर ली है ? " वह आवाक् रह गया। क्योंकि मेरा सवाल बिलकुल दुरुस्त था।

एक दिन एक सज्जन व्यक्ति मेरे पास आ पहुँचा। कपडे बिलकुल अस्वच्छ और दाढी भी बढी हुई ! वह भी हाथ दिखाने आया था। उसे देखते ही मेरे मनःचक्षु के सामने आकाशवाणी-केंद्र, कालेज, दूरस्थ शहर आदि दृश्य उभर आए। बडे आत्मविश्वास के साथ मैंने पूछा–" क्यों प्रोफेसर साब, आप इस शहर के नहीं दिखाई देते ! क्या रेडिओ पर लेक्चर देने आए हैं ? " वह सज्जन वर्धा (विदर्भ) के एक कालेज में प्राध्यापक थे और सचमुच वे आकाशवाणी पर भाषण देने आये थे।

एक दिन मैंने मेरे मित्र से प्रश्न पूछा, "जर्मन कवि गटे के 'युवा वेर्टर की व्यथाएँ' इस उपन्यास को तुमने कभी पढ लिया है ? " आश्चर्य की बात यह है कि वह मेरा मित्र गटे का वही उपन्यास पढ़ रहा था जो आज विस्मृति के पर्दे के पीछे जा चुका है !

यह सब लिखते समय मन में बडा संकोच हो आता है और मन कोसने लगता है कि क्या यह आत्मस्तुति तो नहीं है ? फिर भी खुद को रोकना कठिन है ; क्योंकि अनुभवों को कथन करते समय कथन करनेवाले को अवर्णनीय सुख मिलता है। इसीलिये पाठक मेरे इस अनुभव कथन को क्षम्य मानें।

प्रतिबिम्ब त्राटक : ४ :

त्राटक साधनाओं में प्रतिविम्व त्राटक का अनन्यसाधारण महत्त्व है। ऊँची बेल्जियम कांच का आठ इंच लंवा तथा छः इंच चौड़ा ऐसा एक आईना लाकर उसे दीवारपर लगाइए। आईने से तीन फीट की दूरी पर बैठिए। साधना के समय तीव्र प्रकाश न हो। अब आईने में दिखाई देनेवाले प्रतिबिम्व की ओर एकाग्रता से देखते रहिए। प्रारंभिक दशा में दृष्टि भौं हों के बीच (भृकुटी-मध्य में) स्थिर रखिए। धीरे धीरे वह प्रतिविम्व अस्पष्ट होता जाएगा और अन्त में वह बिलकुल अदृश्य हो जाएगा। केवल आईना ही दिखाई देगा। इस स्थिति में रहने की कोशिश कीजिए। साँस की गति जितनी अधिक कम होती जाएगी, प्रतिबिम्ब के अदृश्य होने में उतनी ही सहायता होगी। इस दशा में कुछ समय रहने के बाद वह प्रतिबिंब फिर एक बार दृश्यमान हो जाएगा। ऐसा होने पर पूरी कोशिश के साथ मन एकाग्र कर इस प्रतिबिम्ब को नष्ट कीजिए। इस प्रकार यह साधना हर दिन शाम के समय लगभग बीस मिनट तक कीजिए। त्राटक करते समय किसी भी जप की आवश्यकता नहीं है। सारा ध्यान आईने में दिखाई देनेवाले प्रतिबिम्ब पर होना चाहिए। लगभग एक महिने की अवधि के बाद उसी आईने में प्रतिबिम्ब की जगह कुछ दृश्य दिखाई देने लगेंगे। विशाल वन-उपवन, ऊँचे पेड, कुछ अपरिचित व्यक्ति, जलाशय आदि दृश्यों के दर्शन से ही समझ लेना चाहिए कि अपनी साधना ठीक रास्ते आगे बढती जा रही है। ये दृश्य भूरे रंग के होते हैं ऐसा मेरा अनुभव रहा है। हमारे अन्तर्मन में जो भी बातें चलती हैं उनके ही दृश्यमान रूप आईने में प्रतिबिम्बित हो जाते हैं। लेकिन इस साधना में इसी सीढी पर नहीं रुकना है। कुछ महिनों की साधना के बाद ये सभी दृश्य भी अदृश्य हो जाएंगे। जागृत मन भी लुप्त हो जाएगा और साधक तुरीयावस्था को अनुभव करने लगेगा। इस दशा में केवल "मैं हूँ।" का ज्ञान रह जाता है। इस हद तक पहुँचना भी साधक के लिए एक बडी सफलता है। "मै हूँ" यह ज्ञान भी आतमरूप अथवा स्व-रूप में घुलमिल जानेपर साधक ब्रह्म बन जाता है। लेकिन इतनी महानतम ऊँचाई तक पहुँचना साधारण जन के वस की बात नहीं है इसलिए "मैं हूँ" के ज्ञान की सीढी तक भी रुकना साधक के लिये महान् सिद्धि को प्राप्त करने के समान है। जिस आईने का प्रयोग आप इस साधना के लिए करेंगे वह अन्य काम के लिए न ले। साधना पूर्ण होते ही केशरी रंग के वस्त्र में उसे लपेटे रखना नितांत आवश्यक है।

इस साधना के द्वारा अन्य लोगों को संमोहित करने की शक्ति प्राप्त होती है। आँखों में एक तेज उभर आता है और सभी लोग और पशु-पक्षी भी वश में

आ जाते हैं। किसी व्यक्ति की आँखों में अपनी आँखें गड़ाकर उसे कुछ आज्ञा दीजिए अथवा कोई नम्र निवेदन कीजिए, वह ना नहीं कह सकेगा। अत्यन्त क्रोधित व्यक्ति को अपलक देखने पर वह भी शान्त हो जाता है। अन्य लोगों की एक भी बात न माननेवाले लोग भी साधक की आज्ञा की अवहेलना नहीं कर सकते। वशीकरण की यह शक्ति अन्य वस्तुओं में भी निर्माण की जा सकती है। मात्र ये सभी बातें साधना की परिपूर्ण अवस्था में ही संभव हो जाती हैं। इसे ही वस्तु अभिमंत्रित करना कहते हैं। जिस वस्तु को अभिमंत्रित करना हो उसे हाथ में रख कर एकान्त जगह चले जाइए और मनको एकाग्र कर उसकी ओर देखते रहिए। इस वस्तु की ओर देखते समय मन में यह संकल्प करते रहिए कि मेरी प्राणशक्ति (Will Power) और संमोहनशक्ति उस वस्तु में प्रवेश कर रही है। इस विधि को दस मिनट तक जारी रखिए। आप ऐसा अनुभव करेंगे कि उस वस्तु की ओर देखनेवाला व्यक्ति उस वस्तु के स्वामी को वश हो जाता है। लेकिन पानी को स्पर्श होने से उस वस्तु की वशीकरण शक्ति नष्ट हो जाती है। अनुभव ऐसा है कि वशीकरण की वह शक्ति उस वस्तु में लगभग तीन महिने तक रहती है। धीरे धीरे वह घटती जाती है। इसके संबंध में मेरे एक-दो अनुभवों का कथन करना साधकों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होगा! मेरे एक मित्र राज्य परिवहन आयोग में बडे अफसर हैं। एक बार उनके हाथों सरकारी काम में एक गंभीर भूल हो गई। इसके संबंध में उनके अधिकारी ने उन्हें बुलावा भेजा था। बेतनवृद्धि में रोक अथवा नौकरी से निवृत्ति कोईभी एक बात निश्चित थी। शाम के सात बजे वे मेरे पास पहुँच गए और अक्षरशः रोने लगे। मैं आवाक् रह गया। बोला "पागल जैसे क्यों रोते हो? जो कुछ हो, ठीक से बताओ।" उनकी कहानी को सुनने के बाद मैंने मलमल का एक हाथरुमाल मंगा लिया और उसे लेकर एकान्त में चला गया। रुमाल की और एकाग्रता से देखते देखते संकल्प करने लगा कि इस रुमाल के दर्शन करनेवाला कोई भी व्यक्ति उसके स्वामी के वश में आ जाए। बाद में मैंने वह रुमाल मित्र के सुपूर्द कर दिया। मैंने कहा, "कल बडे साहब के पास जाते समय मत डरो। यों ही इस रुमाल को अपनी जेब में से निकालो और अपने चेहरे पर फेर दो। ताकि तुम्हारे बड़े साहब उसे देख सके।" दूसरे दिन मेरे मित्र ने मेरी सलाह के अनुसार सब कुछ किया और रात को वह दौडते हुए मेरे घर आ पहुँचे। उन्होने बताया कि, "रुमाल को देखते ही वह अफसर शान्त हो गया। उसने पूछा, 'मन में कुछ तनाव है? मेरे हाथों भी एक ऐसी गलती हो गई थी। आइन्दा सावधान रहिए।'—उसने मुझे चाय पिलाई और बिदा दी।"

दूसरा अनुभव इस प्रकार है: भगूर (नासिक के पास) में मेरे एक मित्र रहते हैं। कोई अदृश्य शक्ति, "मैं आऊँ?" की रट लगा रही है इस प्रकार

उन्हें आभास होता रहता था। डर के मारे मेरे मित्र का स्वास्थ्य गिरने लगा। खाना-पिना हराम हो गया। दिन-ब-दिन अस्थिपंजर बनते गए। मैंने उनकी बात को गौर से सुन लिया। ज्वार का आटा लेकर उसे अभिमंत्रित किया। मैंने बताया की इसकी रोटी बनाओ और रात के समय खा जाओ। मेरी सलाह को मान कर मेरे मित्र ने उस आटे की रोटी को ग्रहण किया और वे सो गए। लेकिन रात को "मैं जा रहा हूँ।" इस प्रकार चिल्लाते हुए जाग उठे। बस! उस दिन से "मैं आऊँ?" की रट हमेशा के लिए शान्त हो गई। अब मेरे मित्र अच्छे स्वास्थ्य को अनुभव कर रहे हैं।

पशु-पक्षियों पर संमोहनविधि का क्या परिणाम होता है उसका भी एक उदाहरण मैं देना चाहता हूँ। एक दिन मैं डाकखाने गया था। मैं बैंक में काम करता था और डाकखाना मेरे बैंक से बिलकुल नज़दीक था। मैं डाकखाने के बाहर निकला और रास्ते पर आ गया। इतने में पाँच-छः गधे रास्ते में से जाते दिखाई दिए। उन गधों में से एक गधे की नज़र से मेरी नजर टकरा गई। मैं बैंक की तरफ निकल पड़ा। लेकिन क्या आश्चर्य! वह गधा अपने अन्य साथियों को छोडकर मेरा पीछा करने लगा और जिस कमरे में मैं ने प्रवेश किया ठेठ उसी कमरे में घुस पड़ा। सभी लोग आवाक् रह गए। चपरासियों ने उस गधे को बाहर निकाल दिया यह बात अलग। इस ग्रंथ में मैं अधिकाधिक अनुभवों को कथन नहीं कर सकता।

प्रतिबिम्ब त्राटक साधना में हम समय का ख्याल बिलकुल भूल जाते हैं। लगातार तीन घण्टे तक साधना करते रहने पर भी समय कैसा बिता यह समजमें नहीं आता। मेरे अनुभव के अनुसार सभी तरह की त्राटक साधनाओं में प्रतिबिम्ब त्राटक साधना अत्यन्त प्रभावशाली रही है। मैस्मेरिज्म अर्थात सम्मोहनशास्त्र में उन्नति करने की महत्त्वाकांक्षा रखनेवाले साधक इसी साधना को अपनाये।

ज्योति त्राटक : ५ :

एक बडी मोमबत्ती लाइए। उसे जलाकर ऐसी जगह रखिए कि जहाँ हवा के झोंकों से वह न बूझ सके। समय रात का हो और काफी अंधेरा हो। मोमबत्ती से तीन फीट की दूरी पर बैठ जाइए और ज्योति की ओर एकाग्र मन और स्थिर नजरों से देखते रहिए। आप अनुभव करेंगे की जैसे जैसे समय बीत रहा है, वैसे वैसे ज्योति की तेजस्विता और भी बढ़ती जा रही है। जैसे जैसे आपका मन उस ज्योति के उपर पूर्णरूपेण एकाग्र होता जाएगा, वैसे वैसे आप उसे जगमगाती

ज्योति में कुछ व्यक्तियों के चेहरे अथवा उनकी पूर्णरूप मूर्तियाँ देख पाएंगे। जिन व्यक्तियों का आप स्मरण करेंगे, उनकी मूर्तियाँ उस दीपशिखा में प्रकट हो जाएंगी। मेरी साधकावस्था में मैं हमेशा पगडी और उपरनी पहने लो. तिलक तथा धोती पहने चरखा चलानेवाले पूज्य बापूजी के दर्शन करता था। इस साधना का अभ्यास हर दिन रात के समय पंदरह से बीस मिनट तक करते रहना चाहिए। इस साधना के फलस्वरूप साधक की आँखों में अग्नि के समान प्रखर तेज निर्माण हो जाता है। क्योंकि दृश्य के अनुसार द्रष्टा भी बनता जाता है। कुछ ग्रंथों में मैंने पढ़ा है (और मेरे गुरुजी के द्वारा भी मैं सुन चुका हूँ) कि किसी पक्षी की ओर देख कर "यह पंछी मेरे" ऐसा संकल्प करने से वह पक्षी मर जाता है। व्यक्तिगत ढंग से इस बात का कोई अनुभव मेरे ज्ञान-कोषमें नहीं है। लेकिन यह बात बिलकुल सत्य साबित हो चुकी है कि तेजस्वी आँखों की एक नजर भी लोगों को अपने वश में कर लेती है। इस सिद्धिका उपयोग केवल अच्छी बातों के लिए करना चाहिए। अर्थात् इस उपदेश की आवश्यकता मेरे पाठकों के लिए बिलकुल नहीं है। जहाँ तक मैं जानता हूँ ज्योति त्राटक की साधना का प्रयोग व्यवहार में बहुत कम पाया जाता है।

अग्नि त्राटक : ६ :

सभी त्राटक साधनाओं में अग्नि त्राटक का स्थान श्रेष्ठ है। लेकिन यह साधना जनसाधारण और घरगृहस्थी में मग्न लोगों के लिए नहीं है। विषय अथवा कामवासना पर जो विजय पा चुके हैं वेही इस साधना को सफलता पूर्ण कर सकते हैं। अग्नि त्राटक साधना बहुत कठिन है। अतः उसकी जानकारी देने में मन में हिचक अवश्य पैदा हो जाती है। इस साधना का अभ्यास कोई करे या न करे, उसकी जानकारी देनें में कुछ भी बुराई नहीं है ऐसा सोच कर अग्नि त्राटक की जानकारी दे रहा हूँ।

रात के समय, घर के बाहर दूर जंगल में जा कर तीन-चार बडी लकडियाँ इकट्ठा कीजिए और उनमें आग लगा दीजिए। लकडियों में से निकलने वाली ज्वालाओं की ओर एकाग्रचित्त होकर स्थिर नजरों से देखते रहिए। कुछ दिनों के अभ्यास के बाद वे लाल लाल ज्वालाएँ नष्ट हो कर उनकी जगह केवल अति तेजस्वी प्रकाश दिखाई देगा। उस प्रकाश में यक्ष, किन्नर, गंधर्वादि आकृतियाँ दिखाई देंगी। इस साधना में भूत-प्रेत आदि भयानक दृश्य बिलकुल दिखाई नहीं देंगे। क्योंकि भूत-प्रेत का दर्शन तमोगुण का परिणाम है। अग्नि त्राटक की साधना में पृथ्वी और आप (जल) नामक दो जड़ तत्त्वों को छोड कर साधक तेज तत्त्व

में मिल जाता है। यक्ष, किन्नर, गंधर्वादि में तेज और आकाश इन दो तत्त्वों (elements) का अस्तित्व होने के कारण तीन भूतों (तत्त्वों–elements) से वने विश्व का हम अनुभव कर सकते हैं। हमारी सृष्टि पंचमहाभूतात्मक है। इन पाँच तत्त्वों में से पृथ्वी तत्त्व को अलग कर देने से चार तत्त्वों की एक अलग सृष्टि का अनुभव होना चाहिए। किसी दृश्य में से पृथ्वी और जल तत्त्व को हटा देने से वायु, तेज और आकाश इन तीन तत्त्वों से वनी सृष्टि का अनुभव होना चाहिए। और इसी न्याय के अनुसार केवल आकाश तत्त्व से वनी सृष्टि का भी अनुभव हो जाना चाहिए। और अन्त में आकाश तत्त्व का भी पूर्ण लोप होने पर साधक "अहम्" के चैतन्यभाव में स्थिर हो जाएगा। अग्नि त्राटक के बाद वायु तत्त्व में प्रवेश करने के लिए आवश्यक साधना की जानकारी मुझे नहीं है। इसके वारे में मैं वहुत सिद्ध पुरुषों से मिल चुका हूँ। लेकिन वे कुछ भी वताते नहीं। अस्तु। अग्नि त्राटक साधना की फलश्रुति यह है कि तीन तत्त्वों से वनी सूक्ष्म सृष्टि में साधक प्रवेश कर सकता है और उन तीन तत्त्वों से वने यक्ष, किन्नर, गंधर्वादि अति-मानव योनि के दिव्य पुरुषों तथा स्त्रियों के दर्शन भी वह कर सकता है। पंचमहाभूतात्मक अचेतन (=जड) सृष्टि, त्रितत्त्वात्मक सृष्टि को नहीं देख सकती। मैं इस साधना का अभ्यास लगभग बीच-पच्चीस दिन करता रहा। उस समय के दो-तीन अनुभवों को कथन करूँगा :

साधना को प्रारंभ करने के वाद पाँच–छः दिन वीत गए और साधना के समय मैं ऐसा अनुभव करने लगा कि मेरी जीभ पर कोई दिव्य पक्वान्न ही हो जिसका स्वाद मैं ले रहा हूँ। वाद में अग्नि की ज्वाला के स्थान पर प्रखर प्रकाश का तेजोनिधी निर्माण हो गया और उसकी प्रभा में कुछ स्त्रिया स्नान करती हुई दिखाई देने लगी। लेकिन मेंरा मनोवल ऐसा नहीं था कि जिसके भरोसे मैं इस साधना के पीछे पडूँ। दिव्य-लोक के दिव्य व्यक्ति के दर्शन होने पर इस संसार में रहनेवालों का कुछ लाभ होता है या नहीं इसके वारे में मैं कुछ वता नहीं सकता। लेकिन मेरे गुरुजी के कथनानुसार ऐसे दिव्य व्यक्ति हमेशा साधक के निकट अदृश्य रूप में रहकर साधक की सहायता करते रहते हैं।

अग्नि त्राटक सूक्ष्म सृष्टि में प्रवेश करने का एक प्रभावी साधन है। और सभी भूतों का (elements) त्याग करने पर योगी अपनी चैतन्यावस्था में स्थिर हो कर कृतकृत्य हो जाता है यह एक वात तो निश्चित है। जनसाधारण और परिवार में मग्न लोगों के लिए यह साधना उपयुक्त नहीं है। परिवार में रहकर कुछ अतींद्रिय शक्तियों (Psychic Powers) का प्रयोग कैसे किया जाए इस मर्यादा को सामने रखकर इस ग्रंथ की रचना की गई है। अतः ऐसे लोगों के लिए प्रतिबिम्ब त्राटक-विधि सर्वथा योग्य साधना हो सकती है।

सूर्य त्राटक : ७ :

इस त्राटक साधना का अभ्यास बहुत लोग करते हैं। सूर्योदय के समय इस साधना का अभ्यास करना चाहिए क्यों कि उस समय सूरज की रोशनी सौम्य रहती है। सूर्य का प्रतीक अति प्रकाशमान होने के कारण मिनट दो मिनट से अधिक समय के लिए इस त्राटक साधना को नहीं करना चाहिए। कडी दोपहर के समय भी त्राटक करनेवाले साधकों को मैं देख चुका हूँ। लेकिन दोपहर की यह त्राटक साधना आँखों को क्षति पहुँचाती है। अतः उसका अभ्यास टालना चाहिए। सूर्य समूचे विश्व का चक्षु है। उस दिव्य नेत्र से हमारा नेत्र मिल जाने पर सूर्य का तेज चर्मचक्षु के द्वारा हमारे अन्तःचक्षु को तेजोमय कर देता है और उसकी शक्ति वृद्धिगत कर देता है। ऐसा होते हुए भी इस त्राटक की अनुभूति मैं न कर सका। लेकिन इस त्राटक को पूर्ण करने के बाद हमारी आँखों के सामने एक तेजोगोल लगातार दिखाई देता है और उस दिव्य गोल पर त्राटक करना आसान हो जाता है ऐसा मेरा अनुभव रहा है।

तारा त्राटक : ८ :

हमारे चर्मचक्षुओं की क्षमता मर्यादित है। केवल पंदरह-सोलह फीट की दूरी तक होनेवाली चीजों को हम आँखों से देख सकते हैं। अर्थात् दूरस्थ वस्तुओं पर त्राटक करने से आँखों की शक्ति को हम बढा सकते हैं। चर्मचक्षु की शक्ति बढ़ने से अन्तःचक्षु की शक्ति भी अपने आप बढती जाएगी। दूरदर्शन (Clair-voy-ance) सिद्धि के लिए तारा त्राटक यह एक प्रभावी साधना है। हर रात को किसी एक तारे को चुन कर उसकी ओर एकाग्र मन से और स्थिर नजरों से देखते रहने का अभ्यास शुरू कीजिए। कुछ दिनों के बाद आप अनुभव करेंगे कि वह तारा अधिकाधिक स्पष्ट होता जा रहा है। इस के बाद की दशा में वह तारा आसमान में अदृश्य रहने के बावजूद भी उसी स्थान पर दिखाई देगा। यह है अन्तर्मन में बने उसी तारे का प्रतिविम्ब ! इस प्रकार का क्रम चार महीने तक जारी रखिए। इस त्राटक साधना से कुछ साधक दूर-दर्शन सिद्धि को प्राप्त कर सकते हैं। जिस स्थान के बारे में हम मन में सोचना शुरू करेंगे, वहाँ के दृश्य हमारे मनःचक्षु के सामने उभर आएंगे। एक दिन मैं घर पर आराम कर रहा था। इतने में चार-पाँच मित्र आ गए। चर्चा के दौरान दूरदर्शन सिद्धि की बात आ गई। मैं उसकी साधना करता था इस बात को वे सभी जानते थे। इसलिए उनमें से एक यों कहने लगा, "अगर यह सिद्धि सत्य है तो बताइए कि तिलक तालाव पर क्या हो रहा है ?" मैंने भी यों ही आँखें मूंद लीं और तिलक तालाव के बारे में सोचने लगा।

तो क्या आश्चर्य ! सुधाकर नामक मेरा एक मित्र तैर रहा था और नीले रंग का उसका जांघिया कोई मश्करी करने के लिए खींच रहा था। ऐसा दृश्य मेरी आँखों के सामने उभर आया। मैंने उस बात को बता देने पर मेरा वह मित्र तुरन्त ही तिलक तालाब की ओर दौड़ा। सचमुच सुधाकर वहाँ तैर रहा था। मेरे मित्र ने आगे पूछने पर सुधाकर ने एक नटखट लड़के की ओर संकेत किया। तब वह लड़का ड़र के मारे भाग खडा हो गया। लेकिन ऐसे दृश्य में हमेशा देखा करता हूँ ऐसा न समझिए।

दृश्य त्राटक : ९ :

कोई भी व्यक्ति इस त्राटक का अनुभव कर सकता है। दूर जंगल में अथवा खेत में खडे रहिए। समय सबेरे का हो। दूर के किसी पेड के ऊपरी हिस्से को देखते रहिए। कुछ ही समय के बाद आप अनुभव करेंगे कि आँखों के सामने से सभी चीज़ें अदृश्य होती जा रही हैं और आपके चारो ओर केवल आकाश ही आकाश है। इस दशा में आपको लगेगा कि आपका देह–भाव बिलकुल नष्ट हो चुका है और आप किसी दिव्य चैतन्यशक्ति से एकरूपता पा रहे हैं। स्थूल दृष्टि और दृश्य इनके पारवाली अतींद्रिय दशा में मन प्रवेश करेगा। इस साधना की प्रगत सीढी पर अतीत की भूली हुई घटनाओं का स्मरण बडी शीघ्रता से हो आता है। इस साधना से स्मरण–शक्ति बढ जाती है और मस्तिष्क हमेशा कार्यरत रहता है। आलस, अतिनिद्रा आदि दोष दूर हो कर मन उत्साह और खुशी से भर जाता है। मेरे अनुभव के अनुसार इस व्यावहारिक लाभ के अतिरिक्त इस साधना का और कुछ फल नहीं मिलता।

इन साधनाओं के अतिरिक्त आँखें मूंद कर किसी स्त्री का ध्यान करने से और उसकी मूर्ति पर त्राटक करने से उस स्त्री को वश करने की अघोर तथा अनीतिमान साधना भी है। लेकिन उससे सज्जन साधक कुछ भी लाभ नहीं उठा पाएंगे।

आगे चल कर न्यास नामक आम तौर पर अपरिचित साधना का परिचय करा देना चाहता हूँ।

□ □ □

. ३ .

न्यास

न्यास एक प्रभावशाली योगसाधना होते हुए भी जन साधारण में उसका प्रसार नहीं है, इससे मुझे खेद होता है।

मनुष्य देह में कुल मिला कर महत्त्वपूर्ण सत्ताईस केंद्र (Centres) हैं। वे निम्न प्रकार :

(१) पैरों की दो नल्लियाँ
(२) दो पेंडुरियाँ (पिंडलियाँ)
(३) दो जंघाएँ (जांघें)
(४) गुह्येंद्रिय के ऊपरका हिस्सा
(५) नाभी
(६) हृदय
(७) दो फेंफडे
(८) दो कंधे
(९) हर हाथ के तीन इस प्रकार छः विभाग
(१०) दो आँखें
(११) दो कान
(१२) मुख
(१३) नाक
(१४) भ्रुकुटि-मध्य
(१५) तारू

शरीर के इन सत्ताईस केंद्र-स्थानों को ठीक याद करने से साधना में सहजता आ जाती है।

आप जानते ही हैं कि मानवी मन हमेशा वाहरी वातें देखने और सुनने में मग्न रहता है। मानवी शरीरांतर्गत इंद्रियाँ और केंद्रस्थानों की ओर किसी का भी ध्यान आकर्षित नहीं हो पाता। पैरों तले काँटे का चूभ जाना, चोट लगना, अथवा सिर में दर्द होना आदि परिस्थितियों में ही मन शरीर के उन अंगों की ओर आकर्षित हो जाता है। यों देह की सभी विधियाँ अन्तर्मन के द्वारा प्राप्त सहकारिता से चलती रहती हैं। दिनभर में एखाद बार मन को शरीर के इन केंद्रों की तरफ खींच लेनेसे ये सभी केन्द्रस्थान निश्चित रूप में जागृत हो जाएंगे। मानवी देहांतर्गत प्राणशक्ति (Will Power) को इन केन्द्रस्थानों में इकट्ठा कर देने से वे प्रभावित हो उठेंगी और परिणामस्वरूप स्वास्थ्य लाभ हो कर शरीर बीमारियों से मुक्त होने में बडी सहायता मिलेगी। ऊपरिनिर्दिष्ट सत्ताईस केंद्रस्थानों के वारे में मन बिलकुल उदास होने के कारण वे दुर्वल बन चुकी हैं। दुर्वल केंद्रस्थानों के रहते शरीर की स्वाभाविक विधियों में रुकावट पैदा होना सहज बात हो जाती है।

चालीसगाँव के पास बसे हुए पाटणा नामक गाँव के निकट एक जंगल में मैं गया था। हेतु था मेरे परमपूज्य गुरुजी के दर्शन करना। तपती दोपहरका समय। कडी धूप के कारण मेरे सिर में दर्द होने लगा। आँखों के सामने अँधेरा छा गया और मैं पसीने से तर्र हो गया। मैंने बावाजी (गुरुजी) से बताया कि तबीअत ठीक नहीं है और सिरदर्द हो रहा है। उन्होंने मुझे पीठ पर (ऊर्ध्वमुख) सुलाया। फिर सिर के जिस हिस्से में दर्द हो रहा था उस पर मन एकाग्र करने को कहा। साथ साथ " ॐ चैतन्य गोरक्षनाथाय नमः ' इस मंत्र का जप करने की सूचना दी। मंत्र जप भी इस प्रकार करने को कहा कि मानो मेरा मन उस मंत्ररूपी प्रवाह को उस दुखनेवाले अंगपर छोड रहा हो। तीन-चार मिनट मैं उनकी आज्ञा के अनुसार करता रहा तो क्या आश्चर्य ! सिरदर्द गायब !! तब मेरे श्रद्धेय गुरुजी ने न्यास क्रिया के रहस्य का मेरे सामने उद्घाटन किया। उसकी विधि तथा फलश्रुति को स्पष्ट किया। न्यास एक गुप्त साधना होने के कारण अज्ञ जनों को उसका ज्ञान नहीं देना चाहिए ऐसा बन्धन भी उन्होंने मेरे उपर लाद दिया। लेकिन मेरे पाठक पूर्ण श्रद्धावान और जिज्ञासु होंगे ऐसा मान कर ही मैं पहली बार इस गुप्त साधना का रहस्योद्घाटन कर रहा हूँ।

सोने के पहले रात के समय गद्दी पर ही इस साधना का अभ्यास करना चाहिए। सोने के पहले पीठ पर सो जाइए। और आपनी सभी इंद्रियों को बिलकुल ढीला छोड दीजिए। शवासन करना जानते हैं तो बहुत ही अच्छा रहेगा। अब दो-तीन मिनट आप अपनी श्वसनविधि की ओर ध्यान दीजिए। परिणाम

स्वरूप उसकी गति कम होती जाएगी और मन प्रसन्न हो जाएगा। फेंफडों में से सारी हवा को बाहर फेंक दीजिए और उसके वाद साँस अन्दर लीजिए। अब ऊपर बताए हुए सत्ताइस केंद्रस्थानों की ओर ध्यान दीजिए और "ॐ चैतन्य गोरक्षनाथाय नमः" इस मंत्र को चार वार दोहराइए। ध्यान तो केंद्रस्थानपर ही होना चाहिए। इस प्रकार एक के बाद एक सत्ताईस केंद्रोंपर मन्त्रोच्चारपूर्वक ध्यान रखने से एक आवर्त (फेरा round) पूर्ण हो जाता है। किसी विशिष्ट मंत्र के वारे में आग्रह नहीं है। आप के गुरु से प्राप्त मंत्र सर्वथा योग्य रहेगा। एक वात को हमेशा के लिए ध्यान में रखना चाहिए कि हर केंद्रस्थानपर पंदरह सेकंद तक मन एकाग्र होना चाहिए। हर दिन इस प्रकार कम-से-कम तीन आवर्तनों का पूर्ण होना आवश्यक है। मंत्र जप की यह एक उच्चतम साधना है। केवल मंत्र जपते समय मन इतस्ततः भटकता रहता है। (मनुवा तो दस दिसैं-फिरैं—कवीर) लेकिन मैं जिसको सामने रखना चाहता हूँ उसके अनुसार मन मन्त्रों के शब्दोंपर भी ध्यान देता है और साथ-साथ देहांतर्गत प्रत्येक केंद्रस्थानपर भी ध्यान रखता है। क्योंकि एक केंद्रस्थान को भूल जानेपर आनेवाले दूसरे केंद्रस्थान का स्मरण हो जाना कठिन है। साधक भ्रम में पड जाएगा। इस तरह मन दो तरिकों से पूर्ण नियंत्रित हो जाता है और वह मंत्र और केंद्रस्थानोंपर एकाग्र हो जांता है।

जैसे हम समझते हैं वैसे यह साधना आसान नहीं है। साधक इसका अनुभव करेंगे ही। शरीर के किसी एक केंद्रस्थान पर मन एकाग्र कर जप करते समय मन को भटकने नहीं देना चाहिए। क्यों कि मन जरासा भी भटक गया की साधक अंगला केंद्रस्थान भूल जाता है। पाँच छः केंद्रों को पार करने पर यह अनुभव हो आता है। ऐसी स्थिति में पहले से श्रोगणेश करना होगा। इतना ही नहीं तो प्रारंभिक काल में न्यास क्रिया का एक आवर्तन पूरा करना भी नामुमकिन है। बहुत दिनों के अध्ययन के वाद एकाद आवर्त पूरा करने में हम सफलता पाते हैं। इस साधना के दरमियान बीच में ही नींद आ जाती है और कुछ समय के बाद नींद खुलने पर साधक सब कुछ भूल वैठता है। ऐसे समय साधना को फिर से एक बार प्रारंभ कर देना चाहिए। आप एक आवर्त को पूर्ण करने के वाद शांत पडे रहिए। आप अनुभव करेंगे कि आपका शरीर विलकुल हलका होता जा रहा है और फलस्वरूप आप किसी अलौकिक सुख को प्राप्त कर रहे हैं। लगता है कि आनंद की सौ सौ लहरें ही हृदय में उमड़ रही हो। इसका कारण यह है कि आपका मन, जप और केंद्र इनके बीच स्थिर हो जाने के कारण पूर्णतः निर्विकार हो जाता है। और ऐसे स्वच्छ मन में चैतन्य प्रतिविम्वित हो जाता है जो इस दिव्य आनंद का स्रोत है। प्राथमिक दशा में तो आवर्त को पूरा करने में बीसों

कठिनाइयाँ आ जाती हैं। फिर भी साधना को अधुरी न छोडिए। प्रयत्न करते रहिए। श्रद्धा और श्रम का योग्य फल आप जरूर पा जाएंगे।

इस साधना का अभ्यास कहीं भी आप कर सकते हैं लेकिन दूसरे लोगों को इसका जरा भी पता नहीं लगेगा यही इसकी खुबी है ! साधना करते समय मच्छरादि से उपद्रव न हो इसके बारे में सावधान रहिए। मसहरी हो तो अच्छा। इस साधना के लिए किसी खास समय की भी आवश्यकता नहीं है। सोते समय इस साधना का अभ्यास करने से नींद आने के पहले जो समय यों ही चला जाता है उसका भी अच्छा सदुपयोग हो जाता है।

निद्रानाश की व्याधि से परेशान लोग इस साधना के अभ्यास से कुछ ही दिनों में गहरी नींद का अनुभव कर पाएंगे। साधना के प्रारंभ काल में शरीर विलकुल हलकासा लगेगा और मन किसी अज्ञात सुख से प्रसन्न रहेगा। ऊपर के सभी केद्रस्थान उत्तेजित होने पर शारीरिक स्वास्थ्य का अनुभव स्वाभाविक रीति से आ ही जाएगा। मुखमंडल तेजस्वी हो कर आँखों में दिव्य तेज प्रकट होगा। इसका स्पष्ट अर्थ यही होगा कि प्राणायाम क्रिया से जिस प्राणशक्ति (Will Power) का लाभ हुआ है उसे इन सत्ताईस केंद्रस्थानों तक ले जाने में आप सफल हो चुके हैं। इस प्राणशक्ति का संचय अक्षय और असीम होनेके कारण आपका सभी केंद्र-स्थान उत्तेजित होते हैं और ऐसे उत्तेजित केंद्रों का शरीर की विधियाँ ठीक ढंग से चलाने में बडी सहायक सिद्ध हो जाती है। जोडों में होनेवाला दर्द, बदहजमी, अग्निमांद्य, अम्लता, गैस, पेटशूल, सिरदर्द आदि बीमारियाँ इस साधना के कारण मूलतः नष्ट हो जाती हैं।

इस साधना की श्रेष्ठ अवस्था भी प्रचलित है। मन ऊपर के केन्द्रों में स्थिर करते समय और जप करते समय मन में ऐसा भाव रखिए कि आप उस केंद्र में उस जप के स्वामी देवता को स्थापित कर रहे हैं। इस दशा में एक आवर्त पूर्ण कीजिए और सोचिए की सभी देह उस देवता के ताबे में जा चुकी है और चूंकि वह देवता सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान तथा सर्व साक्षिन है। इसी लिए उस के अधिकार में होनेवाली देह भी शक्तिशाली हो जाएगी। " ईश्वरः सर्व-भूतानाम् हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति " (हे अर्जुन, ईश्वर का निवास सभी प्राणियों के हृदय में होता है।) ऐसा अनुभव कर साधक कृतार्थ हो जाएगा। उसके लिए अब कोई कार्य नहीं रहेगा। शरीर की विधियाँ तथा देह की गति ईश्वर के आधीन होने के कारण साधक के मन में देहसंवंधी कोई भी चिंता नहीं रहेगी। जिसके सूत्रधार साक्षात् भगवान हैं उस देह को भी कभी हानि पहूँच सकती है ? जीवदशा नष्ट होने पर पापपुण्य के परिणामस्वरूप प्राप्त होनेवाले भोग को भोगनेवाला

भोक्ता ही नहीं रह जाता। परमात्मा में एकरूप हो जाने के कारण पाप, पुण्य, भोग आदि भाव ब्रह्मरूप में विलीन हो जाते हैं।

साधक इस बात को कभी भी न भूलें कि यह सब श्रद्धा का काम है। श्रद्धा जितनी अधिक दृढ, अनुभव उतना ही अधिक गहरा और ठोस रहेगा।

आगे चल कर मैं मेरे पाठकों को मानस-पूजा की विधि से ज्ञात कराना चाहता हूँ।

¤ ¤ ¤

.४.

मानसपूजा

दुनिया के सभी महत्त्वपूर्ण धर्मों के अन्तर्गत मानसपूजा-विधि को स्थान दिया गया है, इस बात से पाठक जान लेंगे कि योगशास्त्र में भी इस विधि का कितना महत्त्व रहा होगा। स्वामी विवेकानंद के गुरु भगवान श्री रामकृष्ण परमहंस की मानसपूजा को सभी जानते ही हैं।

रवड़ का एक गेंद लीजिए उस में चारों तरफ छोटे छोटे छिद्र बनाइए। उस गेंद को पानी से भर दीजिए। अब उसे दवाना शुरू कीजिए। उन छिद्रों में से क्षीण ऐसी जलधाराएँ वाहर निकलेंगी। लेकिन उसी गेंद में अगर आप एक ही छिद्र बनाते और पानी से भर उसे दवाते तो एकमात्र धारा बडे जोर से वाहर आ जाती। हमारा मन भी अनेक छिद्रोंवाले गेंद जैसा है। उसमें से वाहर निकलनेवाली क्षीण धाराएँ हमारे विचार हैं। दिन रात क्षीण विचारों की ये धाराएँ बहती रहती हैं। अनेक विचारों की भीड के कारण हर एक विचार बहुत ही क्षीण हो जाता है और उसका प्रभाव न के वरावर रहता है। विविध विचारों के छिद्रों को बन्द कर केवल एक विचार-प्रवाह जारी करने पर वह कितना प्रभावशाली रहेगा इसे बताने की आवश्यकता भी नहीं है। अतः इस प्रकार मन में पैदा होनेवाली अनेकविध विचार-धाराओं को रोक कर केवल एक विचारप्रवाह अथवा कल्पना को प्रभावशाली वनाने में मन कहाँ तक सफलता पाएगा और उसका फल भी क्या निकलेगा इसकेवारे में पूर्ण जानकारी देने का प्रयत्न इस अध्याय में किया गया है।

जनसाधारण में प्रचलित परिभाषा के अनुसार " मन में भगवान का पूजन करना " इसका नाम मानसपूजा है। यह बात सच होने पर भी वह अर्धसत्य है। मन के द्वारा ईश्वरकी पूजा करना अन्तिम और उच्चतम सीढी है। मानसपूजा का अर्थ है एकमात्र विचार-प्रवाह (Thought current) पर मन एकाग्र करना।

यह साधना बडी जटिल है और महान सिद्ध पुरुषों ने भी उसके सामने हार मान ली है। एकमात्र विचार-प्रवाह पर मन एकाग्र करने का प्रयत्न असफल रहता है, क्यों कि उसी समय अन्य विचार भी मन में निर्माण होते हैं। मेरा तो यह अनुभव रहा है कि साधारण साधक सेकंद भर भी एक ही विचार पर मन एकाग्र नहीं कर सकते। एक विचार-प्रवाह के चलते अन्य विचारों का उद्भव इस साधना को निष्फल बना देता है। इस साधना के लिए मन को योग्य बनाने के लिये, मन को खास शिक्षा (Training) देने के लिये योगमार्ग में कुछ आसान विधियों की चर्चा की गई है। इस साधना से दूर-दर्शन सिद्धि (Clairvoyance) का लाभ होता है यह बिलकुल सत्य बात है।

इस मानसपूजा की साधना का अभ्यास निश्चित दिशा में और निश्चित क्रम से करने पर साधक आश्चर्यजनक बातें अनुभव करता है।

विधि : १ :

दीवार से सट कर बैठ जाइए। दायों के पंजे खोल कर आसनस्थ हो जाइए। आँखों को मूंद लीजिए। मन को बिलकुल एकाग्र कीजिए और बाएं हाथ को मोड़ दीजिए। आप का पूरा ध्यान उसी पर होना आवश्यक है। इस विधि के दरमियान जल्दबाजी से बचिए। जल्दबाजी को टालना इस क्रिया के रहस्य को खोलने की कुंजी है। बादमें के पास की उंगली को धीरे धीरे मोड़ दीजिए। ध्यान उसी की ही ओर दीजिए। इस तरह बाएँ हाथ की सभी उंगलियों को मोड देने के बाद से प्रारंभ कर दाहिने हाथ की सभी उंगलियों को एकाग्र मन से मोड़ दीजिए। अब इसके विरुद्ध क्रम से एक एक उंगली को खोल दीजिए। जल्दबाजी को टाल दीजिए। मन को विचलित न कीजिए। बिलकुल धीरे धीरे इस क्रिया को करते जाइए। बाएँ हाथ की खुलनेपर इस विधि का एक आवर्त (Round) पूर्ण हो जाता है। लेट कर भी इस क्रिया को आप कर सकते हैं। इस क्रिया से मन निर्विकार (blank) होने में सहायता पहुँचती है। इस क्रिया को दिनभर में पाँच-छः वक्त दोहराना आवश्यक है।

विधि : २ :

बिस्तर पर पीठ पर (ऊर्ध्वमुख) सो जाइए। सिर के नीचे तकिया न ले शरीर को ढीला छोड दीजिए। बाया हाथ शरीर से बिलकुल सटकर रखिए, और दाहिने हाथ को दूर तक फैला दीजिए। अब आँखें मूंद लीजिए। मन को एकाग्र कीजिए। सोचिए कि मेरा यह दाहिना हाथ धीरे धीरे मेरे उठाए बना, अपने आप ऊपर उठाया जाएगा और मेरी छाती पर आ कर स्थिर होगा।

कुछ समय यह विचार स्थिर होने बाद सचमुच में वह हाथ धीरे धीरे ऊपर उठ खड़ा होगा ऐसा आप अनुभव करेंगे । आप उसे उठाने की कोशिश जरा भी न करें। कुछ ही क्षणों में वह हाथ छाती पर आ गिरेगा । इस साधना में आप अपने अन्तर्मन को हाथ ऊपर उठाने के लिये सूचित किया है और आपकी सूचना के अनुसार उसी अन्तर्मन ने उस हाथ को उठाकर आपकी छाती पर रख दिया है। अंतर्मन को सूचना देकर अपनी इच्छा को सफल बनाने की यह एक गुप्त साधना है।

इसके बाद इसी अन्तर्मन को सूचित करें कि, "मुझे पाँच मिनट में टट्टी को लगे।" अथवा "आज मुझे भूख न लगे।" ये सभी सूचनाएँ कार्यान्वित हो जाएंगी। ये सभी मेरे अनुभव की बातें रही हैं, इस सत्य को पाठक न भूले। आपका मन जितना अधिक एकाग्र हो जाएगा, अन्तर्मन को दी हुई सूचनाएँ उतनी अधिक प्रभावशाली ठहरेंगी।

विधि : ३ :

लेट कर आँखों को मूंद लीजिए। मन में किसी सु-विचार के बारे में चिंतन कीजिए। सत्य, भक्ति, प्रेम, दया, क्षमा आदि अनेक विषयों में से किसी भी एक विषय को ले लीजिए। लगभग पंदरह मिनट तक ऊपर में से किसी एक विचार को मन में रखिए। उदा० "सत्यमेव जयते।" इस श्रुतिवचन को लेने के बाद सोचते रहिए कि सत्य किस प्रकार मंगलप्रद है। सत्यमार्ग पर चलने से क्या लाभ होता है इसके बारे में सोचिए। लेकिन इस विचार के चलते अन्य विचार पैदा होने से यह पहला विचार-प्रवाह खण्डित हो जाएगा। क्यों कि मन में एक समय केवल एक ही विचार-प्रवाह चल सकता है। इस साधना से मन को एक-प्रवाही (एकदिक्) सोचने का सामर्थ्य प्राप्त होता है।

विधि : ४ :

लेट जाइए और आँखों को मूंद लीजिए। अब कल सबेरे जाग उठने से लेकर रात को सोने के वक्त तक जो भी कुछ किया है उसे उसी क्रम सिलसिले (Sequence) से याद करने की कोशिश कीजिए। यह साधना कठिनतम है। ध्यान में रखिए कि कल जो बातें हो गई हों उनका पूरा ब्योरा याद रहे। सबेरे मैंने क्या किया, मुझे मिलने कौन आए थे, उन्होंने क्या बातें कीं, मैंने क्या जवाब दिया, भोजन में नमक-मिर्च की कमी महसूस हुई या नहीं, कचहरी में काम किया, घर आते समय क्या क्या चीजें खरीद लीं आदि आदि बीसों घटनाओं की याद आ जाएगी। लेकिन उनको याद करते समय क्रम से याद कीजिए। इस विधि से भी मनके एक-विचार-प्रवाही होने में बडी सहायता पहुँचती है। मन को एकाग्र बनाने की कुंजी मिल जाने पर जीवन के सुखमय होने में देर न लगेगी।

विधि : ५ :

आँखें मूंद लीजिए। लेट जाइए। याद कीजिए कि कल आप घर से जो निकले तो चौराहे को पार कर स्टेशन तक गए। अब सिलसिलेवार याद कीजिए कि रास्ते में दोनों तरफ कौनसी इमारतें दिखाई दीं, दूकानों में कौनसी चीजें करीने से रखी गई थी, व्यापारी, विक्रेता तथा फेरीवालों के चेहरे कैसे थे। केवल इसी एक विचार को छोड़ कर अपने मन को किसी दूसरे विचार तक न भटकने दें। मन को एक-दिक् बनाने के बाद जो विचारप्रवाह शुरू होगा उससे आप अनुभव करेंगे कि आप जिन्हें कभी देखा भी नहीं है ऐसी सुरत-शक्लें आप की नजरों के सामने प्रकट हो रही हैं; जिन चीजों को आपने देखा नहीं है ऐसी बिक्री की चीजें आपकी आँखों के सामने आ रही हैं। यह क्या चमत्कार है? यह अद्‌भुत बात बिलकुल नहीं है। कल आप रास्ते से चल रह थे। आपकी आँखें बिलकुल खुली थीं। आपका अन्तर्मन इन सभी दृश्यों को ग्रहण कर रहा था। बिलकुल कैमेरे के समान। उन चीजों में दिलचस्पी न होने के कारण आपका बहिर्मन इसको नहीं जानता था। मन एकाग्र होने पर अन्तर्मन में छायांकित ये सभी दृश्य बहिर्मन में प्रकट हो जाते हैं और आपको उनका स्मरण हो आता है। इस साधना का यह एक महान् चमत्कार है। आप जिस रास्ते को याद करेंगे वह बिलकुल खाली न हो। क्यों कि ऐसे वक्त मन की विचारधारा के लिए मौका ही नहीं मिलेगा। इस विधि से भी जीवन आनंदमय बन जाता है।

विधि : ६ :

इस क्रिया के साथ सही अर्थ में मानसपूजा का प्रारंभ होता है। इस साधना में दो मुख्य बातों को न भूलें। पहिली बात : मानसपूजा के लिए जड मूर्ति का प्रतीक न हो। दूसरी बात-जिसे बहुत ही कम लोग जानते हैं : जिस उपादान का प्रतीक होगा उसी उपादान का पूजक हो। मानसपूजा के लिए आप मनःचक्षु के सामने एक मनोमय और चैतन्यपूर्ण मूर्ति ला रहे हैं। उस मूर्ति का पूजक भी मनोमय तथा चैतन्यपूर्ण होना चाहिए। जड़ भौक्तिक शरीर से मनोमय मूर्ति की मानसपूजा करना केवल असंभव है। इस सत्य का ज्ञान न होने कें कारण बहुतेरे साधकों की मानसपूजा असफल हो जाती है। थोड़े शब्दों में बताना हो तो कहूँगा कि मननिर्मित वातावरण में मन के ही द्वारा निर्मित पूजनीय मूर्ति को ला कर, मन के द्वारा गढे साधक के द्वारा ही, मनोमय विधियों से पूजा को संपन्न करना चाहिए। और इस सारे दृश्य को केवल साक्षिन् के रूप में देखना चाहिए। इस मानसपूजा-विधि के पूरे वर्णन की अपेक्षा बीस सालों से मैं इस मानसपूजा को मेरे जीवन में कैसे अपना रहा हूँ इसको बताना नए साधकों के लिए अधिक मार्गदर्शक सिद्ध होगा।

सवेरे जाग उठने के वाद स्नानादि विधियों को पार कर मैं विस्तरपर तकिये के सहारे बैठ जाता हूँ। आँखों को मूंद लेता हूँ। चूंकि मैं नाथपंथी हूँ, इसीलिए मैं ने भगवान गोरक्षनाथ की मूर्ति को प्रतीक के रूप में चुन लिया है। मैं अपने मनःचक्षुओं के सामने एक नितांत सुंदर मंदिर का दृश्य खडा कर देता हूँ और कल्पना करता हूँ कि उस मंदिर में भगवान गोरखनाथ का एक संगमरमर की शिला पर खडे है। "ॐ चैतन्य गोरक्षनाथाय नमः" इस मंत्र की चार बार आवृत्ति करने के लिए जो समय लगता है, उतने समय तक मैं उस संगमरमर की शिला की कल्पना करता हूँ। फिर उतने ही समय तक उस शिला पर भगवान गोरखनाथ विराजमान हैं ऐसी कल्पना करता हूँ। फिर उतने ही समय तक चाँदी की झारी से गंगाजल को छोडकर उनके दाहिने चरण को धोने की कल्पना करता हूँ। वाएँ चरण को लेकर इसी विधि को दोहराता हूँ। फिर इसी तरह गाय के दूध से दोनों भी चरणों को धो डालता हूँ। फिर एक वार पहले की तरह दोनों चरणों पर गंगाजल छोडता हूँ। फिर चार बार मंत्रोच्चार के लिए जो समय लगता है उतने समय में मैं भगवान के चरण पोंछता हूँ। वाद में मन्त्रोच्चार-सहित दोनों चरणोंपर अष्टगंध चढाता हूँ। फिर दोनों चरणों पर गुलाव का उभराभरा फूल चढाता हूँ। इस क्रमसे चंपक पुष्प, तुलसी तथा बेलपत्र चढाता हूँ। बाद में चार वार मन्त्रोच्चार होने तक चंदन की लकडी से वने एक सुंदर आसन की कल्पना करता हूँ जिस पर भगवान के बैठने की कल्पना भी करता हूँ। फिर आसन के पास चाँदी का लोटा और अन्य पात्र रखने की कल्पना करता हूँ। बाद में मन्त्रोच्चार के साथ भगवान के सामने चंदन का एक पीढा रख देता हूँ। जिस पर ऊँचे पक्वानों से सजी थाली रखता हुँ। फिर अत्यंत सुगंधित आगरबत्ती को जला देता हूँ और सुवर्णदीपक भी जला देता हुँ। अन्त में दो वार मन्त्रोच्चार करने में जो समय व्यतीत होगा, उसके दरमियान, भगवान का भोजन हो चुका है ऐसा मानकर उनके सामने जमीनपर माथा टेक कर प्रणाम करता हूँ। "ॐ नमो ब्रह्मणे नमः" "ॐब्रह्मार्पणमस्तु, ॐ शांतिः शांतिः शांतिः" इस मंत्र के उच्चारण के साथ मानसपूजा को समाप्त कर देता हूँ। इस मानसपूजा-विधि में "ॐ चैतन्य गोरक्षनाथाय नमः" इस मंत्र का उच्चारण आपने आप १०८ बार हो जाता है। प्राणायाम के साथ इस मानपूजाविधि का अभ्यास करने से दिव्य अनुभूति शीघ्रही हो जाती है ऐसा मेरा अनुभव रहा है। इस साधना की चरम सीमा की अवस्था में प्रतीक पूजक और पूजाविधि आदि द्वैत भावों का लोप होकर एक विशुद्ध द्रष्टा-दृश्य-विरहित भाव रह जाता है। यही तुरीयावस्था है।

इस साधना के कारण मन एकमात्र प्रतीक पर स्थिर हो जाता है और मन्त्रोच्चार करते करते आगे आनेवाले केन्द्रस्थानों को याद करना आवश्यक हो

जाने के कारण मन भी कहीं भटक जाने का डर नहीं रहता । द्रष्टा-दृश्य विरहित शुद्ध स्व-रूप में स्थिर होने के लिए इस साधना का बडा उपयोग हो जाता हैं । यही एक महासिद्धि है और इसके सामने अन्य क्षुद्र सिद्धियाँ तुच्छ हैं । इस साधना का अभ्यास करते समय फूल चढ़ाते वक्त तथा आगरवत्ती जलाने के वक्त कमरे में तरह तरह की सुगन्ध फैल जाती है । बहुत समय मैं यह अनुभव कर चुका हूँ । साधक को छोडकर अन्य उपस्थित लोगों का भी यही अनुभव है। प्रतीक रूप भगवान की मूर्ति को भोग चढाने पर उन चीजों के स्वाद का अनुभव भी हमारी जीभ कर सकती है ऐसा वहुत से लोगों का कहना है । लेकिन मैं खुद इस बात को नहीं अनुभव कर सका । इस साधना की उच्चतम दशा में साधक जिस वस्तु को मनःचक्षु के सामने लाता है, लोग प्रत्यक्ष उसी वस्तु के दर्शन करने लगते हैं । इसका वैज्ञानिक स्पष्टीकरण यह है कि जव मनुष्य वाह्य वस्तु को देखता है तव मन उसी वस्तु का आकार धारण कर लेता है और जीवचैतन्य उस वस्तु को अनुभव कर लेता है । जीवचैतन्य उस वस्तु को प्रत्यक्ष रूप में कभी भी नहीं देखता फिर भी उस वस्तु को लेकर मन का जो भी आकार वन जाता है उसे मनोमन देखता है और वाद में मनुष्य को उस वस्तु का ज्ञान हो जाता है। अतः मन एकाग्र कर वृक्ष कल्पना को साकार करने पर मन वृक्षमय बन जाता है और उसकी प्रतिछाया बाहर निकलती है और हमारे सामने वृक्ष की आकृति भासमान हो जाती है । वृक्ष देख कर मन का वृक्षमय बनना एक साधारण बात है । लेकिन मन को वृक्षमय बना कर उसकी प्रतिछाया को ग्रहण कर सामने वृक्ष के दर्शन करना एक अलौकिक अद्भुत बात समझना चाहिए।

मानसपूजा सिद्ध होने के बाद साधक अपने मनोबल से अपना ही देह के समान देह निर्माण कर दूसरी जगह भेज सकता है। अनेक देह धारण करने की यह सिद्धि साधक की नजरों में विलकुल एक मामुली खेल के समान है। क्योंकि उसका सारा ध्यान द्रष्टा–दृश्यविरहित शुद्ध ज्ञानस्वरूप चैतन्य की ओर लगा रहता है। इस महानतम लाभ को छोड कर साधक अन्य क्षुद्र सिद्धियों की ओर नहीं देखता। महाराष्ट्र में जिस ग्रंथ का पठण बडी मात्रा में होता है उस 'गुरुचरित्र' में कथित कथा के अनुसार स्वामी नृसिंह सरस्वतीजी दिवाली के दिनों में अनेक देह धारण कर दूर दूर रहनेवाले भक्तों के घर जाया करते थे। इस कथा को असत्य नहीं कहा जा सकता। इस साधना के बारे में वहुत-सी गुप्त वातें हैं। लेकिन उनके कथन के मोह से पूर रहना चाहिए। केवल एक बात कहूँगा कि इस साधना की अति उच्चतम दशा में साधक को मनोमय देह निर्माण करने की आवश्यकता नहीं रहती। उसका अन्तर्मन ही ऐसे विविध देहों का निर्माण कर उन्हें दूर दूर भेज देने का काम कर देता है।

इस के बारे में एक स्वानुभव कथन करने की तीव्र इच्छा को रोकना असंभव है। उस समय मैं महाराष्ट्र के अहमदनगर जिले के शेगाँव नामक छोटे गाँव में था। समय रात का था और मैं मानसपूजा में मग्न था। मन बिलकुल एकाग्र होने के कारण एक विशेष दिव्य आनंद का अनुभव कर रहा था। दूसरे दिन दोपहर के समय अहमदनगर स्थित एक सहकारी बैंक में काम करनेवाले मेरे एक मित्र आ पहुँचे और कहने लगे, "वाह साहब ! कल रात को आप हमारे घर आए और पाँच मिनट के अन्दर बिदा हो गए। आपने कुछ भी ग्रहण नहीं किया इससे हम सब दुःखी हैं।" मैं चकरा ही गया। कह दिया, "अजी, कल तो मैं शेगाँव छोड कर किधर गया भी नहीं। आप यह सब क्या कह रहे हैं?" मैं तो अवाक् रह गया। अस्तु। मैंने इस सिद्धि को प्राप्त किया है ऐसा मेरा बिलकुल दावा नहीं। मैं आज भी यही समझता हूँ कि मेरे मित्र को कुछ भ्रम हो गया होगा। लेकिन इस घटना के कारण अनेक देह-धारण सिद्धि की सत्यता के बारे में मेरा विश्वास बढ गया।

विधि : ७ :

मानसपूजा की इस चर्चा को छोड कर उपनिषदप्रणित और भी प्रगत मानसपूजा विधि का वर्णन करना चाहता हूँ। इसका नाम "लयचिन्तन" है। हमेशा की तरह अपने आसन पर बैठ जाइए। प्राणायाम के द्वारा मन को शांत रखिए। विचारों की शृंखला निम्न प्रकार रखने की कोशिश कीजिए– "मेरा यह देह अन्नमय है। अन्न वनस्पति से निर्माण होता है। वनस्पति और पेड-पौधे पृथ्वी से निर्माण होते हैं। पृथ्वी जल-तत्त्व से पैदा हुई इसलिए मैं पृथ्वी-तत्त्व को जल तत्त्व में मिला देता हूँ। जल, अग्नि (तेज) से निर्माण हुआ। इसलिए मैं जल को तेज में समाप्त कर देता हूँ। तेज वायु से निर्माण होता है। अतः मैं तेज को वायु में समाप्त कर देता हूँ। वायु आकाश-तत्त्व से निर्माण हुई। अतः मैं वायुतत्त्व को आकाश-तत्त्व में समाप्त कर देता हूँ। आकाश-तत्व आत्मतत्त्व से निर्माण हुआ। अतः मैं आकाश-तत्त्व को आत्मतत्त्व में समाप्त कर देता हूँ।" हर तत्त्व को समाप्त करते समय जिन पंचमहाभूतों से यह विश्व और उसे देखनेवाला द्रष्टा जीव निर्माण हुआ है उनमें से एक एक करके सभी तत्त्व समाप्त हो कर अन्त में दृश्य और द्रष्टा दोनों भी आत्मस्वरूप ही हैं इस सत्य को अनुभव कर साधक कृतार्थ हो जाएगा। यह राजयोगांतर्गत एक प्रभावी साधना है।

इस साधना का अभ्यास करते समय जैसे जैसे एक तत्त्व का बोध होता जाएगा वैसे वैसे चार तत्त्वात्मक, तीन तत्त्वात्मक, दो तत्त्वात्मक और एक तत्त्वा-

त्मक अनन्त विश्व का अनुभव हो जाना स्वाभाविक है । नीचे एक उपनिषद्-मंत्र दे रहा हूँ जिससे इस साधना को ध्यान में रखना कुछ आसान हो जाएगा ।

" तस्माद् वा एतस्मादात्मन आकाशः संभूतः आकाशाद्वायुः ; वायोरग्निः, अग्नेरापः, अद्भ्यः पृथ्वी, पृथ्वीभ्यां औषधयः, औषधयेभ्योऽन्नं, अन्नादेष पुरुषः ॥"

मानसपूजा की उच्चतम दशा में ध्यानमूर्ति के चैतन्यमय होने की कल्पना करने से वह ध्यानमूर्ति साधक के लिए सहाय्यक सिद्ध हो जाती है। परम भक्तिभाव और श्रद्धा से उस मूर्ति का पूजन कर उसे भोग चढाने से वह मूर्ति साधक पर प्रसन्न हो जाती है। संकटों से वह बच जाता है और पारमार्थिक व्यापार में सफल हो जाता है। मानसपूजा का दूसरा फल यह है कि साधक अ-विद्या की स्थिति को पार कर निरंजन स्वरूप को पाता है। इनके अलावा कुछ और लाभ की इच्छा रखना योग्य नहीं है । अस्तु।

मानसपूजा की इतनी जानकारी देने के बाद एक लौकिक लेकिन अति प्रभावशाली और सांसारिक जीवन को सुखी करनेवाली नवनाथपूजा-विधि का वर्णन करना चाहता हूँ ।

मुझे लगता है कि यह पूजाविधि महाराष्ट्र में बडे पैमाने पर प्रचलित नहीं है । नाथ-संप्रदाय में जो प्रसिद्ध नौनाथ हो गए उनकी पूजा की यह विधि है। वरूथिनी एकादशी, पूनम अगर कोई भी गुरुवार(बृहस्पतिवार) इस पूजाविधि के लिए योग्य हैं। जिस कमरे में इस पूजाविधि को करना हो, उसे सबेरे ही साफ-सुथरा कर दें और गोमूत्र और गोबर से उसे लीपेंपोतें । फर्श हो ती उस पर गोमूत्र छिडकें । फिर उस कमरे में एक चौकी रखिए और उसके बिलकुल ऊपर बरगद, गूलर तथा पीपल के पेडों की टहनियाँ टाँग दीजिए। इस पूजा के लिए दस पूजकों की आवश्यकता है। अगर यह नहीं हो सकता तो एक अकेला व्यक्ति भी इस पूजा-विधि को संपन्न कर सकता है ।

चौकी कमरे के मध्य रखिए ताकि सभी पूजक उसकी चारों ओर ठीक ढंग से बैठ सके । बाद में उस चौकी के चारों ओर रंगोली से सजावट कीजिए। यह काम तो स्त्रियाँ ही ठीक ढंग से करेंगीं । चौकी के पास ऐसा दीपक रखिए कि जिसमें एक समय नौं बातियां जलती रहें। धूपबतियों को जलाइए। बाद में सभी पूजकों को पीढों पर बिठाइए और माथे पर भस्म का टीका कीजिए । हर पंक्ति में तीन इस प्रकार वटपत्रों की तीन पंक्तियाँ बना दीजिए और दसवाँ वटपत्र बीच में रख दीजिए। हर पत्ते पर भस्म और एक एक सुपारी रखिए । बीच वाले पत्ते पर रखी सुपारी गुरुदेव दत्तात्रेय का प्रतीक और अन्य नौ सुपारियाँ नौ

नाथों के प्रतीक हैं ऐसा मानिए। अब थाली लीजिए और उसमें बीचवाली सुपारी को रखिए। अघमर्षण सूक्त के साथ उस पर जल, दुग्ध, शहद आदि चीजें डालिए। फिर उस सुपारी को किसी साफसुथरे वस्त्र से पोंछ डालिए और फिर से उसे मूल स्थान पर रखिए। इस प्रकार हर सुपारी के संबंध में हर पूजक ने एक के बाद इसी विधि को दोहराना चाहिए। हर सुपारी पर चंदन, फूल आदि चढाइए। बाद में हर सुपारी को स्पर्श कर, हर सुपारी के लिए ग्यारह बार, इस प्रकार गायत्री मंत्र का जप कीजिए। फिर रंगबिरंगे तीन चार किलो फूल ला कर उन्हें दस पूजकों में बाँट दीजिए। फिर इन फूलों को सुपारियों पर चढाइए। फूल चढाते समय, "ॐ चैतन्य दत्तात्रेयाय नमः, ॐ चैतन्य मच्छिद्रनाथाय नमः, ॐ चैतन्य गोरक्षनाथाय नमः, ॐ चैतन्य कानिफनाथाय नमः," इस प्रकार नौ नाथों के नामों के साथ मंत्रों का पठन करते करते सभी लोग सुपारियों पर फूल, तुलसी तथा बेलपत्र चढाएँ। ऐसे इक्कीस आवर्तनों को पूर्ण करने पर किसी न किसी व्यक्ति ने गीता का नौवाँ अध्याय, गुरुचरित्र में से कोई भी एक छोटासा अध्याय अथवा नवनाथ चरित्र में से गोरक्षजन्म का नौवाँ अध्याय पढ़ना आवश्यक है। बाद में सभी सज्जन आँखें बंद कर ले और अपने गुरु के द्वारा बताए गए मंत्र का १०८ बार पठन करें। इसके बाद हर पूजक चौकी के सामने घुटनों के बल बैठें, चौकी को स्पर्श करें, आँखें मुंद ले और अपनी मनःकामना को व्यक्त करें। नौ नाथ तथा भगवान श्रीदत्तात्रेय की आरती उतारकर प्रसाद के रूप में नारियल की गरी, सोंठ, शक्कर आदि चीजों को बाँटा जाए। जिस के घर यह पूजाविधि होगी वह केवल मूँग की खिचडी, सेम की तरकारी, बडे, दही ग्रहण करें। नौ नाथों को भोग चढ़ाने के बाद घर के सभी लोग खुशी के साथ भोजन करें। मित्रमंडली को भी न्योता दें। लेकिन इस बात को ध्यान में रखें कि दान के रूप में कुछ भी न रखा जाए और हलदी कुंकुम का भी प्रयोग न हो। शामके वक्त पूजा विसर्जन करें और दसों सुपारियों को एक छोटीसी डिबिया में भर भगवान की मूर्ति के पास रख दें। पूजक मन ही मन मनाता रहे, "आज से मैंने मेरे सब परिवार की जिम्मेदारी नौनाथों के ऊपर सौंप दी है। नों नाथ ही मेरे घर में निवास करने आए हैं और यह सारा घरबार उनका ही है। दिव्य नौ नाथों का निवास बन जाने से इस घर का सदा कल्याण ही होगा।" इस दृढभाव को धारण करने से साधक दिव्य अनुभव करने लगता है। उसकी सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं और परिवार के सभी व्यक्ति सुखी हो जाते हैं।

नौ-नाथों की इस अनोखी पूजाविधि के लिए पूजकों का शाकाहारी होना और मद्यादि के सेवन से दूर रहना आवश्यक है। कम से कम पूजाविधि के दिन तो इन बातों से दूर रहना अनिवार्य है। पूजा-विधि के समय सुगंधित वातावरण

का बडा महत्त्व रहता है। अतः अगरवत्तियाँ, इत्र आदि सुगंधित चीजों का उययोग जरूर करना चाहिए । मांसाहरी लोग भी यह पूजा-विधि कर सकते हैं । लेकिन पूजाविधि और गुरुवार के दिन वे मांस भक्षण न करें। इन दिनों व्रतस्थ रहें। पूजाविधि के समय जो भी इच्छा प्रकट की हो, आगे चलकर उसकी याद तक नहीं करनी चाहिए । आपकी मनोकामनाएँ अचानक सफल हो जाएँगी । शर्त यह है कि मनोकामनाएँ व्यावहारिक और आदमी के वस की हों। नसबंदी करने के बाद और सन्तानों के लिए इच्छा प्रकट करना व्यर्थ है।

और एक उपाय बताना चाहता हूँ जिसको मैं अनुभव कर चुका हूँ। कोई संकट आ जानेपर अथवा व्यावहारिक कामना हो तो उस संकट को दूर करने के लिए तथा उस मनःकामना को सफल बनाने के लिए निम्नलिखित उपाय कीजिए।

पूनम के दिन सूर्यास्त हो जाने के बाद बरगद का एक बडा-सा पत्ता ले आइए। पानी में हलदी को मिलाकर उस पत्ते पर अपनी मनःकामना थोडे शब्दों में लिखिए। चन्दन, अगरवत्ती आदि से उसकी पूजा कीजिए। पत्ते को तह कीजिए और हलदी में भिगाए धागे से उसे बाँध दीजिए। नदी, समुन्दर अथवा कुएँ के पानी में उसे छोड दीजिए। जलाशय तक पैदल चलते जाना चाहिए।पत्ते को छोड़ने के बाद घर आते समय न पीछे मुडकर देखना चाहिए न किसी के साथ बातें करना चाहिए। घर आने पर इसको पूर्णतः भूल जाना चाहिए।

इस साधना से जल-देवता प्रसन्न हो जाते हैं और साधक की इच्छा को सफल बना देते हैं।

अब इसके बाद जपयोग की चर्चा शुरू करेंगे।

◻ ◻ ◻

. ५.

जपयोग

" यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि " इन शब्दों में स्वयं भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में जपयोग को गौरवित किया है। सभी धर्मों में जप और नामस्मरण का बडा ही महत्त्व है। "जपात् सिद्धिः" इस प्रकार के स्मृतिवचन जपयोग की महत्ता को प्रकट करते हैं। जपयोग में जप करनेवाला और भगवत्–नाम इस तरह का द्वैत रहता है। फिर भी अन्य सभी विचारों को मन की सीमा के पार कर देने पर एकमात्र भगवत्–नाम को मनमें स्थिर कर देना मन की एक श्रेष्ठ स्थिति ही है इस में कुछ भी शंक नहीं।

नाम–स्मरण के कारण ऐसी घटनाएँ घटित हो जाती है कि जिनका स्पष्टीकरण तर्क से नहीं किया जा सकता। वे घटनाएँ अतर्क्य (तर्क के परे) होती हैं। कुछ ज्योतिषियों का दावा है कि विशिष्ट भगवत्–नाम का जप विशिष्ट संख्या में करने से उस व्यक्ति की जन्म–पत्रिका के स्थानों में से एक स्थान की शुद्धि हो जाती है। इसके बारे में मेरा मन शंकित होने के कारण मैं ज्यादा गहराई में नहीं जाना चाहता। मेरे पूज्य गुरुजी के अनुसार जप की अन्तिम सिद्धि इसमें है कि नाम और जप करनेवाला यह द्वैतभाव पूर्णतया नष्ट होकर साधक एक दिव्य, अलौकिक, अननुभूत चैतन्य दशा में स्वयं को स्थिर रखे। भगवान की आत्मा और मेरी आत्मा ये दोनों भी एक है ऐसा अनुभव करने से जापक (जप करनेवाला) " राम हमारा भजन करे, हम बैठे आराम " इस उच्च दशा में जा पहुचता है। अतः नामस्मरण से मनःकामना पूर्ण हो जाएगी, दुःखों का नाश होगा, खूब धन मिलेगा, परिवार सुखी होगा आदि बातों को भूला दीजिए। नाम–स्मरण योग में नाम जपनेवाले के अलग अस्तित्व का ही लोप हो जाता है और उसकी तुलना में ही जिसका अस्तित्व सिद्ध होता है वह ' नाम ' कल्पना का भी अन्त हो जाता है। इस तरह की द्रष्टा और दृश्य विरहित केवल चैतन्यस्वरूप अवस्था में स्थिर होने

के लिए ही यह नामस्मरण या जपयोग उपयुक्त है इस बात को नहीं भूलना चाहिए ।

जन–साधारण नाम-स्मरण में रुचि नहीं रखते इसके दो कारण हैं। पहला कारण है मन की रचना। मन के मायने है विचार और वासना। विचार और वासना यही मन का स्वरूप होने के कारण नामस्मरण से विचार और वासना क्षीण हो कर अन्त में मन नामक वस्तु का ही लोप हो जाता है। मन स्वयं को कैसे नष्ट होने देगा ? इसीलिए मन आदमी को नामस्मरण करने नहीं देता। हठात् नाम-स्मरण शुरू करने पर तो यह मन क्रोधित हो उठता है और नाम के अतिरिक्त अन्य सभी विचारों की सेना को निमंत्रित कर मानो विनाश से अपनी रक्षा कर लेता है। दूसरा कारण यह है: नामस्मरणातीत (=नाम–स्मरण के परे) आत्मा की आनन्दस्वरूप स्थिति का अनुभव जन–साधारण को नहीं होता। जिस प्रकार नारी–सुख में अज्ञ ऐसे नन्हे बालक के लिए इंद्र–दरबार की अप्सराएँ भी आकर्षित नहीं कर सकती उसी प्रकार ईश्वर के आनन्दमय स्वरूप का कुछ भी पूर्वानुभव न होने कारण जनसाधारण प्राथमिक दशा में नामस्मरण में रुचि नहीं रखता। नामस्मरण से मन स्थिर हो कर उसमें चैतन्य का सत्–चित्–आनन्द स्वरूप प्रति-बिम्बित होने के बाद जिस अलौकिक, दिव्य, वर्णनातीत आनन्द का अनुभव हो आता है उसके बाद साधक नामस्मरण जैसी अद्वितीय साधना को छोडेगा नहीं। लेकिन इस अनुभव का स्वामी बनने के पहले ही साधक निराश हो कर नामस्मरण साधना का त्याग करता है। पाँचदस फीट की मामुली खोदाई के बाद पानी न मिलने पर कुएँ की खोदाई को ही छोड देना जिस प्रकार मूर्खता और समय की बरबादी को सिद्ध कर देता है, उसी प्रकार आनन्दस्वरूप परमात्मा का अनुभव करने से पहले ही नामस्मरण की साधना को अधूरी छोड़ देना एक अविचारी कृत्य है।

नामस्मरण योग मार्गपर हम कहाँ तक बढ़ चुके हैं इसका भी एक कसौटी है। और वह है पूर्ण नम्रता। अहंकार का समूल नाश। नामस्मरण साधना के समय साधक का नम्र होना नितांत आवश्यक हैं। इसका कारण यह है कि नाम-स्मरण के माध्यम से जीव–चैतन्य परमात्म–चैतन्य में घुल–मिल जाता है और परिणामस्वरूप अहं की भावना की जड़ ही कट जाती है। नम्रता भगवान को भी खींच लाती है। मैं ऐसे भी लोगों को जानता हूँ जो नामस्मरण से नम्र होने के बजाय शेखी हाँकने में खुदको धन्य समझते हैं। बडी घमंड के साथ वे बताते हैं "मैंने एक लाख या दस लाख जप किया है।" इस भावना से "मैं" घटता नहीं बल्कि और भी बढता जाता है। जिससे अहंकार बढे वह नामस्मरण ही नहीं है। और भी एक इशारा देना मेरा कर्तव्य है। कुछ लोग मर्यादा के बाहर नाम-स्मरण करने से पागल भी हो चुके हैं। ऐसे कुछ उदाहरण खुद मैंने देखे हैं।

लगातार घंटों तक नामस्मरण करने से दिमाग पर विपरीत परिणाम हो जाता है ओर पागलपन उसका दृश्य फल रहता है।

कई बरसों का मेरा अनुभव बताता है कि जप या नामस्मरण का काल बीस मिनट से अधिक कभी भी न हो। इस अवधी में एक क्षण भर के लिए ही क्यों न हो, अगर शरीर का विस्मरण हो जाता है तो उसे भी एक बडी सिद्धि समझ लेना चाहिए।

नाम–स्मरण के संबंध में योग–शास्त्र हमें क्या बता रहा है उसे जरा देखेंगे। नाम–स्मरण की पहली पादानपर नाम और उसका जप करनेवाला–जापक इस द्वैत का अस्तित्व रहता है। इस स्थिति में जीवदशा ज्यों के त्यों बनी रहती है। ईश्वर अलग है और मैं उसका नामस्मरण कर रहा हूँ ऐसा द्वैतभाव उसमें पाया जाता है। इसी मनोवस्था में रहकर जापक कितना भी जप क्यों न करे, उससे कुछ भी फायदा होनेवाला नहीं है। क्यों कि ईश्वर से अलग एक जीवदशा का अस्तित्व ज्यों के त्यों बना रहता है। दो नामोच्चारों के बिलकुल बीच जो एक निर्विकार स्थिति उत्पन्न होती है उसकी और ध्यान देना यही सच्चा नामस्मरण है। कमरा बंद कर साधक आसनस्थ हो जाए। साँस को पूर्णतः बाहेर छोड़ कर गुरु के द्वारा प्राप्त भगवत् नाम का उच्चार करे। नामस्मरण या जप के लिए नाम छोटा हो। जिन साधकों ने गुरु से कोई मन्त्र प्राप्त न किया हो वे "हरिः ॐ" इस सर्वश्रेष्ठ मन्त्रका जप करें। भगवान रामकृष्ण परमहंस भी इसी मन्त्र का जप करते थे। साधक एकही समय बीस मिनिट से अधिक जप न करे। पहले, पाँच मिनट तक लगातार नामोच्चार करते रहे। बाद में पहला नामोच्चार और उसके बाद का नामोच्चार इनके दरमियान का समय (Gap) बढ़ाते चले। दो नामोच्चारों की बीच निर्माण होनेवाली चैतन्यावस्था में स्थिर होने की कोशिश करे। आगे चलकर दो नामोच्चारों के बीच का समय इस प्रकार बढ़ाते जाना चाहिए कि अन्त में वह पूरे एक मिनट तक बढ़ता जाए। नामोच्चार की पहली लहर ऊभर आती है और क्षणभर के लिए स्थिर होकर अदृश्य हो जाती है। अब दूसरी लहर पैदा होने तक साधक का मन निर्विकार बन जाता है। इसे ही ब्राह्मी स्थिति कहते हैं। नामोच्चार की संख्या जितनी कम और दो नामों के बीच का समय बढाने का अभ्यास जितना अधिक, इस साधना का दिव्य अनुभव भी उतनी अधिक बडी मात्रा में आ जाता है।

इस सारी मीमांसा के बाद आपने जान लिया होगा कि नामस्मरण में या जपयोग में नाम का महत्त्व नहीं है। अगर महत्त्व होगा तो दो नामोच्चारों के दरमियान की चैतन्यावस्था की निर्मिती का।

नामस्मरण के द्वारा परमशान्ति का लाभ होता है, यह सिद्धान्त है। इस साधना का साधक अत्यंन नम्र और गर्वरहित होता है। चैतन्यदशा के स्पर्श से वह सभी भौतिक चीज़ों में आत्मस्वरूप के दर्शन करने लगता है। " वसुधैव कुटुम्व-कम् " यह उसका अनुभव रहता है। हर दिन ईश्वर को याद करने से उसमें अलौकिक ईश्वरी शक्तियाँ आविष्कृत हो जाती हैं। नामस्मरण के समान आसान और सुरक्षित अन्य मार्ग नहीं है यह सत्य है।

साधक अपनी जपसंख्या की गिनती न करे। जप की गिनती करने से साधक गर्व करने लगता है और फलतः यह साधना व्यर्थ हो जाती है। इस साधना की सफलता के दो लक्षण हैं : अहंकारविरहित दशा और सभी कुदरती चीजों में दिलचस्पी लेकर आनंद को प्राप्त करना। इस दशा में दुःख और संकट भी आनन्दमय दिखाई देने लगते हैं और साधक निर्भय हो जाता है। संक्षेप में साधक जीवन्मुक्तावस्था का अनुभव करने लगता है।

नापजप–साधना अथवा नामस्मरण के लिए कुछ नियमों का पालन नितान्त आवश्यक है। किसी भी बात के संबंध में खेद न प्रकट करें। द्वेष–मत्सर का त्याग करें। अन्य लोगों से वहुत अधिक मेलजोल न रखें। उपवास न करें। और भूख होने पर नामस्मरण को न बैठें। आहार विहार-में भी पवित्रता का ख्याल करें। भोजन सादा एवम् सात्त्विक रहे। अन्न के सूक्ष्म हिस्से से मन की निर्मिती होती है, ऐसा एक श्रुतिसिद्धान्त है। सात्त्विक अन्न ग्रहण करने से मन भी सात्त्विक बन जाता है। ऐसा ही सात्त्विक मन ईश्वर के नामस्मरण के द्वारा शीघ्र स्थिर हो जाता है। जिस पर भगवान की कृपा होती है, दुनिया भी उसीका साथ देती है। किसी प्रेमी के हृदय में अपनी प्रेमिका के शिवाय अन्य योई विचार ही नहीं ठहर सकता, अथवा माँ का अन्तःकरण उसके एकलौते बेटे की चिन्ता से भरा रहता है। ठीक उसी प्रकार साधक का सारा ध्यान भगवान की ओर होना चाहिए। ऐसी स्थिति में इस साधना की सफलता एक निश्चित बात है।

□ □ □

. ६ .

मन को निर्विकार कैसे करें

जब तक मन निर्विकार अथवा निर्विकल्प स्थिति में स्थिर नहीं होता, तब तक कोई भी सिद्धि प्राप्त नहीं हो सकती। इसके संबंध में विवाद हो ही नहीं सकता। इसके पहले कुछ अध्यायों में मन निर्विकार करने की कुछ साधनाओं की चर्चा हो चुकी है। अब जिस अध्याय को मैं आपके सामने ला रहा हूँ, उसे वे सज्जन समझ सकते हैं जिन्होंने वेदान्त का अध्ययन किया हो। फिर भी अन्य पाठक इसे समझने की कोशिस करने में न चूकें।

"सर्व खलु इदं ब्रह्म," "नेह नानास्ति किंचन" आदि श्रुतिवचन प्रसिद्ध ही हैं। इस विशाल संसार में केवल एक परमात्मा के सिवाय अन्य कोई वस्तु है ही नहीं। वह परमात्मा "एकमेवाद्वितीयं" है। रेगिस्तान में सूरज की किरणों की जगह जल के अस्तित्व का आभास हो जाता है, जिसे हम मृगजल या मृगतृष्णा कहते हैं। उसी प्रकार एकमात्र सत्-चित्-आनन्द परमात्मा में हम समूचे विश्व का और उसे देखनेवाले जीवात्मा का अनुभव करते हैं जो आभास है। मृगजल अपने आप में कोई वस्तु नहीं है। अगर कोई वस्तु होगी तो सूरज की किरणें हैं। उसी प्रकार विश्व नामक कोई वस्तु ही नहीं है; है केवल एक परमात्मा। धुंधल के में हम डोरी (रज्जु) को साँप मान बैठते हैं, उसी प्रकार भ्रम के कारण परमात्मा के स्थान पर हम विश्व को देखते हैं। जिस प्रकार मृगजल रेगिस्तान में आर्द्रता पैदा नहीं कर सकता अथवा रज्जु की जगह दिखाई देनेवाले साँप को हम डोरी से बाँध नहीं सकते, उसी प्रकार इस संसार का परमात्मा से सिधा संबंध नही है। इतना ही नहीं तो परमात्मा इस विश्व संबंधी कुछ भी जानता नहीं। क्योंकि किसी वस्तु का ज्ञान होने के लिए दो चीजों की आवश्यकता होती है: जिसे जानना है वह वस्तु (ज्ञान का विषय) और जो उसे जानने की इच्छा रखता है ऐसा व्यक्ति (जिज्ञासू)। लेकिन परमात्मा के सिवाय अन्य कुछ भी न होने-

कारण परमात्मा किसे देखेगा और किस चीज का अनुभव करेगा ? मिट्टी से बने विविध बर्तनों और मूर्तियों में मिट्टी के सिवाय अन्य कुछ भी नहीं होता; सोने के विविध आभूषणों में सोने के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं होता; उसी प्रकार इस समूचे विश्व में परमात्मा के सिवाय अन्य कुछ भी नहीं है। और वह परमात्मा केवल ज्ञानरूप है। उसमें जानना और न जानना इन दोनों भावों का अभाव हैं।

हम तो सभी सही अर्थ में परम-आत्म-स्वरूप हैं। लेकिन केवल अज्ञान के कारण मानव शरीर को ही हम सब कुछ "अहम्" "मैं" मान बैठते हैं। यह भ्रम तो अनादि है। सुख-दुःख, संकट, यातना, निराशा, कीर्ति, धन आदि आदि समस्त चीचों का अस्तित्व शरीर के साथ जुड़ा हुवा है। परम-आत्म-स्वरूप में अन्य भावों का अ-भाव रहने के कारण ऊपर लिखे हुए भाव उसे (यानि परम+आत्मस्वरूप को) स्पर्श तक नहीं कर सकते। जीवदशा अथवा शरीरावस्था के रहते संसार और सांसारिकता तथा उसके साथ आनेवाली पीडाएँ टल नहीं सकती। इसीका ही स्पष्ट अर्थ यह है कि ऐसी परिस्थितिओं में मोक्ष असंभव है।

नींद खुलते ही पहले पहल "मैं" का ज्ञान क्षण दो क्षण के लिए हो जाता है। "मैं" के उस क्षणिक ज्ञान में मेरा अलग व्यक्तित्व, मेरा संसार. मेरी पीडाएँ आदि का अ-भाव रहता है। "मैं" का यही ज्ञान मनकी प्रारंभिक दशा है। फिर कुछ ही क्षणों में "मैं" का यह शुद्ध ज्ञान शरीर के रूप में हमारे अलग व्यक्तिगत रूप का स्मरण दिला देता है।" मैं" के शुद्ध नाम की दशा तक पहुँचना हमारी सफलता ही है। इसी दशा को तुरियावस्था कहते हैं। अंतर्मन (Sub-conscious mind) यही है।

सपने में सपना देखनेवाला (द्रष्टा) और स्वप्नजगत् अलग नहीं होते। स्वप्नद्रष्टा ही सुखदुःखों का फल पाता है। सपनों की दुनिया में देखनेवाला और भोगनेवाला दोनों भी काल्पनिक होते हैं। सपना खुलने पर स्वप्नदृश्य स्वप्न-जगत् तथा उसके सुख दुःख नष्ट हो जाते हैं और स्वप्नद्रष्टा जागने के बाद खुद को अकेला पाता है। उसी प्रकार साधना के द्वारा जीवदशा का नाश करने पर यह जगत्, उसे देखनेवाला द्रष्टा और सभी सारे सुखदुःख आदि नष्ट हो कर साधक परमात्मा के साथ एकरूप हो जाता है। आज और अभी भी हम परम-आत्म स्वरूप हैं। क्यों कि परमात्मा के सिवाय अन्य वस्तु या अन्य भाव है ही नहीं। लेकिन अज्ञानवश शरीर को "मैं" समझकर, सामने फैली हुई सृष्टि के सुखदुःखों में हम फँस जाते हैं। जीव-कल्पना का नाश होते ही साधक परम्–आत्म–स्वरूप बन ही जाता है। हिरन अज्ञानवश मृगजल के पीछे दौडते हैं। ज्ञानवान् उस मृगजल के असत्य रूप को पहचान कर खुद को बचा लेता है।

उसी प्रकार ज्ञानी पुरुष यह ठीक जानता है कि यह जगत और उसका द्रष्टा दोनों भी आत्मस्वरूप परमात्मा–रूपी महासागर में भासमान होनेवाली लहरें हैं। और इसी अनुंभव के कारण वह दुनिया के प्रति उदासीन रहता है। जो भी क्रियाएँ उसके हाथों हो जाती हैं, वह खुदको उनके कर्ता के रूप में अस्वीकार कर देता है। फिर अन्य लोग कुछ भी समझें। उसकी जीवदशा परम–आत्म–स्वरूप में एकरूप हो जाने के कारण वह खुद परमात्मा ही बन जाता है। ऐसी दशा में वह हर एक वस्तु में परमात्मा के दर्शन करने लगता है और इसी कारण कीर्ति, सिद्धि, धन, सुख आदि बातों से उसका मन मुक्त हो जाता है। ऐसे वक्त उस देहधारी को भी, परमात्मा ही समझना चाहिए। ऐसे महात्मा के आशीर्वाद सच निकलते है और उनका संकल्प सिद्ध हो ही जाता है।

क्योंकि वह परमात्मा का संकल्प होता है न कि जीवात्मा का। शास्त्रों में भी कहा गया है कि सिद्ध–पुरुष के द्वारा असंभव अथवा अतार्किक संकल्प अथवा आशीर्वाद प्रकट होनेपर भी सच निकलता है। वह परमात्मा का सत्य–संकल्प होता है। महाराष्ट्र में दत्तात्रेय की महिमा गानेवाले "गुरुचरित्र" नामक ग्रंथ का पठन बडी श्रद्धा के साथ किया जाता है। इसी गुरुचरित्र में मृतक को जिंदा करना, ठांठ भैंस के बछडा हो जाना, बांझ स्त्री को पुत्र का लाभ होना, एक सेर चावल से सहस्रभोजन का प्रबंध हो जाना, अपढ़ किसान के द्वारा वेदविद्या के बारे में चर्चा, आदि कथाओं का बडा प्रचलन है। ये कथाएँ बिलकुल असत्य नहीं हैं। जीव कुछ एक बातों में भले असफल रहे; लेकिन परमात्मा के लिए कुछ भी असंभव नहीं है। समूची सृष्टि परमात्मा की लीला है।

मैं पहले ही कह चुका हूँ कि इन सिद्धियों का लाभ मन की तुरियावस्था में ही हो सकता है। लेकिन तुरियावस्था के आगे (अर्थात् तुरियातीत दशा में) सृष्टि संबंधी ज्ञान का भी अस्त हो जाने के कारण सृष्टि, द्रष्टा आदि भावों का विलय हो जाता है। इस ग्रंथ में मन की पाँचवी दशा का वर्णन मैं नहीं करूँगा। लेकिन मन को तुरियावस्था में ले जाने की दो प्रभावी साधनाओं का वर्णन अवश्य करूँगा।

: विवर्त साधना :

साधक को कभी भी नहीं भूलना चाहिए कि सूरज की किरणों पर मृगजल भासमान होता है, उसी प्रकार परम आत्म–स्वरूप जो "मैं" उसीपर मेरे सहित विश्व भासमान होता है। मृगजल एक भ्रम है। सत्य है सूरज की किरणें। सृष्टि अथवा जगत् सत्य नहीं है–केंवल भ्रम है। सत्य है केवल परमात्मा जिसके सहारे सृष्टि की लीला चलती है।

सृष्टि की हर वस्तु, सुन्दर-असुन्दर दृश्य, शत्रु–मित्र आदि हम जो भी कुछ अनुभव करते हैं वह सब एक भ्रम है। इस असत्य को देखनेवाला भी असत्य है। सत्य केवल "मैं।" अन्य सभी वस्तुएँ असत्य अथवा मिथ्या है। द्रष्टा "मैं" और दृश्य विश्व सभी परम–आत्म-स्वरूप मान कर जीवन बिताने पर साधक को परम-आत्म-स्वरूप लीला का ज्ञान हो ही जाता है। जिसने पहले कभी भी मृगजल को नहीं देखा है वह पहली बार अपनी प्यास बुझाने के हेतु उसके पीछे दौडने लगता है। लेकिन कितना भी आगे जाओ, पानी का तो पता नहीं! फिर मृगजल की असत्यता अथवा मिथ्यत्व का ज्ञान उसे हो जाता है। ऐसा ज्ञान हो जाने पर आगे सैंकडों बार भी मृगजल के दर्शन क्यों न हों, वह न उसकी अभिलाषा रखेगा, न उसके पीछे पडेगा। साधना की उच्चतम स्थिति में साधक को पता लग जाता है कि यह जगत् मिथ्या है। केवल एक भ्रम। और इस अनुभव के बाद सृष्टि की कोई भी वस्तु न उसे प्रसन्न करती हो, न दुःखी। साधक आत्मस्वरूप में अ स्थिर हो जाता है। उसका मन तुरियावस्था में जाने के कारण वह अनैकविध सिद्धियों का स्वामी हो जाता है। लेकिन ये सिद्धियाँ भी सृष्टि का एक अंग होती हैं। अतः वह उन्हें प्रकट करने की इच्छा भी नहीं रखता। ऐंसे किसी सिद्ध-महात्मा की सिद्धियों का अनुभव अन्य लोग भले ही कर सकते हैं फिर भी सिद्ध महात्मा उसके बारे में कुछ भी नहीं जानता। इस साधना से संकल्प सिद्धि प्रकट होती है।

: अज्ञात साधना :

शास्त्र के अनुसार यह साधना जीवन मुक्ति के लिए है। योगवासिष्ठ जैसे महान् ग्रंथ में इस साधना का बड़ा ही महत्त्व बताया गया है। इस साधना में साधक ने अपने मन में ऐसा विचार रखना है कि जिस प्रकार तेजोनिधि सूरज में अंधकार के लिए कोई भी स्थान नहीं है, उसी प्रकार परम-आत्मस्वरूपवाला जो "मैं" उसके स्थान पर भी अज्ञान तथा उसी प्रकार की सृष्टि का होना संभव नहीं। "मैं" ज्ञानरूप परमात्मा होने के कारण उसके विपरीत, अज्ञान का वहाँ होना संभव नहीं। सूरज में रोशनी के सिवाय अन्य कुछ भी नहीं उसी प्रकार ज्ञानरूप परम-आत्मस्वरूप में ज्ञान के सिवाय अन्य कुछ भी नहीं है। इस दशा में स्थिर हो जाने के बाद धीरे धीरे अज्ञान की मात्रा कम हो जाती है और साधक हर वस्तु को ज्ञानरूप परमात्मा के रूप में पाने लगता है। इसके बाद ऐसे सोचना चाहिए कि सूरज में अंधकार के अस्तित्व की कल्पना करना भी असंभव है, फिर अंधकार की तुलना में जिसका अस्तित्व सिद्ध हो जाता है वह रोशनी के अस्तित्व के बारे में सोचना भी असंभव है। अंधकार नहीं तो फिर रोशनी भी नहीं। उसी तरह मेरे आत्मस्वरूप अस्तित्व में अज्ञान का अभाव होने के कारण

तत्सापेक्ष ज्ञान की कल्पना भी व्यर्थ हो जाती है। योग साधना की यह सातवी (सप्तम्) भूमिका है। समझना और न समझना इनके पर यह एक शुद्ध ज्ञानस्वरूप दशा है।

इस साधना के लिए श्रद्धा तथा अथक प्रयत्नों की नितांत आवश्यकता है। अपने चैतन्यस्वरूप अस्तित्व को अज्ञान के काल्पनिक पर्दे ने ढक रखा है। इस अज्ञान को दो चार दिनों में दूर करने की बात सोचना मूर्खता है। कुछ बरसों की लंबी साधना के बाद साधक शुद्ध समाधि की दशा तक पहुँच जाता है यह सत्य है।

□ □ □

.७.

मोहिनी विद्या

अभी तक जिन साधनाओं की चर्चा मैं कर चुका हूँ। उनके कुछ ही महिनों के अभ्यास के बाद साधक की इच्छाशक्ति बहुत ही बढ़ जाती है। अपने मन पर अधिकार प्रस्थापित करने के बाद साधक दूसरों के मन पर अवश्यमेव अधिकार प्रस्थापित कर सकता है। मन की इस इच्छाशक्ति (Will-power) के सहारे संमोहित व्यक्ति के द्वारा अनेक आश्चर्यकारक वातें की जा सकती हैं। अर्थात् इस विद्या का उपयोग केवल ऐसे चमत्कार दिखाने के लिए करना योग्य नहीं। इस के प्रयोग से मानसिक पीडाएँ, निद्रानाश, बुरी आदतें, शरीर की कुछ पीडाएँ, मन की दुर्वलता आदि को दूर किया जा सकता है। इस दिव्य विद्या की साधना इसी हेतु की जाय ऐसी मेरी सलाह है।

जनसाधारण में मोहिनी विप्रा के बारे में बीसों गलत फहमियाँ फैली हुई हैं। यह विद्या जादूटोना, जारन–मारन अथवा इंद्रजाल आदि का एकाद प्रकार होगा और उसको प्राप्त करने के लिए कुछ घृणास्पद (अघोर अथवा औघड़) उपायों का अपनाना पडेगा, ऐसा वहुत से लोग समझते हैं। कुछ लोक समझते हैं कि यह विद्या अन्य व्यक्ति को सुलाने की एक बिद्या है। अन्य व्यक्ती को निद्रिस्त करना यह मोहनी विद्या का एक अंग है। लेकिन वही एकमेव बात यानी मोहिनी विद्या इस प्रकार कहना गलत है। निद्रिस्त करने के सिवाय भी किसी भी व्यक्ति को इस विद्या के आधार पर वश में लाया जा सकता है।

संमोहनशास्त्र अर्थात् मोहिनी विद्या का इतिहास लिखना मेरा उद्देश्य नहीं है। अन्य ग्रंथों में यह इतिहास आप पढ़ सकते हैं। इस ग्रंथ में मैंने तीन बातों का जिक्र किया है: मोहिनी विद्या के प्रयोग कैसे करें? मेरे अनुभव की कुछ आश्चर्य-कारक बातें और रोग–निवारण अथवा व्याधिमुक्ति।

मैं पहले भी कह चुका हूँ कि इच्छाशक्ति को बहुत आगे ले जाने पर हम दूसरों के मन पर अधिकार प्रस्थापित करने में सफल हो जाते हैं। इच्छाशक्ति के साथ साथ अपनी आँखों में से भी एक अलौकिक तेज प्रकट होना चाहिए। प्राणा-याम-क्रिया और दर्पण–त्राटक के द्वारा इच्छाशक्ति (Will-power) का असीम विकास हो जाता है और आँखों में से रोशनी बरसने लगती है। ये दो बातें मोहिनी विद्या की आधारशिलाएँ हैं। और इन दो बातों के साथ आत्मविश्वास को पैदा करने पर सफलता अपने आप आ ही जाती है।

फिर भी ऊपर जिनकी चर्चा मैंने की है वे सिद्धियाँ साधक को प्राप्त हो रही हैं या नहीं इस बात को परखने के लिए कुछ प्रारंभिक क्रियाओं का ज्ञान आवश्यक है।

रास्ता चलते समय आगे चलनेवाला व्यक्ति पीछे मूड़कर अपनी ओर देखे इस संकल्प के साथ उसकी गर्दन पर अपनी नजर स्थिर रखिए। लेकिन इस संकल्प में मन शंकित नहीं होना चाहिए। क्यों कि संकल्प भी विचार का एक रूप (Thought form) है और उसका स्थान मन होता है। शंकित होने पर वह विचार–रूप संकल्प नष्ट भ्रष्ट हो जाता है। जिस तरह मैं बता रहा हूँ, अगर आप भी उसी प्रकार यह विधि संपन्न करेंगे तो सामने रास्ता चलनेवाला व्यक्ति जरूर मूड़कर पीछे देखेगा। प्रारंभिक स्थिति में इस विधि का फँस जाना स्वाभाविक है। क्यों कि आपका संकल्प इतना शक्तिशाली नहीं होता और उस संकल्प में आपका भरोसा भी कम रहता है। सफलता के लिए कुछ विधियों का दोहराने की संख्या भी निश्चित होती है। अगर किसी विधि की सफलता के लिए सौबार उसे दोहराने की आवश्यकता है, तो सौबार दोहराने के बाद ही साधक सफलता को हासिल करेगा। दस–बीस–पचास बार प्रयत्न करने पर अगर असफलता के कारण हम हिम्मत हार बैठेंगे तो कैसे चलेगा? श्रम तथा अभ्यास की बढती मात्रा, हमें शीघ्र ही सफलता की ओर ले जाती है। किसी एक साधना में एक बार सफल हो जाने पर, उसी में दूसरे वक्त असफल हो जाना असंभव है।

जब मैं मोहिनी विद्या की साधना कर रहा था तब सैकडों व्यक्तियों पर प्रयोग करने के बावजूद भी असफल रहा किसी भी व्यक्ति को नींद नहीं आती थी। लोग मुझे पागल कहने लगे। अन्त में मैंने हमारे मकानमालिक के बेटे पर प्रयोग किया ओर इस बार मुझे बडी सफलता मिली। वैसे तो इसी लड़के पर मैंने पहले भी कई बार असफल प्रयत्न किये थे। जिस दिन मुझे आंशिक क्यों न हो, सफलता मिली तब मैंने उस बालक को चूम लिया। और उसके बाद हजारों पर मेरी मोहिनी विद्या को सफलता से आजमाया है।

शुरुआत में मैं खिडकी को बन्द कर उसमें कही न कही होनेवाले छोटे से सुराख में से सामनेवाले मकान में दिखाई देनेवाले एकाद व्यक्ति की ओर अपलक

देखा करता था। इस वक्त मेरा संकल्प भी दृढ रहा करता था। इसी वक्त जो भी मैं सोचता था, वह व्यक्ति उसी प्रकार का कार्य करता था। मैं मन में संकल्प करता था कि वह अखबार उठाकर बरामदे में आवे और वह आता था।

एक बार मैं मित्रमंडली के साथ रेल गाडी पर सफर कर रहा था। हमारी सीटों के आगे चार पाँच सीटें छोड़कर सामने एक युवा लड़की बैठी थी। शायद कालिज़ में पढ़नेवाली होगी। मोहिनी विद्या को आजमाने की इच्छा मेरे मन में पैदा हो गई। मैंने मित्रों से कहा, "देखोजी, मैं एक मजेदार बात तुम्हें दिखाता हूँ। वह सामनेवाली लड़की किताब माँगने के लिए तो कुछही क्षणों में मेरे पास आएगी।"

मन को स्थिर कर, मैंने दृढ संकल्प कर दिया और नज़र को उस लड़की की गर्दन पर गढ़ा दिया। दो–तीन मिनटों में ही वह बेचैन दिखाई देने लगी और यहाँ वहाँ देखने लगी। अचानक मेरे पास आकर कहने लगी, "अगर पढ़ने के लिए कुछ हो तो दीजिएगा।" मैंने एक मासिक पत्रिका और उसी दिन का समाचारपत्र उसके हवाले कर दिया।

इस प्रयोग में आगे की सीढी है किसी व्यक्ति को रास्ते में अचानक रोक देना अथवा पीछे बुलवाना। वह नहीं समझ पाता कि वह क्यों रुक रहा है अथवा क्यों पीछे लौट रहा है।

यह क्यों होता है ? इसका वैज्ञानिक स्पष्टीकरण निम्नप्रकार है। साधना के कारण हमारा मन पहले ही निर्विकार–निर्विकल्प बन चुका है। यही अन्तर्मन (Sub-conscious mind) इस अन्तर्मन में जो भी संकल्प (इच्छा) हम करते हैं वह उस अन्य व्यक्ति के अन्तर्मन में जा पैठता है और अन्तर्मन से जागृत मन में प्रवेश कर वही संकल्प उसके द्वारा निर्धारित कार्य उस व्यक्ति से करा लेता है !

दो अंतर्मनों का संबंध प्रस्थापित होने पर विचार–संक्रमण-क्रिया प्रारंभ होती है। बहिर्मन (Conscious mind) में पैदा हुई विचार–लहर अन्य व्यक्ति के अन्तर्मन में प्रवेश नहीं कर पाती; क्यों कि ये दोनों मन अलग अलग सतह पर होते हैं।

इस विद्या की साधना में हम ठीक ढंग से आगे बढ़ रहे हैं या नहीं इसे जाँचने के लिए निम्न प्रयोग ध्यान में रखिए।

अपने कमरे में एकाद छोटे बालक को कुर्सीपर बिठाइए। कमरे में दूसरे लोगों को न आने दीजिए। क्यों की उनकी उपस्थिति में जब हम असफल हो जाते हैं तब हमारा आत्मविश्वास डाँवाडौल हो जाता है। कमरे में बहुत ज्यादह रोशनी की आवश्यकता नहीं है। लेकिन कमरा बिलकुल शांत होना चाहिए। अपने हाथ एक दूसरे में गूंथने के लिए उस बालक से कह दीजिए। उसके हाथों

पर अपना हाथ फेर लीजिए। हाथ फेरते समय उससे कहिए, "अब तेरे हाथ अलग नहीं होंगे। खींचने पर भी एक दूसरे से चिपक कर रहेंगे।" प्रयत्न करने पर भी उसके हाथ जैसे के तैसे एक दूसरे में गूँथे हुए रह गए हों तो आपका प्रयोग सफल रहा ऐसा मान जाइए।

बाद में उसे आँखें मुंद लेने के लिए कहिए और बताइए "तेरी आँखें अब मुंद गई हैं। कोशिश करने पर भी तू आँखें खोल नहीं सकता।"

वह लड़का कोशिश करेगा। लेकिन वह आँखें नहीं खोल सकेगा। क्यों कि आपकी आज्ञा उसके अन्तर्मन में जाकर बहिर्मन में प्रकट होनेके कारण वह अपनी आँखें नहीं खोल सका। आज्ञा देते समय अपनी आवाज गंभीर होनी चाहिए और संकल्प (अथवा इच्छा) पर दृढ़ श्रद्धा होनी चाहिए।

ये प्रयोग असफल होने का कारण यह है कि हमारी ही आज्ञा पर हमारा भरोसा नहीं होता। जब तक यह विश्वास निर्माण नहीं होगा, आपका संकल्प जड नहीं पकडेगा और वह नष्ट हो जाएगा। संकल्प के अभाव से सभी कार्य असफल रहते हैं। अतः उसके लिए उस प्रकार दृढ संकल्प करना चाहिए। "मैं सामनेवाले व्यक्ति के बारेमें यह संकल्प कर रहा हूँ और वह मेरी असीम इच्छाशक्ति (Will-Power) का अंग होने के कारण असफल होना असंभव है।"

दृढ़ संकल्प के आधार पर आप अच्छे हिप्नॉटिस्ट बन सकते हैं।

जो दो विधियाँ मैंने ऊपर बताई हैं उनका अभ्यास कुछ दिन करने के बाद एकाद व्यक्ति को मोह–निद्रित करने का प्रयोग शुरू कीजिए। हिप्नॉटिज्म में सामनेवाली व्यक्ति को निद्रित करना बडी महत्त्वपूर्ण बात है। हमारी रोजमर्रा नींदे और संमोहन–निद्रा इन दोनों में काफी फर्क है। स्वाभाविक ढंग से सोनेवाले व्यक्ति के साथ हमारा कुछ भी संपर्क प्रस्थापित नहीं हो सकता। अगर हम उससे कुछ कहेंगे तो वह उसे कैसे समझ पाएगा? एकाद नुकीली चीज से उसके शरीर को स्पर्श करने पर वह हक्काबक्का जाग उठेगा। मोहनिद्रा में हम उसका जागृत मन (Conscious mind) कुछ प्रक्रिया के द्वारा स्थिर कर देते हैं। लेकिन ऐसे वक्त उसका अन्तर्मन जागृत ही रहता है और हम उसके साथ ही संपर्क प्रस्थापित करने की कोशिश करते हैं।

जागृत मन (Conscious mind) अच्छे बुरे का खयाल करता है। अतः आपकी विचित्र आज्ञाओं का पालन वह नहीं करेगा। मान लीजिए–आपने किसीसे कहा "तुम्हारे सिरपर कौआ बैठा है।" तो वह नहीं मानेगा। लेकिन अन्तर्मन की खूबी यह है कि जो भी आज्ञाएँ आप उसे देंगे, वह उन्हें स्वीकार कर उनके अनुसार बर्ताव करेगा। व्यवहार में हम जिसे भला–बुरा कहते हैं उस पर सोचने की शक्ति उस मन में मौजूद नहीं रहती। जो भी बातें बताई जाएंगी वह मान बैठेगा। किसी मर्द को, "बहनजी, ठीक है न?" इस प्रकार पूछने पर वह नारी

सुलभ हावभाव करने लगेगा। यहाँ जागृत मन पूर्णरूपेण लुप्त हो जाता है और शरीर की सारी कृतियों पर अन्तर्मन का काबू चलता है। और व्यावहारिक भले-बुरे का खयाल न होने का कारण वह जों भी आज्ञा दी है उसके अनुसार वर्ताव करता है।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि संमोहित (=मोह-निद्रित) व्यक्ति प्रयोग करनेवाले व्यक्ति के साथ बातचीत कर सकता है तथा उसके विचारों को ग्रहण कर सकता है। इसी लिए देखनेवाले साधारण लोग इसे नींद के रूप में अस्वीकार कर देते हैं। क्यों कि संमोहित व्यक्ति साधारण जागृत व्यक्ति के समान बोलता है, घुमता-फिरता है। लेकिन फर्क यह है कि संमोहित व्यक्ति की सारी क्रियाएँ अन्तर्मन की आज्ञा से होती हैं। उसका जागृत मन स्थिर अथवा क्रियाहीन रहता है।

तीसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि संमोहनशास्त्र में केवल प्रयोग-कर्ता के मन के साथ संमोहित व्यक्ति के मन का संपर्क प्रस्थापित होता है। संमोहित व्यक्ति केवल प्रयोगकर्ता की वाणी को सुन सकता है। अन्य किसी के द्वारा कही गई बातें उसे सुनाई नहीं देती। उसके लिए बाहरी सृष्टि न के बराबर होती है। उसकी एक मात्र दुनिया प्रयोग-कर्ता की आज्ञा होती है।

चौथी बात यह है कि सभी लोग संमोहित नहीं होते। ऊँचे कोटि के हिप्नॉटिस्ट भी दस में से केवल पाँच-छः व्यक्तियोंपर संमोहन-निद्रा का प्रयोग कर सकते हैं। कारण यह हैं कि कुछ लोगों की इच्छाशक्ति बहुत प्रबल होती है। अतः उनपर प्रयोग करते समय उनकी बलवान इच्छाशक्ति अनजाने में विरोध करने लगती है और यह प्रयोग असफल हो जाता है। दस-पंदरह साल के स्कूली लड़के पुलिस, सैनिक आदि लोग आज्ञापालन के अभ्यस्त होते हैं। अतः उनपर संमोहन का प्रयोग शीघ्र ही सफल होता है। मर्दों की अपेक्षा महिलाओं में अधिक सफलता मिलती है। नीली और भरे रंग की आँखोंवाले लोगों पर सफलतापूर्वक प्रयोग नहीं होता। अगर होगा तो भी बडी कठिनाईसे। प्रयोग-कर्ता के संबंध में अविश्वास अथवा अ-श्रद्धा के कारण भी प्रयोग असफल रहता है। रिश्तेदार नजदीक के मित्र आदि लोगों पर प्रयोग करने के मेरे प्रयत्न असफल रहे। फिर भी एक बात को नहीं भूलना चाहिए। वह यह है कि प्रबल इच्छाशक्ति (Strong Will-power) और दृढ श्रद्धा के आधारपर सफलता अपने आप आ ही जाती है।

इतनी चर्चा के बाद ये सभी प्रयोग-विधियों को किस प्रकार संपन्न करना है इसके बारे में हमें सोचना है। जैसे मैं पहले बता चुका हूँ, प्रारंभिक प्रयोग-विधियों में सफलता प्राप्त होने के बाद ही प्रत्यक्ष संमोहन विधि को प्रारंभ करना चाहिए। बरसों के अनुभव के साथ मैं कहूँगा कि संमोहन प्रयोग-विधि के लिए

शाम का समय बहुत ही योग्य रहता है। जिस कमरे में प्रयोग–विधि का आयोजन करना हो वह बिलकुल साफ़सुथरा हो और वहाँ अनावश्यक चीजों की भीड़ न हो। दीवार पर एकाद देवता की तस्वीर रहे तो ठीक। गर्मी के दिनों धीरे चलनेवाला पंखा भी रहे तो ठीक। अगरबत्तियों का उपयोग अवश्यमेव हो। उसी तरह प्रयोग संपन्न करनेवाले के कान में इत्र की फुरहरियाँ रहने से वातावरण खुशबूदार रहता है। इस शास्त्र के प्रति अविश्वास दिखाने वाले लोग, तथा मित्र और रिश्तेदार भी वहाँ न हों। क्यों कि उनकी अश्रद्धा की विचारलहरें वातावरण में फैल जाती हैं और ऐसे विरोधी वातावरण में प्रयोगविधि की सफलता अनिश्चित हो जाती है।

इस तैयारियों के साथ बेत की बड़ी कुर्सी पर जिस व्यक्ति पर संमोहन का प्रयोग करना हो उसे बिठा देना। बेत की ऐसी विशाल कुर्सी हिप्नॉटिज्म् के लिए अत्यन्त उपयुक्त सिद्ध हो जाती है।

निम्नलिखित वर्णन में पाठकों की सुविधा के लिए प्रयोगकर्ता के नाम की जगह **प्र** तथा जिसे मोहनिद्रित करना हो उसके लिए **क्ष** का प्रयोग किया गया है।

क्ष को कुर्सी में बिठा देने के बाद अपने हाथ और पैरों को बिलकुल ढीला छोडने के लिए कह दीजिए। बाद में १०० से लेकर उलटे क्रमसे १ तक गिनती कहने के लिए उसे सूचित कीजिए। यह उपाय उसका मन एकाग्र करने के लिए बहुत ही उपयुक्त सिद्ध हो चुका है। फिर **प्र** ने उसके सामने सिंह की तरह (याने ठोस आत्मविश्वास के साथ; क्रूरता से नहीं) खडे होना चाहिए। **क्ष** को **प्र** की आँखों की ओर अपलक देखने की आज्ञा हो जाने के बाद **प्र** भी स्थिर नजरों से क्ष की ओर देखने लगेगा। दो मिनट के बाद **प्र** गंभीर आवाज में आज्ञा देगा, "देखो, तुम्हें नींद आ रही है। तुम्हारी आँखें मुंद रही हैं। आंखें भारी भी हो रही हैं। अब तुम जल्द ही गहरी नींद में खो जाओगे। चलो, सो जाओ! सो जाओ। सो जाओ!"

प्र के इन शब्दों के साथ साथ **क्ष** की आँखें सचमुच उनींदी हो जाएगी। आँखों की पुतलियाँ ऊपर चली जाएंगी। संमोहन सफलता के रास्ते पर है। इसका यह निश्चित चिन्ह है। धीरे धीरे उसकी आँखें बंद हो जाएँगी। फिर **प्र** उसे बता देगा, "देख, अब तुम्हें गहरी नींद ने घेर लिया है। देख, तुम अब पीछे की ओर गिर रहे हो।" इन शब्दों को सुनते ही क्ष सचमुच में अपना सारा शरीर पीछे कर देता है। बाद में उस के माथेपर अंगूठा रखकर क्ष को धीरे से पीछे ढकेल देना है। इससे उसकी पीठ का स्पर्श कुर्सी की पीठ को होनेपर वह वैसे ही पड़ा रहेगा।

ये सभी आदेश हमेशा भावात्मक (affirmative या positive) होने कोई भी आदेश या सूचना निषेधात्मक (negative) न हो। क्ष को कभी भी ऐसा सूचित न

किया जाय कि तुम अब जाग्रत न रहोगे; अथवा तुम आँखें न खोल पाओगे। सभी बातें भावात्मक याने (Postitive) हों। क्ष से बताना चाहिए कि तुम्हे अब नींद आ रही है। तुम्हारी आँखें अब मुंदने लगी हैं आदि।

इस वक्त प्र–हमेशा एक गलती कर बैठता है। उसके मन में शक पैदा होता है कि क्ष सचमुच में सो रहा है या नहीं। क्ष से बातें करने में वह हिचकिचाता है। इतना ही नहीं तो कभी कभी डर भी जाता है। उसे लगता है कि क्ष अगर बातें करेगा तो फिर उसकी नींद का क्या हो जाएगा? वास्तव में इस समय क्ष सचमुच संमोहित अवस्था में होता है। लेकिन प्र के मन में हिचकिचाहट और विरोधी विचार-प्रवाह शुरू हो जाता है और वह तुरन्त क्ष के अन्तर्मन तक जा बैठता है। परिणामस्वरूप क्ष जाग उठता है। ऐसी स्थितियों में खुद प्र अपनी शंकित मनोवृत्ति के कारण क्ष की मोहिनी निद्रा को नष्ट कर देता है। अतः क्ष बिलकुल सो गया है इस दृढ़ विश्वास के साथ काम करने पर यह प्रयोग-विधि सफल बन जाती है।

संमोहित निद्रा (Hypnotic sleep) की तीन दशाएँ होती हैं। प्राथमिक, मध्यम, गंभीर इन नामों से हम उन्हें सूचित कर सकते हैं। अँग्रेजी में Primary, Medium and Deep कह सकते हैं। साधारण अध्ययन के बाद पहली दो दशाओं तक किसी भी क्ष को हम ले जा सकते हैं। लेकिन क्ष को तीसरी अति महत्त्वपूर्ण दशा तक ले जाने के लिए दृढ संकल्प, आत्मविश्वास, त्राटक तथा प्राणायाम की दीर्घ साधना आदि बातों की बडी आवश्यकता रहती है। अपनी साधना को इतनी ऊँचाई तक ले जाने में सफल व्यक्ति बहुत ही कम पाए जाते हैं। क्ष को संमोहित करने के पहले प्र कुछ युक्ति से भी काम ले सकता है। किसी लड़के को पहले ही अपने वश में ला कर उससे कह देना, "क्ष के ऊपर प्रयोग करने के पहले मैं तुम्हारे ऊपर एक झूठा प्रयोग करूंगा जिस के दरमियान मेरी आज्ञा से तुम सोने का बहाना करो।" क्ष के सामने यह सब होने के कारण प्र के प्रति उसके मन में बडी गहरी श्रद्धा निर्माण होती है। और फलस्वरूप प्रयोग बडी मात्रा में सफल हो जाता है। इसी प्रकार प्रयोग की सफलता पाने से आपका आत्मविश्वास तथा श्रद्धा बढ़ती जाएगी और आप अनेकानेक क्ष पर प्रयोग कर पाएंगे। कभी कभी सफलता नहीं मिलेगी। लेकिन फिर भी निराश नहीं होना है। हिप्नॉटिज्म के प्रयोग सौ प्रति शत सफल नहीं होते हैं। जो भी सफलता आप पाएंगे उसकी आधारशिला पर आगे बढिए। और आगे की ओर बढते समय श्रद्धा तथा आत्मविश्वास को न छोडिए।

क्ष को संमोहित करने की जो विधि मैंने बताया है वह अत्यन्त प्रभावी व अनुभवसिद्ध है। ऐसे भी बहुत प्र हैं जो अपने क्ष को अन्य रीति से संमोहित करते हैं। कुछ ऐसी रीतिओं का परिचय कर लेंगे।

(१) क्ष को कुर्सी पर बिठाइए। आप उसके सामने खड़े हो जाइए। अपने हाथ में एकाद चमकदार वस्तु (उदा० हीरे की अंगूठी) पकड़कर वह उसे दिखाइए। आपका हाथ उसकी आँखों की सतह से जरा ऊपर हो। उस वस्तु की ओर अपलक देखने को क्ष को सूचित कीजिए। उसकी नजर आपकी चमकदार चीज की ओर स्थिर हो जाने के बाद उसे आज्ञा देना शुरू कीजिए। "देख तुम्हारी आँखें अब उनींदी होती जा रही हैं। तुम्हें नींद आ रही है। जाओ, सो जाओ।"

धीरे धीरे क्ष को संमोहन निद्रा की स्थिति प्राप्त होगी और वह कुर्सीपर पीछे झुक जाएगा।

(२) कुर्सी में बिठाकर क्ष को अपनी आँखें मुंद लेने के लिए कहिए। उसकी भोहों के बिलकुल मध्यबिन्दु के सामने भृकुटिमध्य आपका अंगूठा लाइए और अपना बाया हाथ उसके सिर पर (लेकिन सिर को स्पर्श किए बिना) रखिए। आपकी इच्छिाशक्ति ऊंगलियों के द्वारा क्ष के मस्तिष्कमें प्रवेश करने में यह विधि बहुतही सहायक सिद्ध होती है। इस के बाद आप ऊपर बताए हुए तरीके से क्ष को आज्ञा दीजिए।

(३) क्ष को कुर्सी में बिठाकर आँखें मूँद लेनेकी आज्ञा दीजिए। आँखें मूँदने के बाद सौ से लेकर ९८, ९६ इस तरह सम संख्या की गिनती करने की आज्ञा क्ष को दीजिए। उसकी गिनती के समय बार बार सूचित कीजिए, "देखो ३२ तक आते ही तुम गहरी नींद में खो जाओगे।" और ३२ तक क्ष संमोहित हो जाता है। क्यों कि क्ष का आत्मविश्वास तब तक घटता जाता है और आगे की गिनती करना उसके लिए असंभव हो जाता है।

(४) क्ष को कुर्सी में बिठाकर अपनी आँखों की ओर अपलक देखने की आज्ञा दीजिए। एक दूसरे की आँखें इस प्रकार भिड जाने के बाद आँखें मुद लेने के आज्ञा दीजिए और क्ष की आँखें बन्द होते ही झट कह दीजिए, बताओ, १३ × १२ = कितने होते हैं? यह (या ऐसा दूसरा) गणित आसान होनेके करण वह दिमागी तौर पर उसका हल ढूंढने की कोशिश करता रहेगा। उस क्षण उसे आज्ञा दीजिए, "देखो गणित का हल मिलते ही तुझे नींद आ जाएगी।" और क्ष संमोहित हो जाएगा। इसका कारण यह है कि क्ष का जागृत मन गणित करने में व्यस्त रहने के कारण आपकी आज्ञापर सोचविचार करने के लिए उसे फुर्सत नहीं है। अतः आपके द्वारा सूचित विचारों का प्रक्षेपण क्ष के अंतर्मन तक हो जाता है। फिर तुरन्त अन्तर्मन से वे विचार उसके जागृत मन (या बहिर्मन) तक आ जाते हैं और अन्तर्मन से आई हर आज्ञा का पालन मनुष्य अनजाने में कर ही बैठता है। लेकिन गणित अत्यन्त कठिन न हो। क्यों कि उससे क्ष के मन में उस को हल करने की इच्छा ही नहीं पैदा होगी।

(५) एक स्लेट लीजिए। उसे कमरे में बीचोबीच रखिए। उस स्लेट के मध्य में चवन्नी का एक चमकीला सिक्का रख दीजिए। तीन-चार बालकों को बुलाकर उस स्लेट की चारों ओर बिठा दीजिए और उस चवन्नी की ओर अपलक देखने को कहिए। जब बालक उस चमकीले सिक्के की ओर अपलक देखेंगे तो तब उनसे कह दीजिए, "बच्चो ! तुम्हारी आँखें तो उनींदी हो रही हैं। तुम्हें नींद आ रही है। सो जाओ। जल्दी सो जाओ ! ! " और आपकी आज्ञा के साथ कुछ बालक नींद के कारण धडाम से जमीन पर गिर पड़ेंगे। आप उन्हें ठीक सुलाइए। उनके शरीर को आपके हाथों का स्पर्श होनेसे भी वे नहीं जागेंगे। लेकिन यह प्रयोग-विधि प्रौढ व्यक्तियों के लिए अनुपयुक्त सिद्ध होती है, ऐसा मेरा अपना अनुभव रहा है।

(६) संमोहक (याने Hypnotist) अपनी विद्या में बहुत प्रवीण हो तो निम्न तरीके को भी अपना सकता है। क्ष को हमेशा की तरह कुर्सी में बिठाइए और अपने हाथों से उसकी आँखें बन्द कीजिए। बडे आत्मविश्वास के साथ कह दीजिए, "सो जाओ ! शांति से सो जाओ " क्ष झट संमोहित हो जाता है। जिस क्ष पर आप बार बार प्रयोग कर चुके हैं उसी पर आपकी आज्ञा का शीघ्र परिणाम होगा।

संमोहन शास्त्र में (Mesmerism) हाथों का प्रचलन करने के बारे में बडी गंभीरता से सोचा गया है। कुछ लोगों के अनुसार ऊपर से नीचे याने क्ष के मस्तिष्क से नीचे हाथों का प्रचलन करने से उसके मस्तिष्क का खून, अपनी उंगलियों की चुंबक शक्ति के कारण नीचे बहने लगता है और मस्तिष्क में खून की कमी हो जाने के कारण क्ष संमोहित हो जाता है।

लेकिन इस तरह की क्रिया मेरे लिए उपयुक्त न हो सकी। जिन छः तरीकों का वर्णन मैं कर चुका हूँ, उनके द्वारा अन्तर्मन प्रभावित हो जाता है और ये तरीके मेरे अपने अनुभव के हैं।

मैं पहले भी बता चुका हूँ कि इस शास्त्रपर श्रद्धा न रखनेवाले व्यक्ति को कमरे के अन्दर नहीं लेना चाहिए। उनकी उपस्थिति के कारण प्रयोगकर्ता (Hypnotist) का मन भी अस्थिर हो कर संमोहन प्रक्रिया में विपरीत विचार (Antithoughts) अथवा निषेधात्मक विचार (Negative thoughts) पैदा होते हैं और उनसे क्ष का मन प्रभावित हो जाता है। श्रद्धालु तथा आपका प्रयोग सफल होने की कामना करनेवाले सज्जन मित्रों का जरूर स्वागत कीजिए। उनके अनुकूल विचारों के कारण क्ष का मन प्रयोग की सफलता की दिशा में प्रभावित हो जाता है। इस पूरे विवेचन का सार यही है कि प्र के मन के साथ अन्य मित्रों के मन भी प्रयोग-सिद्धि के लिए उत्सुक हो जाने के कारण इन अनेक मनों की एक बड़ी

प्रभावशाली इच्छाशक्ति (Will-power) निर्माण होती है जो सफलता का कारण वन जाती है।

क्ष को संमोहित (hypnotised) करने के वाद पहले पहल सूचित कीजिए, "तुम गहरी नींद में खो गए हो। अव आधे घंटे तक तुम सोते ही रहोगे। तुम्हें केवल मेरी आवाज सुनाई देगी। इसके वाद भी जव कभी मैं तुम्हें ले कर प्रयोग करूँगा, तुम झट सो जाओगे। अव सो जाओ।"

यह सब सूचित करते समय आपकी आवाज पूर्ण रूपसे गंभीर होनी चाहिए। उसमें नरमी का अंश भी न आने दें। जैसे कोई सेनापति अपने सैनिकों को आज्ञा दे रहा हों, उसी आत्मविश्वास के साथ आपकी वातें हों।

संमोहित दशा और उसके चमत्कार : संमोहन निद्रा की तीन स्थितिआँ हैं: प्रारंभिक, मध्यम और गहरी अथवा तीव्र। प्रारंभिक दशा में क्ष जागृत रहता है लेकिन उसका जागृत मन प्र के जागृत मन के साथ एकरूपता (Enrapport)पा जाता है। इस स्थिति में क्ष प्र की सामान्य सूचनाओं को अमल में लाता है। लेकिन मान लीजिए कि प्र ने कहा, "तुम कुत्ते हो।" तो यह सूचना क्ष बिलकुल नहीं मानेगा। संमोहन निद्रा की द्वितीय स्थिति में क्ष के अंतर्मन की अद्‌भुत शक्ति तथा प्र की आज्ञा पालन करने की उसकी प्रवृत्ति का परिचय होगा।

मध्यम दशा में क्ष के प्रवेश करने पर उसके द्वारा बहुत आश्चर्यकारक बातें कराई जाती हैं। मेरे व्यक्तिगत अनुभव की कुछ ऐसी अद्‌भुत वातों का वर्णन मैं यहाँ करना चाहता हूँ। हिप्नॉटिज्म के वडे वडे ग्रंथों में अनेक अद्‌भुत घटनाओं का वर्णन मिलता है। लेकिन ऐसी घटनाएँ सचमुच घटित हुआ करती हैं या नहीं इसके वारे में साधारण पाठक का मन शंकित हो जाता है। मेरी अपनी भूमिका भी इन पाठकों के समान होने के कारण मैं केवल स्वानुभव कथन करूँगा।

निम्न अद्‌भुत वातों के दरमियान क्ष मध्यम (याने द्वितीय) दशा में संमोहित है यह वात ध्यान में रखिए।

(१) क्ष से कह दिया जाय कि अव केवल तुम पेरे अकेले की आवाज सुन पाओगे। दूसरी आवाजें यहाँ नहीं हैं। फिर उससे प्रश्न किया जाय, "अव तुम शांति तथा खुशियाँ अनुभव कर रहे हो न ?" क्ष का उत्तर "हाँ।" रहेगा। बाद में किसी मित्र को क्ष से प्रश्न पूछने की इजाजत दे दीजिए। उस अन्य व्यक्ति के कुछ भी पूछने पर क्ष कोई उत्तर नहीं देगा। क्योंकि प्र की आवाज के सिवाय अन्य आवाज उसकी कर्णेंद्रियों तक पहुँच ही नहीं पाएगी।

(२) क्ष के किसी एक हाथ को खड़ा कर दीजिए। उससे कह दीजिए, "देखो तुम्हारा हाथ सूखी लकडी के समान वेजान और कड़ा हो गया है। तुम कितनी भी कोशिशें क्यों न करो, यह नीचे नहीं आएगा।" क्ष अपने हाथ को नीचे लाने की कोशिश करेगा। लेकिन वह असफल रहेगा। फिर उसके हाथ पर अपना हाथ फेर

कर कह दीजिए, " देखो, अब तुम्हारे हाथ में मेरी शक्ति प्रवेश कर रही है। अब तुम्हारा हाथ नीचे आ जाएगा " और यह सूचित करने के बाद तुरन्त उसका हाथ नीचे आ जाएगा।

(३) क्ष से कह दीजिए, " अब मैं तुम्हें कुछ विस्कुट खाने दूंगा।" और ऐसा कहने के बाद उसके मुँह में कागज का एक टुकड़ा डालिए। क्ष बडी खुशी के साथ उसे चबाना शुरू करेगा।

(४) क्ष से कह दीजिए, " देखो, अब घडी में आठ बजने पर है और आठ बजने की आवाज सुन कर तुम झट खडे हो जाओगे।" इस सूचना के बाद आप दो मिनट के लिए रुक जाइए। दो मिनट के अंदर क्ष बडा ही बेचैन हो जाएगा। क्योंकि उसे घडी की घंटी की आवाज सुनाई दे रही है। आठ की घंटी बजने की आवाज सून कर वह झट खड़ा हो जाएगा। बाद में उसे कुर्सी में बैठने की आज्ञा दीजिए।

(५) क्ष से कह दीजिए, " देखो, आज कितनी ढंडी है। तुम्हारा सारा शरीर ठंडी से काँप रहा है " और इन शब्दों के साथ क्ष ऐसा काँपने लगेगा कि जैसे शीत लहर चल रही हो। फिर इसके विरुद्ध आज्ञा देकर क्ष को कुर्सी पर बिठाइए।

(६) आप अपनी उँगली मिट्टी के तेल में डुबाइए और थोड़ासा तेल क्ष के हाथ को लगा दीजिए। उससे कहिए, " देखो, मैंने तुम्हारे हाथ पर हीना इत्र लगाया है। खुशबू तो लो।" क्ष अपना हाथ उठा कर नाक तक ले जाएगा। मानो वह हीना सूंघ रहा हो।

(७) निम्न अद्भुत बात को देख कर साधारण आदमी तो दाँतों तले उँगली दबाने लगता है। संमोहित दशा में जाने के बाद क्ष को एक ज़रा कठिन गणित का हल निकालने की आज्ञा दीजिए। (उदा०–२१२×१४) बाद में उसे जगा कर १००, ९९, ९८, इस क्रम से गिनती बोलनें की आज्ञा दीजिए। और बीच में ही उसकी आँखें अपनी उँगलियों से बंद कर उसे " सो जाओ। " इस प्रकार आज्ञा दीजिए। उसे कुर्सी पर ठीक ढंगसे सुलाइए। क्र. ६ में जैसे बताया है वैसे ही वह झट संमोहन निद्रा में खो जाएगा। फिर उससे पूछिए, " उस गणित का उत्तर दो बतालाओ !" क्ष उसका सही हल बताएगा। क्ष के हल बताने के बाद ही कागज पेन्सिल लेकर उसकी जाँच की जाय अगर उसका हल पहले से तैय्यार रखेंगे तो वे विचार क्ष के अन्तर्मन तक पहुच जाएगे।

(८) क्ष के पीछे प्र खड़ा रहेगा। हाथ में एकाद वस्तु (उदा०–कलम) लेगा और पूछेगा, " मेरे हाथ में क्या है ?" क्ष उस वस्तु को पहचानेगा। इस प्रकार तीन–चार चीजें हाथ में उठाकर क्ष से वही प्रश्न पूछा जाएगा। प्रश्न के पूछते समय प्र उस चीज़ को अपनी आँखों के सामने रखेगा और श्रद्धा के साथ मन में कहेगा, " क्ष इसको जरूर पहचानेगा।" इस प्रकार की श्रद्धा के बिना यह प्रयोग असफल रहेगा। संमोहन शास्त्र में जो प्र बहुत ही ऊंची पादान तक पहुँच चुका हो

और जिसने बहुत से क्ष को संमोहित किया हो वही प्र इसमें सफलता पाएगा। संमोहन-विद्या का श्रीगणेश करनेवाला प्र इसमें शायद ही सफलता पाएगा। संमोहन निद्रा की तीसरी स्थिति में यह प्रयोग तो प्र के बाएँ हाथ का खेल हो जाता है !

ऊपर जो भी कुछ लिख चुका हूँ, मेरे खुद के अनुभवों के आधार पर म लिख रहा हूँ। हिप्नॉटिज्म के ग्रंथों में और बहुत मालुमात लिखी गई है। पाठक खुद उसे पढ़ें।

संमोहित निद्रा की स्थिति में क्ष के द्वारा इस प्रकार की अद्‌भुत बातें कैसे हुआ करती हैं ? इस प्रकार के सवाल लोग पूछते हैं। लेकिन इसका स्पष्टीकरण बहुत ही आसान है। क्ष के जागृत मन को स्थिर कराके प्र उसके अन्तर्मन से संबंध प्रस्थापित करता है। अँग्रेजी में उसे He is enrapport with the subject इस प्रकार कहा जाता है। ऐसी स्थितिओं में प्र के द्वारा सूचित बातें तथा प्र की सभी आज्ञाएँ क्ष के अंतर्मन तक जा पहुँचती है। प्र के द्वारा बताई सभी बातों को सत्य मानकर क्ष उनके अनुसार बर्ताव करने लगता है। मोहिनी विद्या में क्ष के अन्तर्मन को कब्जे में लाने की बात सबसे अधिक महत्त्वपूर्व है।

संमोहन निद्रा के बाद की सूचनाएँ–अँग्रेजी में इन्हें Post hypnotic Suggestions कहते हैं। मोहिनी-विद्या के अन्तर्गत यह एक दिव्य, अलौकिक स्थिति है। संमोहन-स्थिति में जिन आज्ञाओं को क्ष पाता है, उन्हें जागृत होने पर किस प्रकार अमल में लाता है यह हम देखेंगे। यह बात बड़ी दिलचस्प है।

कुछ मेरे अपने अनुभव की बातें पेश कर रहा हूँ।

(१) संमोहन की स्थिति में क्ष से कहिए, "देखो, मैं तुझे शीघ्र ही जगानेवाला हूँ। तुम जाग जाओगे, तब कुर्सी पर से दूर होने की बड़ी कोशिश करोगे। लेकिन तुम उठ न पाओगे। जो मैं कह रहा हूँ, जागनेपर तुम्हें याद भी नहीं होगा। चलो उठो।" अब उसे जगाइए। जागने पर वह चारों तरफ देखेगा। कुर्सी को छोड़कर खड़ा रहने की कोशिश करेगा। लेकिन बड़ी कोशिश के बाद भी वह कुर्सी को न छोड सकेगा। मानो वह कुर्सी को चिपक गया हो। अब फिर एक बार उसे संमोहित कर, उससे सूचित कीजिए "अब जागोगे तो कुर्सी छोड़कर खडे हो पाओगे।" और वह जाग जाएगा और कुर्सी को छोड़कर दूर खडा रहेगा।

(२) क्ष से कह दीजिए, "यहाँ आया हुआ "अ" नामक मित्र जरा बाहर गया है। तुम्हारे जागने पर तुम्हें वह दिखाई नहीं देगा। और जो मैं सूचित कर रहा हूँ, जागने पर तुम्हें वह याद नहीं रहेगा। तुम अब जागो।" और इतना कहते ही क्ष जाग उठेगा। फिर उसे उपस्थित भीड में ले जाइए। हर उपस्थित व्यक्ति के सामने क्ष को खड़ा कर "यह कौन ?", "वह कौन ?" इस प्रकार पूछिए। क्ष सभी के नाम बताएगा। फिर बीच में ही उसे उस "अ" नामक मित्र

के सामने खड़ा कर दीजिए और पूछिए, "यह कौन है ?" क्ष कुछ जवाव नहीं दे पाएगा। फिर पूछने पर वह कहेगा कि वहाँ कोई है ही नहीं। "अ" कुछ कहेगा। फिर भी क्ष उसे नहीं समझ पाएगा। क्ष की नजरों में अ वाहर गया है अतः वह अदृश्य है। इसके बाद क्ष को फिर से संमोहित कर सूचित कीजिए कि अव "अ" नामक मित्र अंदर आया है। तुम्हारे जागने पर तुम उसे देख पाओगे। चलो, अब जाग उठो। और जागने पर क्ष को देख पाएगा।

इस प्रयोग से लोग आश्चर्यचकित रह जाते हैं।

(३) संमोहन दशा में पहुँचे क्ष से कह दीजिए, "मैं अव तुम्हें जगानेवाला हूँ। लेकिन जागने पर तुम अपना नाम भूल जाओगे। तुम जाग जाने पर मैं जो कुछ कहता हूँ वह भूल जाओगे। उठो, जगो।" क्ष के जागने के बाद कमरे में इकट्ठे हुए मित्रों के नाम पूछिए। सभी मित्र अपना अपना नाम बताएंगे। फिर बीच में क्ष से उसका खुदका नाम पूछिए। वह शर्मिंदा हो जाएगा। वह अपने नाम को भूल जाएगा। अंग्रेजी में उसे Amnesia कहते हैं। क्ष को फिर संमोहित कर उसे विरुद्ध दिशा में सूचना दे कर जगाइए। अब की बार वह अपना नाम नहीं भूलेगा। किसी पर कोई भयानक संकट गिर जाने के बाद उस व्यक्ति को संमोहित कर "इस बात को तुम दस बरस तक भूल जाओगे।" ऐसी सूचना देकर उसे जगाइए। उस दुःखद घटना को वह उतने समय के लिए भूल जाना कठिन नहीं है।

(४) संमोहित स्थिति में क्ष से कहिए, "मैं तुम्हें अब जगाऊँगा। जागने पर दो मिनट के बाद तुम मेरी अलमारी से तीन नंबर की किताब उठा कर लाओगे और पन्ना ५६ खोल कर मुझे दोगे। जागने पर मेरी सूचना तुम्हारी याद में नहीं रहेगी। चलो तो, अब जाग उठो।" जागने पर क्ष दो मिनट तक बैठा रहेगा और बाद में झट अलमारी के पास जाकर तीन नंबर की किताब को उठाकर आपका बताया हुआ पन्ना खोलकर उसे आपके सुपूर्द करेगा। पूछने पर कि यह तुमने क्या किया ? क्ष के पास कोई जवाब नहीं होगा। शायद "यूँ ही।" इस प्रकार जवाव देगा।

इस प्रकार कई ढंगसे क्ष को सूचनाएँ दी जा सकती हैं। लेकिन ये सभी सूचनाएँ स्वाभाविक हों। "किसी का गला दवाने" की सूचना क्ष अमल में नहीं लाएगा। दूसरे का गला दवाने की तीव्र इच्छा क्ष के मन में पैदा जरूर होगी। लेकिन जागने पर भले बुरे का खयाल करनेवाला उसका जाग्रत मन इस आज्ञापर अमल नहीं करने देगा। मैंने कई वार क्ष को इस प्रकार सूचित किया और देखा कि यह असंभव है।

(५) क्ष को संमोहित कर उसके सामने एक काली टोपी रखिए। उससे कहिए, "मैं तुझे अव जगाऊँगा। जागने पर तुम एक सफेद बिल्ली सामने देखोगे।

बिल्ली बेचारी बहुत गरीब है। उस की पीठ पर प्यार से हाथ फेर लो। चलो, अब जाग उठो।" जागने पर क्ष चारों तरफ देखेगा। टोपी की ओर ध्यान जाते ही गौर से देखने लगेगा। "क्या देख रहे हो ?" ऐसा पूछने पर वह कहेगा, "देखिए न, मेरे सामने एक बिल्ली बैठी है।" और वह अपनी कुर्सी छोड़ कर उस टोपी को सहलाएगा। फिर एक बार उसे संमोहित कर और विरुद्ध दिशा में सूचित कर इस प्रभाव को दूर कीजिए।

(६) क्ष को संमोहित कर, उसे आँखें खोलने की आज्ञा दीजिए। उसे एक कोरा कागज़ दिखाकर कह दीजिए, "देखो, यह राणा प्रताप की तस्वीर है।" कागज़ को देखने के बाद आँखें बन्द करने की आज्ञा दीजिए। उसकी आँखें बंद होने पर उससे कहिए, "मैं तुम्हें अब जगाऊँगा। सामने टेबुल पर पाँच तस्वीरें रखी हैं। उनमें से राणा प्रताप की तस्वीर तुम उठाकर मुझे दोगे।" (प्रयोग विधि को प्रारंभ करने के पहले समान आकार के पाँच कोरे कागज़ तैयार रखिए। राणा प्रतापवाले कागज पर छोटासा निशान लगाइए।) जागने पर क्ष टेबुल के पास जाएगा और उन पाँच कागजों में से राणा प्रतापवाला कागज़ उठाकर आपके पास लाएगा। उस कोरे कागजपर संमोहन के कारण उसे राणा प्रताप का चित्र दिखाई दे रहा है। इसके बाद क्ष को फिरसे संमोहित कर विरुद्ध सूचना देकर जगाइए।

(७) क्ष से कहिए, "अब मैं तुम्हें जगाऊँगा और शरबत का गिलास दूंगा। तुम उसे पी डालना।" उसके जागने पर क्ष के साथ सभी मित्रों को एक एक गिलास पानी दीजिए। उसे लगेगा कि सभी के सभी मित्र शरबत पी रहे हैं और खुद पानी पीते समय उसे शरबत पीनेका मजा आएगा।

ऊपर वर्णित सात प्रयोगविधियाँ मेरी अपनी अनुभवसिद्ध प्रयोगविधियाँ हैं। संमोहन की तीसरी दशा में इससे भी बढ़कर आश्चर्यकारक प्रयोग आप कर सकते हैं। लेकिन प्र और क्ष दोनों की ओर से बडी तैयारी होनी चाहिए। सभी क्ष व्यक्ति संमोहन की तीव्र दशा (deep) तक जा नहीं सकते। कभी कभी संयोग-वश एकाद प्र को ऐसे योग्य क्ष का लाभ होता है और वह प्र भी उसी क्ष को लेकर तीव्रावस्था में बडी सफलता के साथ प्रयोग करता है।

जब क्ष संमोहन की तीसरी स्थिति में प्रवेश करता है तब बहुत ही अद्भुत बातें हम देख सकते हैं। निम्नलिखित वर्णन ऐसी ही अद्भुत बातों का है।

(१) क्ष के पीछे खडे हो कर एकाद किताब खोल कर मन ही मन कुछ पंक्तियाँ पढ़ लीजिए। क्ष से कहिए, "तुम्हारी आँखों के सामने खुली हुई किताब है, उसमें से कुछ पंक्तियाँ पढ़ो।" आपकी नजर जिन जिन पंक्तियों पर दौडेगी, क्ष उन पंक्तियों का ठीक ढंग से उच्चारण करेगा। लंबी कोशिश के बाद भी मैं

इस प्रयोग में सफल न हो सका। इसका कारण यह है कि संमोहन निद्रा की तीसरी प्रगाढ अवस्था तक पहुँचनेवाला क्ष मुझे मिला ही नहीं। जो दो-एक लड़कियाँ मिलीं वे तो तीसरी दशा के आगे बढ चुकती थीं और मैं उनके अन्तर्मन तक मेरा विचार-प्रवाह प्रक्षेपित करने में असफल रहता था। वे लड़कियाँ महान गहरी निद्रा में खो जाती थीं। ऐसे क्ष व्यक्ति को फिर से जागृतावस्था में लाना बड़ा कठिन कार्य होता है। कभी कभी ऐसे क्ष आठ-आठ घण्टे तक सोते रहते हैं। लेकिन एक लड़की ऐसी मिली जो मेरे हाथ में रखी हर चीज को ठीक ठीक पहचान सकती थी। एक दिन मैंने मेरे हाथ में मेरा जूता उठा लिया था, उसे भी उस लड़की ने तुरन्त पहचान लिया।

(२) संमोहन की तीसरी प्रगाढ तीव्रावस्था में पहुँचे क्ष को बहुत दूर की जगह क्या हो रहा है इसका भी ज्ञान होता है। इसे दूर-दृष्टि (Clairvoyance) कहते हैं। इस प्रयोग-विधि को स्पष्ट करने के लिए मेरे जीवन में घटित एक अविस्मरणीय घटना का वर्णन करूँगा : रात के दस बज चुके थे। इतने में कोपरगाँव से कुछ लोग आ पहुँचे। उनके आने की वजह यह थी कि बी. कॉम्. उत्तीर्ण उनका एक युवा रिश्तेदार कहीं गुम हो गया था जिसकी तलाश में वे घूम रहे थे। बहुतसी जगहों पर पूछताछ करने के बाद वे मेरे यहाँ प्रश्न ज्योतिष के सहारे कुछ मार्गदर्शन की आशा रखे आए थे। मोहिनी विद्या का सहारा लेकर इनकी कुछ सहायता कर सकूँ तो ठीक रहेगा, ऐसा सोचकर मैंने एक छोटी बालिका को बुलाया जो मेरे लिए हमेशा क्ष का काम करती थी। उसे संमोहित कर तीसरी प्रगाढ तीव्र स्थिति तक पहुँचाया और मैंने पूछा, " बेटा, इनका आदमी गुमशुदा है, वह अब कहाँ होगा वह जरा बताना।" और झट उस बालिका के मुँहसे निकला, " वह बहुत दूर बंजारों की टोली के साथ है। उनकी घड़ी और गले का सोने का हार उन्होंने छीन लिया है और वे उसे सता रहे हैं।" मैंने पूछा "वह कब तक वापिस लौटेगा ?" तब कुछ क्षणों के बाद उस बालिका ने कहा, " बीस तारीख को उनकी चिठ्ठी आएगी।" इन बातों के साथ उस लड़की को जगा कर मैंने उसे घर भेज दिया। लेकिन मेरे मेहमान तो बहुत नाराज हो गए थे। " मोहिनी विद्या वगैरह सबकुछ ढोंग है। हमारा लड़का बंजारे की टोली में जाएगा ही कैसे ?" वगैरह कहते कहते वे लोग निकल गए। मुझे भी बडा दुःख हुआ। लेकिन क्या आश्चर्य ! बीस तारीख के दिन वे ही लोग एक डाक-कार्ड लेकर मुझे मिलने मेरी बैंक में ही आ पहुँचे। क्षमायाचना के स्वर में कहने लगे, " जैसे आप बता रहे थे, हमारे रिश्तेदार को बंजारे ही लेकर भाग गए थे। उन के चंगुल से छुटकारा पाकर वह अब घर आ रहा है। हम आपसे क्षमा चाहते हैं।" चार-छः रोज के बाद वे लोग और उनका गुमशुदा युवा रिश्तेदार पेढे तथा हार लेकर मेरे घर उपस्थित हुए। मेरी प्रयोग-विधि के दरमियान उस

लड़की ने जो कुछ बताया था वह सब सही निकला। इस प्रकार कह कर उन्होंने मुझे धन्यवाद दिए। फिर भी एक सच बात मेरे पाठकों से मैं नहीं छिपाऊँगा। और वह यही है कि इस प्रयोग के बाद इतना सफल और सौ प्रतिशत सत्य प्रयोग मेरे द्वारा नहीं हुआ। तीव्र संमोहन की स्थिति में मनुष्य की आत्मा स्थूल देह से अलग होती है और उसकी सूक्ष्म देह (Subtle body) कहीं भी संचार कर सकती है। इस प्रयोग का यह मर्म है। संमोहन की इस तीव्रतम दशा में जमीन में गढा गुप्त धन दिखाई देना, कुआ खुदवाने के लिए जमीन के नीचे झरने दिखाई देना, प्राचीन समाजजीवन का ज्ञान होना, ग्रहस्थिति का ज्ञान होना, आदि आदि अद्‌भुत बातों का अनुभव हम कर सकते हैं। अनेक ग्रंथों में इस प्रकार लिखा गया है और प्रमाण के लिए काफी उदाहरण दिए गए हैं। ये सिद्धियों का वर्णन अति अद्‌भुत (fantastic) इस शब्द से कर सकते हैं। इनका आधार एक ही तत्त्व है और वह है: संमोहन की तीव्रतम दशा में क्ष का सूक्ष्म देह (Subtle body) विश्व में कहीं भी संचार कर सकती है। लेकिन इसके बारे में मेरा अनुभव बहुत ही मर्यादित है। ऊपर जिसका वर्णन मैं कर चुका हूँ (बंजारों द्वारा भगाया लड़का) वह सफलता भी संयोग की बात हो सकती है। शायद कुछ लोगों के पास ऐसी सिद्धियाँ हो भी सकती हैं। लेकिन वह तो एक ईश्वरी देन है। अँग्रेजी में हम उसे Divine faculty कह सकते हैं। उन सिद्धियों के होते हुए भी संमोहन की आवश्यकता जरूर रहती है, ऐसी मेरी ठोस राय है।

(३) तीव्रतम संमोहनावस्था में क्ष को बताया जाए : "मैं तुम्हें अब शीघ्र ही जगानेवाला हूँ। जागने पर तुम्हें लगेगा कि तुम अमुक अमुक अ व्यक्ति हो।" इस प्रयोग में अ व्यक्ति का क्ष के साथ काफी गहरा परिचय हो। क्ष के जागने के बाद उसे सचमुच ऐसा प्रतीत होगा कि वही खुद अ है! इंग्लैंड में एक प्र ने ऐसा ही प्रयोग किया था जिसमें अपने क्ष से बताया था कि तुम अमुक अमुक डॉक्टर हो। जागने पर क्ष सचमुच में खुद को वही डॉक्टर समझने लगा और इतना ही नहीं तो उसी डॉक्टर के दवाखाने में जाकर कुर्सी पर बैठ गया? लेकिन और कुछ होने के पहले प्र ने वहां जा कर उसे फिर से संमोहित कर दिया और जगा दिया। लेकिन ऐसे प्रयोग बहुतही थोडी मात्रा में सफल सिद्ध होते हैं। क्यों कि ऐसे प्रयोग अगर हमेशा के लिये सफल होते, तो समाचारपत्रवाले हमेशा कुछ न कुछ लिखते। ऊपर लिखी हकिगत सन १८७० इसवी में कोटस के द्वारा लिखे एक ग्रंथ में से ली गई है। इंग्लैंड की उस घटना के बाद भी कुछ और लोगों ने कोशिशें की होंगी? लेकिन मैंने कुछ भी पढ़ा नहीं है।

(४) क्ष से कह देना, "मैं तुम्हें अब जगाऊँगा। जागने के बाद इस आनेवाले इतवार को सबेरे साडे नौ बजे तुम दर्जन भर केले लेकर आओगे। जागने पर तुम मेरी यह बात भूल जाओगे। चलो! जागो!" आश्चर्य की बात। उसे बताए

हुए दिन नियत समयपर क्ष केले के साथ आपके घर हाजिर रहेगा। (अर्थात् उस मौसममें केले उपलब्ध हों।) मैं इस प्रयोग को अनेक बार कर चुका हूँ। कितना भी महत्त्वपूर्ण काम क्यों न हो, उस दिन नियत समय पर क्ष की बेचैनी बढ़ती जाएगी और जब तक आप के द्वारा बताया काम वह पूर्ण नहीं करेगा उसे चैन नहीं आवेगा। क्ष के अंतर्मन तक पहुँचाया संदेश बडा प्रभावशाली होता है और उसके मन में समय का ज्ञान (Sense of time) बड़ा ही तीव्र होता है। क्ष को दी हुई इस आज्ञा को अमल में लाने का समय दस–पंदरह सालों तक लंबा होने के बावजूद भी क्ष उसकी पूर्ति करता है। (अर्थात् क्ष उस समय तक जीवित हो तो।)

(५) मनुष्य प्राणी अपने जन्म से लेकर अपनी मृत्यु तक हर क्षण कुछ न कुछ देखता है, कुछ न कुछ अनुभव करता है। ये सब सारी अनुभूतियाँ उसके अंतर्मन में ग्रामोफोन के रिकार्ड की तरह अंकित की जाती हैं। और अंतर्मन में ऐसी अनुभूतियों के लाखों लाख स्तर एक के ऊपर एक संचित हो जाते हैं। यही कारण है कि बचपन की सभी बातों को हम याद नहीं कर सकते। ग्रामोफोन के रिकार्ड पर जहाँ वह नुकीली पीन स्पर्श करती है वहाँ की आवाज हम सुन सकते हैं। ठीक उसी प्रकार अंतर्मनरूपी रिकार्ड के जिस स्थान पर ज्ञानरूपी प्रकाश शलाका का स्पर्श होगा, वहाँ संचित (Recorded) अनुभूति का ज्ञान हमें हो जाता है। क्ष को तीव्रतम स्थिति में ले जाने के बाद उसे अपने बचपन की किसी घटना का वर्णन करने को सूचित कीजिए। उसकी ज्ञानरूपी प्रकाश-शलाका अन्तर्मन की उसी जगह को स्पर्श करेगी और क्ष उसे घटना का जिताजागता चित्र आपके सामने खड़ा कर देगा। इतना ही नहीं तो उस दिन घर में भोजन में कौनसी तरकारी थी यह भी बताएगा। अंतर्मन कॅमेरे में लगाई फिल्म के समान संस्कारक्षम है। जिनका हम जागृतावस्था में अनुभव करते हैं उतनी ही बातों को ग्रहण कर अंतर्मन का कार्य समाप्त नहीं होता। अनजाने में देखे दृश्य, सपनों में देखीं अद्भुत बातें, अन्य लोगों के मन में पैदा हुए विचार (Thought forms), कल्पना के द्वारा हवा में खडे किए महल, पूर्वजन्म के अनुभव आदि आदि बातों का अन्तर्मन एक अविनाशी रिकार्ड है। यह बात तो बडी ही आश्चर्यजनक है। फिर भी सत्य है। इसीलिए ही संमोहन की अंतिम स्थिति में भूतकाल में घटित और विस्मृति के अंधेरे में खोई हुई बातों का वर्णन अन्तर्मन हमारे सामने करता है। किसी एक अनपढ़ परिवार के साथ एक विद्यार्थी रहने लगा। वह रात के समय शेक्सपियर, मिल्टन, शेले आदि महाकवियों का काव्य ऊँचे स्वर में याद किया करता था उस परिवार में एंक लड़की थी जिसकी उम्र केवल पाँच–छः साल की थी। वह उन कविताओं को अनजाने में सुन लिया करती थी। लड़की बडी होने के बाद एक दिन एक प्र ने उसे संमोहित किया। उस संमोहन निद्रा की तीव्रतम

स्थिति में वह लड़की उन महाकवियों की कविताएँ विना किसी गल्ती के गाने लगी ! प्र को इससे बड़ा आश्चर्य हुआ क्योंकि लड़की का परिवार तथा खुद वह लड़की पूर्णतया अनपढ़ थे । बाद में बहुत पूछताछ करने पर उसे उस विद्यार्थी की बात का पता चला !

(६) संमोहन की तीव्रतम अवस्था में अंतर्मन को सूचित करने से बुरी आदतों से छुटकारा पाया जाता है । अर्थात् ये बुरी आदतें बहुत पुरानी न हों । शराब पीने की लंबी आदत को हटाना शायद असंभव है । क्योंकि बुरी आदत की आखिरी सीढी पर पहुँचे व्यक्ति के अन्तर्मन को हम भले ही सूचित करें । लेकिन जागृत मन उन आज्ञाओं पर अमल ही करने नहीं देगा । जागृत मन तो शराब का पूर्ण गुलाम बना रहता है । भले-बुरे का खयाल उसके पास बिलकुल नहीं होता । पूरी तरह शराब में (या अन्य आदतों में) फँसे व्यक्ति का बहिर्मन अपना सन्तुलन खो बैठता है । वह Abnormal हो जाता है । अन्तर्मन के द्वारा सूचित बातों पर अमल करने के लिए बहिर्मन (जागृत मन) का normal (सन्तुलित) होना अनिवार्य है । अत: अंतिम सीढी तक पहुँची हुई बुरी आदत तथा शुद्ध पागलपन को दूर करने में संमोहन-शास्त्र असफल रहता है । लेकिन अध्ययन की ओर ध्यान आकर्षित कराना, धूम्रपान से किसी को मुक्त कराना, कुछ अन्य बुरी आदतों को दूर कराना आदि साधारण जनता के लिए उपयुक्त बातों में संमोहन-शास्त्र सफल रहता है । बहिर्मन (जागृत मन) का स्वाभाविक स्वरूप पूर्णतया बदल जाने के पहले संमोहनशास्त्र उपयुक्त होता है, इस सत्य को नहीं भूलना चाहिए ।

मोहिनी-विद्या के सहारे कुछ मानसिक और कुछ शारीरिक व्याधियों को दूर किया जा सकता है । लेकिन जहाँ शल्य-कर्म (ऑपरेशन) की आवश्यकता हो अथवा जो बीमारियाँ अपनी अंतिम सीढी तक पहुँच चुकी हों, उनके लिए इस विद्या से कुछ लाभ होनेवाला नहीं है। पैर की हड्डी टूटने (अस्थिभंग) पर (fracture) यह विद्या काम नहीं आएगी। उसके लिए तो अस्थिवैद्य के पास जाना पडेगा। ड़र मालूम होना, मिर्गी आना, अति आहार, निद्रानाश, ब्लडप्रेशर, सिरदर्द आदि बीमारियों में संमोहन-विद्या उपयुक्त है। इस के लिए क्ष को संमोहन की दूसरी स्थिति में ले जाकर, " तुम्हारी यह व्याधी अब ठीक हो रही है। आज से पंदरह दिनों के अंदर तुम्हें पूर्ण स्वास्थ्य--लाभ होगा। " इस तरह उसे कुछ दिन सूचित करते रहिए। मेरा यह अनुभव रहा है कि सिरदर्द, मिर्गी और निद्रानाश आदि बीमारियों के लिए संमोहन-त्रिद्या काफी उपयुक्त है।

अद्‌भुत बातें दिखा कर लोगों में अपना झूटा बडप्पन दिखाने के लिए मोहिनी विद्या का उपयोग न किया जाय। हाँ, लोगों पर अपना योग्य प्रभाव डालने के लिए, लोगों के मन आकर्षित करने के लिए, अपनी कुछ व्यावहारिक कामनाओं की पूर्ति के लिए, और अच्छे काम के लिए लोगों को अपने वश में

करने के लिए मोहिनि विद्या का अवश्यमेव प्रयोग किया जाय। जब तक आप इस संसार को सत्य मानते हैं और जब तक आप पीडाओं की आग में जल रहे हैं तब तक ही इस विद्या का जीवन में स्थान है। वही इस विद्या का प्रयोजन है। जीवन्मुक्तावस्था में योगी पूर्ण आनंद स्वरूप अथवा परम–आत्म–स्वरूप होने के कारण उसे इस विद्या के प्रति न कुछ लेना है न देना। जिस प्रकार भौंरे पूर्ण विकसित कमलपुष्प की ओर आकर्षित होते हैं, उसी प्रकार जनसाधारण जीवन्मुक्त महात्मा की ओर अनजाने में ही खींचे जाते हैं। यही है उस के तुरियावस्था तक पहुँचे मन की महिमा ! तुरियावस्था प्राप्त मन में वह महात्मा जो भी इच्छाएँ पैदा करेगा, अथवा अपने भक्तों के कल्याण के प्रति जो भी इच्छाएँ प्रकट करेगा वे सभी इच्छा-आकांक्षाएँ सदा सदैव के लिए सफल रहेंगी। क्यों कि तुरियावस्था प्राप्त मन सत्यसंकल्पस्वरूप वन जाता है। फिर भी एक बात अवश्य ध्यान में रखना है। वह यह है कि जीवन्मुक्तावस्था में जो भी सिद्धियाँ दिखाई देती हैं उनकी भी निश्चित सीमाएँ होती हैं। इस के संवंध में बह्मसूत्र में " सृष्टिव्यापारवर्जितम् " यह वचन दिया है। इस सूत्र का अर्थ है कि ईश्वरीय नियति और संकल्प से सृष्टि के जो भी व्यवहार चल रहे हैं, उन में हस्तक्षेप करने का अधिकार किसी को भी नही है। पंचतत्त्वों (पंचमहाभूतों) के स्वरूप में बदल करना किसी भी योगी के लिए संभव नहीं। पानी का घी बना देना, या गोमांस से फूल बना देना आदि अद्भुत बातें प्रत्यक्ष देखी हैं ऐसा दावे के साथ कहने वाले लोग नहीं दिखाई देते। ऐसी परिस्थितिओं में इन अद्भुत बातों को कविकल्पना-विलास, अथवा उस तथाकथित योगी महाराज की महिमा को बढाने की युक्तियाँ हैं ऐसे मानना न्यायोचित होगा।

◘ ◘ ◘

.८.

रोजमर्रा बातों में मोहिनी विद्या

इस ग्रंथ के पिछले अध्याय में मोहिनी विद्या में प्रावीण्य हासिल करने की साधना क्ष को संमोहित करने की विधियाँ, क्ष के द्वारा कराए जानेवाली कुछ अद्‌भुत बातें और उनके तरीके, कुछ साधारण बीमारियों को मोहिनी विद्या के सहारे दूर करने की विधियाँ आदि बातों के बारे में संपूर्ण चर्चा मैं कर चुका हूँ। एकाद व्यक्ति को आप संमोहित (hypnotized) नहीं करेंगे, तो भी रोजमर्रा बातों में इस विद्या का बड़ा उपयोग हो सकता है। साधारण व्यावहारिक जीवन और उसमें मोहिनी विद्या का स्थान यह विषय बड़ा ही रोचक तथा उपयुक्त होने के कारण उसकी चर्चा करना मेरे पाठकों के लिए मैं नितांत आवश्यक समझता हूँ।

(१) मान लीजिए, किसी काम की वजह से आप किसी परिचित के घर चले गए। आपका काम व्यवहार की दृष्टि में मुमकीन होने के बावजूद भी आप सोचते रहेंगी कि यह काम होगा या नहीं ?... होगा या नहीं ?...तो ऐसी दुविधा की मनोऽवस्था में वह काम होना असंभव है। क्योंकि ऐसी परिस्थितिओं में आपके शंकित मन में पैदा हुई दुविधा की विचारधारा आपके मित्र के अन्तर्मन की गहराई तक पहुँच जाएंगी इसमें शक नहीं। आप इस सत्य को हमेशा के लिए ध्यान में रखिए। अपने काम के लिए किसी परिचित से मिलते समय आपको चेहरे पर स्मित हास जरूर हो। ऐसे वक्त आपके मन पर डर तथा शक का हानि होना आपकी प्राणशक्ति (Will Power) को घटाने के समान है। आपकी घटती हुई प्राणशक्ति का स्रोत आपके परिचित के पास संचित हो कर वह आपकी अपेक्षा अधिक शक्तिमान बन जाएगा और आपके काम के संबंध में "ना" कहने में खुदको अधिकाधिक शक्तिशाली पाएगा। जब आप अपने काम की चर्चा करेंगे तब आपकी आँखें ठीक आपके मित्र की आँखों में गढ़ा दीजिए और आप जो भी कुछ कहेंगे, मित्र उसे अवश्यमेव स्वीकार कर लेगा, ऐसा दृढ़ भाव मन में रखिए।

लेकिन जब आप अपनी बातें समाप्त करेंगे और आपका मित्र बातें करने लगेगा तब उसकी आँखों की ओर कभी भी न देखिए। दूसरी ओर देखने की कोशिश कीजिए। जिस प्रकार आप अपनी नजर उसकी आँखों में गढ़ा कर उसे वश में लाने की कोशिश करते हैं, उसी प्रकार जब वह अपनी बातें जारी रखेगा, तब आप उसकी आँखों की ओर देखते रहेंगे तो वही वशीकरण की प्रक्रिया आपके ऊपर अनजाने में जारी रहेगी और आपका कार्य असफल रहेगा। जब आप बातें करेंगे तब, आपके नेत्रोंद्वारा आपकी इच्छाशक्ति (Will Power) उसके मन पर प्रभाव डालने में सफल रहेगी इसमें बिलकुल शक नहीं।

नौकरीधंधे में अपने उच्च अफसरों से इस प्रकार का संघर्ष छिड जाने की संभावना हमेशा रहती है। ऐसे वक्त अपने मन की दुर्बलता को रोक कर, अफसर की आँखों में अपनी आँखें गढ़ा कर, अपने विचारों को उसके सामने रखिए। आपका काम बन ही गया। क्यों कि उसकी ओर देखते देखते आप उसे अंशमात्र (partial) संमोहित (hypnotized) करते हैं। इसके लिए दर्पण-त्राटक साधना आधारशिला के रूप में काम आएगी।

(२) आप किसी परिचित से मिलने जाते हैं अथवा संयोगवश किसी परिचित से आप की मुलाकात हो जाती है। ऐसे वक्त आप केवल अपने बारे में बातें करते रहना अवश्यमेव टाल दीजिए। क्यों कि आप ऐसा करेंगे तो आपके बारे में उसके मन में दिलचस्पी पैदा होने में जरूर अड़चन पैदा होगी। बहुत से लोग ऐसी आदत के गुलाम होते हैं। वे सामनेवाले को बोलने का मौका ही नहीं देंगे। अपनी रामकहानी कहते कहते सुननेवाले के नाकों दम लाएंगे! वे कहेंगे, "हमने नया टी. व्ही. लिया है!", "लड़के को अमेरिका भेज रहे हैं।", "आज चार–पाँच दिन हो गए, पेट मरोड रहा है।" और सामनेवाला सोचता रहेगा, "हे भगवान, यह बला कब टलेगी!" मित्रों! यह मोहिनी विद्या नहीं! केवल आप अपनी गाथा–कथा सुनाते जाएंगे तो सुननेवाला कतई आपके वश में नहीं आएगा! अगर आपकी किसीसे मुलाकात हो जाती है, तो आपको उसके बारेमें अधिक से अधिक पूछते रहना चाहिए; बाजी आपके हाथ में रहेगी! कहिए, "भाई अरुण, हैम्लेट का तुम्हारा पार्ट तो बेहतर रहा! दिल्ली में तो आजकल उसी की चर्चा है! आजकल तुम मिलते नहीं हो, इसलिए मुझे बिलकुल पता ही नहीं था कि तुम इस कला में किस ऊँचाई तक जा पहुँचे हों। कांग्रैटस्!" बस्स! अगले इतवार के खेल के टिकट आप के घर आ ही जाएंगे! कोई कवि मित्र मिले तो उसे अपनी बदहज़मी या डिसैंट्रीसंबंधी तकरार सुनवा कर भगाइए नहीं। वह तो आप का सरासर अविवेक होगा। कहिए, "अरे भाई, विद्रोही, कल ही आपकी एक कविता साप्ताहिक "नई धारा" में पढी। बस! आज की व्यस्तता का इतना सशक्त वर्णन आपही कर सकते हैं! अभिनंदन! क्यों भाई, आप दस साल लगातार लिख रहे

हैं, किताव कब निकलनेवाली है ?" आपके समान रसिक पा कर कौनसा कवि आनन्दविभोर नहीं होगा ? इस अवसर को "सोने में सुहागा" समझकर आपके कविमित्र आपको झट सामने के वढिया उपाहारगृह में घसीटेंगे और मीठा खिलाते खिलाते और दो-चार कविताएँ पढेंगे ! हर व्यक्ति का मन एक ऐसा कोष है जिसमें वह किसी न किसी वस्तु के प्रति एक गर्व के भाव को बडी हिफाज़त के साथ सम्हलता रहता है। उस गर्व के भाव को (अथवा आत्माभिमान, स्वाभिमान की) पहचान कर उसे सहलाना है। जगाना है। बढाना है। इसीका ही नाम वशीकरण है। यही व्यावहारिक मोहिनी विद्या है। वशीकरण के लिए विरोध कुपथ्य है। क्यों कि दो व्यक्तियों के मनों का प्यार तथा सहानुभूति की वेदी पर होने वाले मिलन का नाम है वशीकरण ! अतः साधक को चाहिए कि वह कभी भी, किसी के भी साथ विरोध का वातावरण न खड़ा करे। उसी तरह अपनी बात सिद्ध करने के लिए वितंड़वाद भी वह न करे। इससे कटुता वढ़ती है। और जहाँ कटुता है वहाँ वशीकरण कहाँ ! आप डाक-खाने गए हैं पत्र रजिस्टर करने के लिए लेकिन देर हो गई है और डाक-खाना अब बन्द होने को है। ऐसी स्थिति में रजिस्ट्री वावू से झगड़ा मोल लेने से अथवा उसे कामजोर जैसी गालियाँ देने से काम नहीं बनेगा। अगर सहानुभूति से काम लेंगे तो जरूर काम बन जाएगा। आपको कहना चाहिए कि," ठीक है। यह लेटर इतना अर्जंट नहीं है। कल भी आ सकता हूँ। आपको तो देर नहीं होनी चाहिए। इसके वाद तो आपको पूरा एकाऊंट लगाना पडेगा, बाद में ही घर जा सकेंगे। मेरा एक भाई भी इसी डिपार्टमेंट में काम कर रहा है। बड़ा परेशान है बेचारा ! " बस ! आपने गढ़ जीत लिया ! वह क्लर्क बाबू पूछेंगे, " किस शहर में हैं आपके भाई साव ?" और आपसे जवाब पाने के पहले आपका पत्र अपने कब्जे में ले लेंगे।

(३) रोजमर्रा बातों में वारवार ऐसी घटनाएँ घटती हैं जिनके कारण आपसी कटुता बढ़ती हैं। अगर आप नौकरी करते हैं तो आपका यह अनुभव रहा होगा। ऐसे वक्त निम्न उपाय लाभप्रद सिद्ध होगा। मान लीजिए आपके अफसर आपके ऊपर क्रोधित हो गए हैं। इतना ही नहीं तो आप को पद से हटाने की बात तक सोच रहे हैं। अब ध्यान में रखिए कि क्रुद्ध मनुष्य पशु की सतह पर आ जाता है। वह अपनी सद्‌असद्-विवेक-बुद्धि को खो बैठता है। अतः उसके साथ वितंड़ावाद करने से कौडी भी लाभ नहीं होगा। हानि तो अवश्यमेव होगी। ऐसी स्थिति में वह जो भी कुछ कहेगा, उसे सुन कर शांत रहना चाहिए। " मौनं सर्वार्थसाधनम्।" इस तत्त्व को नहीं भूलने देना चाहिए। क्रोध का प्रकटीकरण द्वैत-भाव को सूचित करता है। अगर आप शांत रहेंगे तो आपके अफसर का क्रोध यों ही शांत होगा। दो-तीन घंटों के बाद योग्य मौका देख कर आप उनके सामने जाकर खडे रहिए। अफसर महोदय भी उस क्रोध के कारण को भुलकर अपने काम

में व्यस्त दिखाई देंगे । बाद में बडे आदर के साथ कहिए, " सर, सवरे मेरी गल्ती के लिए आपने जो भी कुछ कहा वह बिलकुल ठीक है। लेकिन इस तरह का पेचीदा मामला हाथ में लेने का वह मेरा पहला वक्त था। दूसरी बात ऐसी है कि कुल मिलाकर मेरी सर्विस भी कितनी थोडी सी है। आप जैसों के सामने मैं तो एक बच्चा हूँ। आपकी और मेरी बराबरी कैसी होगी ?" ऐसा कौन आदमी है जो अपनी बुद्धिमानी के बारे में कुछ भी स्वाभिमान रखता न हो! उनके चेहरे पर स्मित–हास की आभा दिखाई देगी। बस ! वही तो आपकी सफलता की निशानी है। उसके सहारे आप आगे का रास्ता निष्कंटक कर सकते हैं। कहिए, " सर, इस तरह के पेचीदा मामले आजकल बहुत आया करते हैं और आपको तो कचहरी के समय के बाहर भी काम करना पड़ता है। आप इज़ाजत देंगे तो कल से मैं भी ओवरटाईम करूँगा और आपसे यह काम सिखूँगा।" अथवा कहिए, " सर, इन नए मामलों ने सभी को परेशान कर रखा है। आप तो आजकल घर से आया टैलिफोन भी तुरन्त डिस्कनेक्ट कर देते हैं।" आदमी तो सहानुभूति का प्यासा होता है । इतनी सहानुभूति से अफसरमहोदय की कली खिल उठेगी ! आप तो उनके छोटे सगे भाई बन जाएंगे। उनका क्रोध शांत होने के बाद उसकी जगह पर अपनापा खिल उठेगा। यही सृष्टिनियम है। रात के बाद दिन, दुःख के बाद सुख इसी नियम के अनुसार क्रोध के बाद प्यार का पसीजना स्वाभाविक ही है। अफसर के साथ आपकी जो मुलाकात हो रही है, उसकी आधारशिला इतनी ठोस होने के कारण अपने भविष्य के लिए आप मित्रता का एक मंदिर जरूर खड़ा कर सकते हैं।

धंधा–व्यापार अथवा दुकानदारी में ऐसे संकट कब और कैसे टपक पडते हैं इसका अनुमान लगाना भी असंभव है। क्रोधित ग्राहक की शिकायत को सुन लेने के बाद ही उसका मन शांत होगा और उसका मन शांत होने के बाद ही आप अपनी बातें उसे समझा पाएंगे। और इसके विपरित आप भी क्रोधित हो उठते हैं तो मामला कहाँ तक बढ़ जाएगा यह कहना असंभव है। क्योंकि क्रोध से क्रोध, विरोध से विरोध, द्वेष में से द्वेष ही बढ़ जाता है। दूकानदार और ग्राहक में इसी तरह विरोध बढ़ता जाएगा तो उसका परिणाम ग्राहकों की संख्या घट जाने में, कटुता बढने में कोर्ट–कचहरी की चक्कर में तथा मुक्कदमे बाजी में हो जाएगा इसमें शक नहीं । इस पर रामबाण दवा यह है कि ग्राहक जब तक क्रोध में होगा उसकी सभी बातों को शांति से सुनते रहिए । इतना ही नहीं तो हँसते हुए यह भी सूचित कीजिए कि गलती तो आपकी ही है । उसके आत्माभिमान के भाव को इस तरह सहलाने से उसका क्रोध तनिक भी तो शांत होगा और वह कहने लगेगा, " अजी साब, पहले ही क्यों नहीं बताया ? बेकार का समय बरबाद हो गया।" इस धागे को पकड़कर आप ठीक आगे बढ़ सकते हैं। कहिए, " हमारी यह गलती आपके

बारे में हो गई यह ठीक ही हो गया। अगर दूसरा कोई होता तो हमें गोली से उड़ा देता।" बस इन शब्दों के साथ उस ग्राहक को लगेगा कि वह कितना समझदार, कितना दयालु और इतना मिलनसार हैं। और बढ़कर यह भी शायद कबूल करेगा कि असल में गलती उसी की ही थी।

सौंदर्य तथा पति–स्त्रियों के दो अभिमान-स्थान होते हैं। और सौंदर्य के संबंध में तो स्त्रियाँ हमेशा नाजुक मिजाज़ होती हैं। पति तथा सौंदर्य की प्रशंसा से कौनसी स्त्री अनुकूल नहीं होगी। (यहाँ " अनुकूल होना " शब्दों का प्रयोग पवित्र भावों के साथ किया गया है।) कोई युवती सजधज कर जा रही हो तो कह दीजिए, " बहेनजी, (या भाभीजी,) आज तो तुम देवी जैसी लगती हो। " बस ! वह आपके ऊपर ज़रूर अपनी कृपा बरसाएगी। या कोई छोटी लडकी सजधज कर खेल रही हो तो कहिए, " बेटी, किसी की नजर न लग जाय। इस नई पोशाक में तू कितनी खुबसूरत लग रही है। " इन दो शब्दों के साथ वह आपकी लडकी बनकर आपकी सेवा करेगी। बात यह है कि स्त्रियों की सुन्दरता की प्रशंसा के साधन का उपयोग युवा लड़कों के लिए विपरित सिद्ध होने की संभावना है। अतः सावधान।

अपने बीमार साथी को देखने के लिए आप अस्पताल जाते हैं। वहाँ अपने और उस मित्र की बीमारी के बारे में लंबी लंबी बातें न कीजिए। उससे कहिए, " धीरज बाबू, परसो की अपेक्षा आज तुम्हारी तबियत बहुत अधिक ठीक दिखाई देती है। और डॉक्टर शर्माजी ने भी मुझसे कहा कि और आठ-दस दिनों के अन्दर तुम घर जा सकोगे। " बीमारी से मुक्त होने के उसके विचारों को सहलाने से आपके लिए उसके मन में बड़ा आकर्षण पैदा होगा और हर दिन शाम के वक्त वह आपकी राह देखता रहेगा।

नेपोलियन बोनापार्ट अपनी मधुर वाणी के द्वारा लोगों को अपनी ओर खींचने में बड़ा सिद्धहस्त था। उसके इस गुण को हम शब्द--संमोहन अथवा Speech–hypnotism कह सकते हैं। नेपोलियन अपनी सेना के बहुतसे सैनिक सिपाहियों के नाम याद किया करता था, और संचलन (परेड) के समय उनके सामने खडे होकर वह उन्हे उनके नाम से पुकारता था और उनका कुशल पूछता था। फ्रान्स का सम्राट एक सैनिक का नाम याद करता हे। और समाचार पूछता है यह घटना उस सैनिक के जीवन में अपना एक अनोखा स्थान रखती है और वह सैनिक स्वेच्छासे नेपोलियन का जन्मजन्मान्तर का दास बन जाता है। अपनी विषम परिस्थितिओं में एक दिन नेपोलियन ऐसे सैनिकों के सामने जा खड़ा हुआ जो उसके विरोध में चले गए थे। उनके सामने अपना चौडा सीना खुला करते हुए उसने कहा, " मैं, तुम्हारा सम्राट, यहाँ खड़ा हूँ। अपने सम्राट पर गोली दागने की जिनकी तमन्ना हो, वे अपनी तमन्ना पूरी कर लें। " " बस। तुम्हारा

सम्राट " इन दो शब्दों में ऐसा जादू था कि वे सभी सैनिक नेपोलियन के पक्ष में चले गए।

दैनंदिन व्यावहारिक जीवन में बिना संमोहन के लोगों को आकर्षित करने की अनेकविध रीतियों में से कुछ अनुभवसिद्ध रीतियों की चर्चा मैं कर चुका हूँ। और भी बहुत गुप्त मार्ग और प्रक्रियाएँ हैं; लेकिन इस छोटेसे ग्रंथ में उनकी चर्चा करना असंभव है।

□ □ □

.९.

संमोहन-शास्त्र : कुछ विशेष बातें

संमोहन-शास्त्र में पहला कदम रखनेवाले साधकों को कुछ अनुभवसिद्ध और उपयुक्त बातों से परिचित कराना मैं उचित समझता हूँ।

(१) मेरा अनुभव ऐसा है की सबेरे की अपेक्षा शाम के वक्त संमोहन-प्रयोग में अधिक सफलता मिलती है। जिस कमरे में आप प्रयोग करना चाहते हैं, वहाँ पूर्ण रूप से शांति और गंभीरता का वातावरण रहे। जहाँ इस शास्त्रपर अविश्वास प्रकट करनेवाले तथा मजाकिए लोग इकट्ठे हो गए हो, वहाँ इस विधि में सफलता पाना असंभव है। इसका कारण यह है कि ऐसी परिस्थितियों में प्र का मन एकाग्र नहीं होता। उसका मन उन मजाकिए लोगों के बारे में सोचता रहता है। उसी प्रकार उनके श्रद्धाहिन विचारों से क्ष का मन भी प्रभावित हो जाता है। शादी-ब्याह या और किसी दावत के समय केवल मेजबानों या अन्य मेहमानों के आग्रह का शिकार बनकर संमोहन का प्रयोग न करें। अगर कोई महिला कहती है "भैयाजी, आपका यह भान्जा बड़ा शैतान है। पढ़ाई पर बिलकुल ध्यान नहीं। ज़रा इसपर तो आपकी विद्या को अजमाइए।" तो उस बात को तुरन्त अस्वीकार कर देना चाहिए। जहाँ आप संमोहन-विद्या का प्रयोग करेंगे वहा शोरगुल का अभाव रहे। अगरबत्तियाँ जला कर वातावरण को सुगंधित रखिए। धीमी आवाज-वाला कोई ग्रामोफोन रिकार्ड हो तो भी उसे बनाइए। संमोहन प्रयोग के लिए किसी के घर न जाइए। खुद के कमरे में चलाया प्रयोग अधिक मात्रा में सफल होता है।

(२) संमोहन-शास्त्र की पहली पादानपर खड़ा विद्यार्थी किसी को भी संमोहित नहीं कर पाएगा। और यह स्वाभाविक भी है। आपकी प्रयोग संख्या जितनी अधिक सफलता की संभावना भी उतनी ही अधिक रहेगी। कसरत और इ स विद्या में बड़ा साम्य है। चन्द दिनों की कसरत से कोई भी आदमी पहलवान नहीं बनेगा। दस-पंदरह प्रयत्नों के बाद कोई भी व्यक्ति संमोहन का सफल ज्ञाता

नहीं बन पाएगा। आपका क्ष पहले प्रयत्नों के दरमियान बिलकुल संमोहित नहीं होगा। फिर निराशा के चक्कर में फँस कर प्रयत्न को नहीं छोडना चाहिए। असफल होने के बावजूद भी क्ष से कहते रहना चाहिए, "ठीक है। अगली बार तुम्हें जरूर नींद आएगी।" इससे क्ष के मन में श्रद्धा जाग उठेगी और आपका आत्मविश्वास भी बढता जाएगा। जिस व्यक्ति पर आप सफलतापूर्वक प्रयोग करेंगे, उसे जगाते समय बताइए, "मैं" तुम्हें जगा रहा हूँ। अगले प्रयोग के दरमियान केवल मेरी आज्ञा को सुनकर तुम सो जाओगे। मेरी यह आज्ञा जागने-पर तुम भूल जाओगे। तो चलो, अब जागो!" अगले प्रयोग के दरमियान क्ष को कुर्सी पर बिठाने के बाद उसे सो जाने की आज्ञा देते ही वह झट संमोहित हो जाएगा। क्योंकि उसके अंतर्मन को वैसी आज्ञा पहले ही मिल चुकी है। संमोहन की स्थिति को प्राप्त एक महिला से मैंने कहा, "अगले प्रयोग के दरमियान मैं आपकी हीरे की अंगूठी को स्पर्श करूँगा और आप तुरन्त सो जाएंगी।" और क्या आश्चर्य! दूसरे दिन जब मैंने उसकी हीरे की अंगूठी को स्पर्श किया तो झट वह गहरी नींद में सो गई! संमोहन निद्रा की गहरी स्थिति तक पहुँचे क्ष को जो भी सूचना आप देंगे, उसपर वह दूसरे दिन प्रयोग के वक्त अमल करेगा।

(३) प्र के मन में प्रयोग की सफलता के संबंध में जबतक दृढ विश्वास पैदा नहीं होगा, सफलता तब तक कोसों दूर रहेगी। संमोहन–विधि को प्रत्यक्ष में लाते समय आप क्ष की आँखों की और एकाग्र दृष्टि से देखते हैं, क्ष की आँखें भी उनींदी दिखाई देती हैं, और इसी क्षण आपके मन में शक पैदा होता है, बस! क्ष फिर से जाग उठता है और आपका कार्य असफल सिद्ध होता है। क्ष के संमोहित होने के बाद उसके शरीर को स्पर्श करने से वह जाग उठेगा, ऐसे समझना, क्ष की ओर अश्रद्धा से देखते रहना, बाहर की थोडी-सी आवाज से वह जाग उठेगा, ऐसा सोचना आदि कृतियाँ तथा भाव इस प्रयोग को असफलता की ओर ले जाते हैं। क्ष के संमोहित होने के तुरन्त बाद उसका बाहरी संसार से संपर्क टूट जाता है और वह प्र की आज्ञा का पालन कर लेता है। साधक इस सत्य को न भूलें। पूर्ण संमोहित स्थिति में पहुँच चुके क्ष को जगाने की क्षमता केवल प्र रखता है।

(४) संमोहन का प्रयोग किन व्यक्तियों पर सफल सिद्ध होता है, यह बताना बहुत कठीन बात रही है। पहले जो कुछ मैं बता चुका हूँ उसके अनुसार काले–सावले लोग, १० से १५ साल तक जिनकी उम्र हो ऐसे बालक, महिलाएँ तथा कमजोर मनवाले लोग, इन पर यह प्रयोग सफल सिद्ध होता है। आपके साथ जिनका आना-जाना एक दैनंदिन बात हो गयी हो ऐसे मित्र, आपके परिवार के लोग तथा प्रयोग की सफलता को चुनौती देने की ईर्ष्या से आए लोग, इनके ऊपर

यस प्रयोग का कोई भी असर नहीं होगा। दस प्रयत्नों में से ५–६ प्रयोग सफल होना भी अपने आप में एक महान् घटना है।

(५) क्ष को संमोहित करते वक्त आप अपनी आवाज का जरूर खयाल कीजिए। क्ष को आज्ञा देते समय आपकी आवाज अत्यन्त गंभीर तथा आत्मविश्वास से परिपूर्ण हो। जो बातें आप क्ष को सूचित कर रहे हैं, उनका सही पालन क्ष करेगा ही इस दृढ श्रद्धा से आपका मन व्याप्त होना चाहिए। आपकी आज्ञा के संबंध में आप शंकित हो जाएंगे तो आपके मूल विचार नष्ट होकर उनके स्थान पर शंका विराजमान होगी, और आगे चलकर प्र के अन्तर्मन में यही शंका बडी गहराई में पैठ जाएगी और आपका कार्य असफल रहेगा।

"मेरे लाल, जरा सो जा ना।" इस तरह बकरी की आवाज में सूचित करना संमोहन–विद्या का घोर अपमान है।

"बेटा, अब सो जाओ। तुम्हारी आँखें उनींदी हो ही चुकी] हैं। कोशिश करने से भी वे नहीं खुलेंगी। जाओ, सो जाओ।" इस तरह गंभीर और अधिकार क साथ कहते रहने पर वह प्रभावशाली विचार धारा क्ष के अन्तर्मन के अंदर प्रविष्ट होकर क्ष संमोहन–निद्रा के आधीन हो जाएगा। निषेधात्मक ढंग से क्ष को सूचित न कीजिए।

"बेटा, अब तुम नहीं जाग सकोगे।" इस प्रकार न कह कर "बेटा, तुम अब गहरी नींद में खो गए हो।" ऐसा कहना चाहिए। क्ष से बातें करते समय आपकी आवाज में गांभीर्य होना चाहिए और आपके हर शब्द से अधिकार का भाव प्रकट होते रहना चाहिए। फिर भी जिसे हम कठोरता कहते हैं, उसे अवश्यमेव टालना चाहिए। क्यों कि प्रयोग-विधि के प्रारंभ में क्ष सावधान रहा करता है और उसका मन आपकी कठोरता तथा आपके अधिनायक वाद का विरोध करने लगता है। इससे प्र के बारेमें क्ष के मन में घृणा का भाव भी पैदा हो जाएगा और प्र और क्ष के मन एक सूत्र में बांधने की विधि को हानि पहुँचेगी। गंभीरता के साथ ही आपकी आवाज में मधुरता तथा सहानुभूति का भाव अवश्यमेव रहे।

(६) किसी महिला को क्ष के रूप में लेकर प्रयोग करना हो तो एकान्त में इस को कभी भी न करें। वैसे तो कोई भी स्त्री संमोहन–विद्या के प्रयोग के लिए एकांत में प्र के सामने नहीं बैठेगी। कोई स्त्री तैयार भी होगी तो आप उसका विरोध करें। क्यों कि आग से घी पिघल जाने की बात आप जानते ही हैं। स्त्री के दर्शन से ही लोगों के मन कुविचारों का शिकार बन जाने की बडी भारी संभावना रहती है। फिर उसमें एकांत ! संमोहित स्त्री को एकांत में पाकर प्र का मन भटक जाने की संभावना होती है। फिर दूसरी भी एक अड़चन है : अकेले प्र के बारे में भी उस स्त्री के मन में भय का भाव पैदा होगा जिसके कारण आपकी प्रड्योग–विधि असफल रहेगी। लेकिन किसी बुजुर्ग और सज्जन प्र के सामने बैठने

के लिए स्त्री राजी हो सकती है। अनेक प्रयोग–विधियों के बाद क्ष स्त्री के मन में प्र के प्रति एक विशिष्ट आकर्षण जरूर पैदा होता है। वह प्र से बारबार मिलती भी है। मेरा यह अनुभव रहा है। लेकिन इस आकर्षण में वासना का अंश भी मुझे दिखाई नहीं दिया। इस आकर्षण का अर्थ है: दो मनोभूमिकाओं में संपर्क प्रस्थापित करनेवाले किसी नए सूत्र का अस्तित्व ! इस के बारें में एकाद व्यक्तिगत अनुभव का कथन करूँ तो अनुचित नहीं होगा। मेरे ही गांव में रहनेवाले एक सरकारी अफसर की १५–१६ वर्षीया लड़की को क्ष बना कर मैं बहुत प्रयोग विधियाँ करता था। उम्र में तो मैं उसके दादाजी के समान था। लेकिन वह लड़की मेरे व्यक्तित्व की ओर इस प्रकार आकर्षित हो गई कि दिनभर मेरे परिवार के साथ रहने लगी। मेरे सटरफटर कामों को बडे अपनापे के साथ निबराती थी। जिस प्रकार कोई शराबी शराब पीने का समय नज़दीक आते आते बेचैन हो जाता है, उसी तरह यह लड़की शाम को संमोहन–विधि संपन्न करने का समय नज़दीक आने पर बडी बेचैन हो जाती थी।

एक और भी उदाहरण आपके सामने रखता हूँ। एक बहुत ही ऊँचे घराने की महिला पर मैं संमोहन–विधि किया करता था। दिनभर में कम से कम एक बार वह मुझसे न मिले तो उसे चैन नहीं आता था। एकाद दिन मैं उनके घर न भी जाऊँ तो वह दूसरे दिन कार में बैठकर मेरे घर पर हाज़िर! और कभी कभी तो वह सीधे मेरे बेंक में आया करती थी। और यह भी असफल रहा तो नौकर के द्वारा चिट्ठी भेज कर सीधे भोजन का आमंत्रण दिया करती थी ! उसकी इच्छा को टालना मेरे लिए मुश्किल हो जाता था। मेरे पाठकों को मैं बताना चाहता हूँ कि इन दो स्त्रियों में से किसी के भी मन में विषयवासना अंश तक मौजूद न थी। हम तीनों भी व्यक्तियों के मन व्यवहार की चौकट के बाहर निकल कर एक बहुत ही ऊँचे स्तर पर जा पहुँचे थे।

(७) पागलपन से पीडित लोगों के बारे में संमोहन–शास्त्र असफल रहता है। यह केवल मेरे अकेले का अनुभव नहीं है। अन्य सभी प्र भी इस सत्य को स्वीकार करते हैं। पागल व्यक्ति का जागृत मन वि-घटित होता है। मन की विविध शाखाओं को बाँधकर रखनेवाला सूत्र ही खंडित हो जाता है। अत: ऐसी मानसिक पृष्ठभूमि संस्कारों के बीज को ग्रहण करने की क्षमता को रख ही नहीं सकती। अत: प्र के द्वारा सूचित बातों पर अमल करने का कार्य उसका जागृत मन नहीं कर सकता। कुछ लोग ऐसे बदनसीब पागलों को लेकर मेरे पास आया करते थे। शुरुआत में मैं उनके ऊपर संमोहन-विधि को आजमाने की कोशिशें किया करता था। लेकिन मेरी असफलता से मैं खुद लोगों की अश्रद्धा का शिकार बन गया ! पागलों का पागलपन दूर करने की कुछ गुप्त विधियों को मैं जानता हूँ। लेकिन उनकी सफलता आजमाने के लिए काफी बार उनको प्रयुक्त करते रहना चाहिए। अतः

इस समय उनकी चर्चा करना मैं अयोग्य समझता हूँ। तपेदिक (टी. बी.), महारोग तथा कॅन्सर आदि असाध्य व्याधियों से पीडित मरीजों को व्याधिमुक्त करने में संमोहन–शास्त्र उपयुक्त नहीं है। ऐसे मरीज दवाइयाँ लेते रहें और श्रद्धा से जीवन बिताते रहें। एक और बात की ओर मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। ऐसी असाध्य व्याधियों से ग्रस्त मेरीजों पर प्रयोग करने से प्र को भी उन व्याधियों से कुछ हदतक तकलीफ़ सहन करनी पडती है। अस्थमे से (दमा) पीडित एक मरीज पर संमोहन-विधि को आजमाते समय खुद मुझे अस्थमे की पीड़ा महसूस होने लगी। अतः मेरी राय है कि असाध्य व्याधियों से पीडित व्यक्तियों पर संमोहन-विद्या की आजमाइश न की जाय। अधकपाली सिरदर्द, हमेशा डर का अनुभव, निराशा, बद्धकोष्ठ, निद्रानाश आदि मानसिक व्याधियों में संमोहन-विद्या काफी सफल रहती है।

यह व्याधिमुक्तता टीकाऊ (परमानॅंट) होती है। मेरा यह अनुभव रहा है। मिरगी (Fits) के ऊपर संमोहन-विद्या एक बडी ही उपयुक्त दवा है। एक बार मैं नासिक गया था। वहाँ मेरे एक परिचित का बारह वर्षीय लड़का मिरगी (Fits) के कारण बड़ा परेशान था। कभी कभी दिनभर में १०-१२ समय वह मिरगी से गिर पड़ता था। उसपर दया आकर मैंने अपनी विद्या उसपर आजमाने का निश्चय किया। तो क्या आश्चर्य ! उस कुर्सी को लताड़कर वह पीछे गिर पडा और पूर्ण रूप से संमोहित हो गया। मैं उसके अंतर्मन से संपर्क प्रस्थापित कर उसे आज्ञा देने लगा, " देख बेटा, मैं तुझे अब जगाऊँगा। इस के आगे तुझे मिरगी से कोई तकलीफ़ नहीं होगी। कल से तू स्कूल जाना शुरू कर।" घण्टे के बाद वह लड़का जाग उठा। उसके चेहरे पर अनोखे भाव प्रकट होने लगे। आगे चलकर दो साल तक मैं उस लड़के की खबर लेता रहता था। उस समय उसे मिरगी से कोई तकलीफ नहीं थी। आगे क्या हुआ यह समझने के लिए उस परिवार के साथ संपर्क प्रस्थापित करने का कोई साधन उपलब्ध नहीं है।

(८) एक समय पर केवल एक ही प्रयोग को हाथ में लेना अच्छा है। एक ही बैठक के दरमियान अनेक क्ष ले कर लगातार प्रयोग करने से कुछ प्रयोग जरूर असफल रहते हैं। और प्र हँसी मजाक का विषय बन जाता है। प्रयोग के बारे में जिस गंभीर दृष्टि की आवश्यकता होती है उसे क्षति पहुँचती है और इस विद्या का वह घोर अपमान सिद्ध होता है।

(९) क्ष को संमोहन-निद्रा में से जगाने के पहले, उससे ऐसी बातें सूचित करते हैं जो उसे उस स्थिति में से जागने के बाद करनी होती हैं। इन्हें संमोहन-पश्चात्–सूचनाएँ अथवा Post-hypnotic Suggestions कहते हैं। इन सूचित बातों के अनुसार क्ष के द्वारा सभी बातें हो जाने के बाद तुरन्त (instant) क्ष को फिर से संमोहित कर उसके अन्तर्मन से उन सूचनाओं को दूर करना चाहिए। प्र

इसके संबंध में कोई गलती न करे। नहीं तो जागृतावस्था में भी क्ष वे ही बातें करता रहेगा और जिससे बडी कठीन समस्या पैदा होगी। एक बार मैंने एक लड़के को संमोहित कर बताया, " जागने पर तुझे बहुत भूख लगेगी। " जागने पर सचमुच उसके पेट में चूहे दौडने लगे ! बाद में मैं उस आज्ञा को वापिस लेना भूल गया। आश्चर्य यह है कि दिनभर वह लडका कुछ न कुछ खाता रहा और उसे बदहज़मी से परेशानी उठानी पडी। इस बात का पता लगने पर तुरन्त मैंने उसे संमोहित किया और भूख के संबंधी सूचना को वापिस ले लिया। अर्थात् कुछ दिनों के बाद ऐसी सूचनाओं का प्रभाव अपने आप नष्ट हो जाता है।

(१०) कुछ लोगों का कहना है कि बारबार संमोहन-विधि को करते रहने से प्र की संमोहनसंबंधी शक्ति घटती जाती है। यह सरासर गलतफहमी है। क्योंकि प्रयोगों की बढ़ती संख्या के साथ प्र की शक्ति, उसका ज्ञान, उसका आत्मविश्वास आदि बातें बढ़ती जाएंगी। हर दिन कसरत करनेवाले मनुष्य का शरीर शक्तिशाली बन जाता है। उससे कमजोरी कैसे आएगी ? संमोहन–विद्या के बारे में यही नियम प्रयुक्त है। लेकिन एक ही बैठक के दरमियान उनकों प्रयागों की मालिका शुरू करने से कुछ प्रयोग अवश्य असफल रहेंगे। यह मेरा व्यक्तिगत अनुभव रहा है।

(११) संमोहित व्यक्ति याने क्ष के साथ प्र का वर्ताव बडी जिम्मेदारी तथा सहानुभूति का होना चाहिए। संमोहन–निद्रा के दरमियान क्ष व्यक्ति प्र के इशारों पर नाचनेवाली कठपुतली ही बन जाता है। वह व्यावहारिक विवेक को खो बैठता है। ऐसी परिस्थितिओं में प्र ही केवल उसका एकमात्र सहारा रह जाता है। अतः ऐसी बातें क्ष से न कराई जाय जो आगे चलकर हँसीमजाक का विषय बन सकती हैं। ऐसी बातों को प्र अवश्यमेव टाल दे। क्ष भी एक आदरणीय व्यक्ति है और किसी उच्च कार्य के लिए आपके द्वारा संमोहित हो रहा है, इस बात को नहीं भूलना है। कुछ प्र जिनमें गंभीरता का अभाव होता है, अपने क्ष से बताते हैं, " तुम अब कुत्ते बन गए हो।" या " तुम अब छोटे बालक बन गए हो। अब घुटनों के बल चलो। " इन बचकानी बातों से उपस्थित मित्रों का मनोरंजन जरूर होगा। लेकिन आगे चलकर कुछ लोग क्ष की हँसी भी उड़ा सकते हैं।

(१२) संमोहन–विधि के दरमियान प्र काले या नीले रंग की पोशाक पहने। सफलता पाने में वह सहायक सिद्ध होती है।

(१३) एक ही समय बडी संख्या में एकत्रित जनसमूह को संमोहित-निद्रा की स्थिति तक ले जाने की उच्च कोटी की विद्या को सामूहिक संमोहन (Mass Hypnotism) कहते हैं। मुगल सम्राट के जहांगिर के समय इस विद्या में सिद्धहस्त प्र ने सामूहिक संमोहन के द्वारा एक खाली तंबू में से ऊंट, गायें, बकरियाँ आदि जानवरों को बाहर निकलते हुए दिखाया था। इंडियन रोप ट्रिक (डोरी का

भारतीय जादू) करनेवाले प्राचीन भारतीय जादूगर इस सामूहिक संमोहन–विद्या के सहारे ही उस जादू को सफल बनाते थे।

करीब बीस साल पहले बम्बई में एक प्र आया था। उसने चौपाटी पर अनेक अद्भुत प्रयोग कर दिखाए। उनमें से एक प्रयोग से संबंधित मेरा अनुभव मैं कथन करूंगा: उस प्र ने कहां एकत्रित सभी लोगों से कहा, "आप अपने दोनों हाथ ऊपर उठाइए।" एकत्रित लोगों के द्वारा उस प्रकार हाथ ऊपर उठाने पर उसने यहाँ वहाँ देख लिया और कहा, "अब बडी कोशिश करने के बाद भी आपके हाथ नीचे नहीं आएंगे।" सभी ने बहुत कोशिश की, लेकिन व्यर्थ। उसने अपनी इस सूचना को वापिस ले लिया तो हमारे हाथ झट नीचे आ गए। सामूहिक संमोहन विद्या (Mass Hypnotism) के प्रयोग करने का मौका मुझे न मिलने के कारण इस विद्या के बारे में मैं ज्यादह कुछ भी बता नहीं सकता। ऊपर जिस अनुभव का वर्णन मैंने किया है उसके आधार पर सामूहिक संमोहन विद्या एक सत्य घटना है इतना हम मान सकते हैं। आप इसके लिए निम्न प्रकार एक प्रयोग कर सकते हैं: आस-पास के दस–पाँच बच्चों को इकठ्ठे कीजिए। आपके सामने अर्धवर्तुलाकार उन्हें बिठा दीजिए। उनसे कह देना, "बच्चों, अब मेरी आँखों की ओर देखो। नजरों को न हिलाओ।" कुछ समय के बाद उनमें से कुछ बच्चे संमोहित हो कर झट जमीनपर गिर पडेंगे। इसका मतलब है कि ये बच्चे संमोहन के लिए योग्य हैं। मास हिप्नॉटिज्म विद्या के लिए कुछ न कुछ विशेष बात आवश्यक है जो उच्च कोटी के गुरु के सिवाय हासिल नहीं होगी। इस कुंजी को पाने के लिए मैं रास्ते के मदारी से लेकर बडे बडे साधु-महात्माओं से मिलने लगा। लेकिन मैं उसका ज्ञान अभी तक नहीं पा सका। समय की गति में देश-विदेश में सैंकडो बातें लुप्त हो चुकी हैं। सामूहिक संमोहन विद्या उन चीजों में से एक हो सकती है। इस विद्या का प्रयोग करनेवाले प्र के दर्शन आजकल कहीं भी नहीं होते, यह कितनी दुख की बात है।

◻ ◻ ◻

.१०.

स्व-संमोहन

(Auto–Hypnotism)

अब तक संमोहन के बारे में पूरा विवेचन मैं कर चुका हूँ। उस विवेचन में दो व्यक्ति आवश्यक बताएँ हैं। एक है संमोहन करनेवाला प्र–जिसे Operator या निदेशक या प्रयोगकर्ता कह सकते हैं। दूसरा व्यक्ति है संमोहित (hypnotised) होनेवाला क्ष–जिसे Subject या माध्यम कह सकते हैं। प्र व्यक्ति क्ष को संमोहित कर उस स्थिति में उससे कुछ बातें सूचित कर, उनके द्वारा क्ष का कल्याण कर सकता है। लेकिन खुद के लाभ के लिए इस विद्या का कुछ उपयोग होता है या नहीं इसकी चर्चा करना मैं उचित समझता हूँ। जो सवाल मैंने खड़ा किया है उसका जवाब "हाँ" में है। यहाँ आप एक सवाल जरूर पूछ सकते हैं: संमोहन निद्रा में क्ष का जागृत मन (बहिर्मन) लुप्त हो जाता है। प्र व्यक्ति क्ष के अन्तर्मन को कुछ सूचनाएँ देकर कुछ बातें कर लेता है। खुद के ऊपर प्रयोग करने से खुदका वहिर्मन (जागृत मन लुप्त हो जाएगा। फिर खुद के अन्तर्मन को सूचना देने का काम कौन (या कौनसा मन) करेगा? आपका यह सवाल बिलकुल दुरुस्त है। उसका जवाब देने के पहले हम खुद संमोहित कैसे हो सकते हैं इसकी चर्चा करना मैं उचित समझता हूँ।

जिस प्रकार हम अन्य व्यक्ति को संमोहित करते हैं, उसी तरह खुद भी संमोहित हो सकते हैं। अंग्रेजी में इस स्थिति को Trance (ट्रान्स) कहते हैं। ट्रान्स मानवी मन की अति उच्च कोटि की स्थिति हैं। प्राचीन काल में योगी ट्रान्स में प्रवेश कर, भविष्य में होनेवाली घटनाओं का वर्णन कर सकते थे। इस आवस्था में जाने का अर्थ है "समाधि" की स्थिति को प्राप्त करना। जो साधक प्राणायाम और त्राटकादि क्रियाओं में सिद्धहस्त हो चुके हैं, उनके लिए इस दशा में प्रवेश करने का काम बहुत ही आसान सिद्ध होगा। स्व–संमोहन (Auto-Hypnotism) को सफल बनाने के कुछ प्रमाणित तरीकों (Methods) का वर्णन करना उचित रहेगा।

(१) शाम के वक्त अपने कमरे में दीवार के पास आसनस्थ होकर अपनी आँखें मुंद लीजिए। शरीर को शिथिल कीजिए। दो-चार बार दीर्घश्वसन कीजिए। इससे मन बिलकुल शांत हो जाएगा। मन में उद्‌भावित होनेवाले विचार रुक जाएंगे। (या उनकी मात्रा घट जाएगी) विचार और वासना यही जागृत मन का स्वरूप है। विचार घटने पर वासनाएँ भी घटती जाएंगी। विचारों और वासनाओं के अभाव से जागृत मन लुप्त हो जाएगा। इस के बाद एक बहुत ही शक्तिमान विचार को मन में उद्‌भावित कीजिए। जैसे : " मुझे अब नींद आ रही है। मेरी आँखें उनींदी बन चुकी हैं। अब मैं गहरी नींद में खो जाऊँगा।" अन्य विचारों के प्रवाहों को रोक कर केवल निद्रा संबंधित विचार मन में रखने से वही एकमात्र अकेला विचार बड़ा प्रभावशाली बन जाएगा। इतना विशाल और प्रभावशाली कि अन्त में वह आपके अन्तर्मन में प्रवेश करेगा! और अन्तर्मन जिस सूचना या आज्ञा को पा लेता है उसे अमल में लाता है। अतः ऐसी स्थिति में आप सचमुच सो जाएंगे। फिर भी न भूलिए कि यह स्वाभाविक निद्रा नहीं है; है केवल संमोहन-निद्रा। इस निद्रा की स्थिति में आप खुद की भी याद को भूल जाएंगे। इस दशा में आपकी देह का स्वामी बनेगा आपका अन्तर्मन! संमोहन-निद्रा की स्थिति शुरू होने के कुछ क्षण पहले अपने अंतर्मन को " मुझे एक घंटे के बाद जागना है।" इस प्रकार भी सूचित कीजिए। नहीं तो इस संमोहन निद्रा का परिवर्तन हमेशा की स्वाभाविक निद्रा में होगा और जब तक नींद पूर्ण नहीं होगी, आप नहीं जाग उठेंगे।

(२) रात के समय साधक शवासन की स्थिति में सो जाय। शवासन न आने पर कम-से-कम अपने सारे शरीर को शिथिल रखे। आँखें मूंद ले। मन में कल्पना करते रहे-" इस विद्या में सिद्धहस्त प्र मेरे सामने खड़ा है। वह मेरे ऊपर संमोहन का प्रयोग कर रहा है। " अगर एकाद प्र वहाँ होता, तो जिस प्रकार वह सो जाने की आज्ञा दे देता, उसी प्रकार साधक अपने आप को सूचित करे। साधक धीरे धीरे गहरी नींद में खो जाएगा। पूर्ण श्रद्धा से काम लेने पर इस स्व-संमोहन में सफलता मिलती है। यही उसका मर्म है।

(३) दिनभर में कभी भी मन एकाग्र (स्थिर) कीजिए। उस दशा में सोचते रहिए : " मैं रात के नौ बजे संमोहन-निद्रा की स्थिति में प्रवेश करूँगा।" दो-चार बार इस विचार को अपने मन में लाने के बाद अपने मन को पूर्व स्थिति में ले आइए। फिर इस सूचना को भूल जाइए। रात के ठीक नौ बजे आप जंभाइयाँ देने लगेंगे और लेटना चाहेंगे। कुछ ही क्षण के बाद आप संमोहन-निद्रा की स्थिति तक चले जाएंगे।

(४) दर्पण-त्राटक के लिए आईने के सामने बैठ जाइए। आइने में दिखाई देनेवाला प्रतिबिंब नष्ट होने पर अपनी आँखें मूंद लीजिए और तुरन्त अपने चेहरे

का प्रतिबिंब मनःश्चक्षु के सामने लाने की कोशिश कीजिए। यह दूसरा प्रतिबिंब भी नष्ट होने पर आप संमोहन निद्रा की स्थिति में प्रवेश करने लगेंगे। प्रतिबिंब को दो तरह से देखने की विधि को पाँच-छः बार करते रहना चाहिए।

(५) शांत लेटे रहिए। एकाद छोटेसे मंत्र को जपते रहिए। शुरुआत में लगातार (शीघ्र गति से) जप कीजिए। कुछ समय के बाद उसकी गति को रोक दीजिए। मान लीजिए आप " हरि: ॐ " इस मंत्र को एक मिनट में ८० बार दोहराते हैं। कुछ समय बाद जप की गति को ४०, २०, १०, तक ले आइए। इसका मतलब यह है कि मंत्र के दो उच्चारणों के दरमियान का समय धीरे धीरे बढ़ाते जाइए। इस " मध्यकाल " में मन में कोई भी विचार नहीं उद्भावित होता। मन निर्विचार रहता है। केवल " मैं " का ज्ञान रह जाता है। इस स्थिति को ही तुरियावस्था, अन्तर्मन आदि कहते हैं। इस स्थिति में प्रवेश करने का मतलब है जागृत (बहिर्) मन का लोप होकर संमोहित हो जाना। यह तरीका बड़ा ही आसान, लेकिन उतना ही प्रभावी रहा है। मेरा यह व्यक्तिगत अनुभव मैं बता रहा हूँ।

(६) जिस रीति की चर्चा मैंने पहले की है उसके विरुद्ध यह रीति है। हमेशा की तरह शांति के साथ लेट जाइए। आँखें मुंद लीजिए। बाद में अपने मन को बिलकुल मुक्त रूप में छोड दीजिए। मन में जितने भी विचार आएंगे उनपर रोक न लगाइए। वर्षा काल में जिस प्रकार आसमान बादलों से घिर जाता है, उसी प्रकार आपका मन भी विचारों से भर जाने दीजिए। कुछ समय के बाद आप अनुभव करेंगे कि आपके विचार धीरे धीरे घटते जाएंगे। लेकिन नए नए विचारों को निमंत्रित करते रहिए इतना ही नहीं तो जबरन उन्हें उद्भावित कीजिए। यह क्रम कुछ समय चलेगा। लेकिन कुछ समय बाद आप थक जाएंगे। आप आगे कुछ भी सोच नहीं पाएंगे। आपका मन बिलकुल थक जाएगा। मन की यह स्थिति महत्त्वपूर्ण है। कुछ समय बाद आपका मन विचारों से बिलकुल मुक्त हो जाएगा। और आप संमोहन-निद्रा में प्रवेश करेंगे।

(७) शरीर की विविध इंद्रियाँ और मन पंचतत्त्वों का एक अलग रूप है। अत: चैतन्यरूप " मैं " और देह इनका कुछ भी रिश्ता नहीं है। " गुणा गुणेषु वर्तन्ते। " इस तत्त्व के अनुसार शरीर के द्वारा होनेवाली सभी क्रियाएँ सत्त्व-रज-तम इन तीन गुणों की लीला है। " मैं " केवल उस लीला का द्रष्टा अथवा साक्षी है। इसी विचारधारा के कारण देहातीत (देह के पार की) दशा प्राप्त होती है। यह विधि ज्ञानमार्ग के अन्तर्गत आती है।

ऊपर जिनका वर्णन मैं कर चुका हूँ, उनमें से एकाद क्रिया के परिणाम-स्वरूप आप संमोहित हो ही गए तो आगे क्या करना चाहिए, इस संमोहन से लाभ क्या, आदि आदि प्रश्न आप के सामने उपस्थित हो जाएंगे। जब प्र उसके

सामने बैठे हुए क्ष को संमोहित कर देता है, तब वह क्ष से कुछ सवाल पूछता है और क्ष के अंतर्मन को सूचनाएँ देता है। लेकिन स्व-संमोहन के कारण खुदका जागृत मन (बहिर्मन) लुप्त होने पर, अंतर्मन को सूचनाएँ कौन देगा ? आपका यह प्रश्न बिलकुल सही है।

इन अडचनों को पार करने का एक आसान रास्ता उपलब्ध है। जिस विचारस्रोत को आप अन्तर्मन की गहराई तक पहुँचाना चाहते हैं, स्व-संमोहन की स्थिति को प्राप्त होने के पहले उसी विचारपर अपने मन को स्थिर कीजिए। आपका मन उसी एकमात्र विचार से परिपूर्ण कीजिए। यही एक विचार मन में शक्तिशाली होने दीजिए। फिर इस प्रभावशाली विचार की एक आकृति (Thought form) आपके मन में तैयार हो जाएगी ! आपका यह विचार जितना अधिक प्रभावी होगा, उसकी वह आकृति (Thought form) उतने अधिक समय के लिए स्थिर रहेगी। फिर इस प्रभावशाली विचार को भूल जाइए। जिस विचार प्रवाह को आपने मन में छोड रखा है, स्व-संमोहन के बाद उसकी आकृति के अनुसार अन्तर्मन कार्य करेगा। क्योंकि यह सिद्धान्त ही है कि अन्तर्मन को जो सूचना दी जाती है, वह उसके अनुसार बर्ताव करता है। लेकिन एक बात को अवश्यमेव ध्यान में रखिए: एकाग्र मन के सहारे जिस विचार धारा को आप शुरू करेंगे, उसकी विचाराकृति (Thought form) निर्माण होते ही, उसे भूल जाइए। इस विचार को बहिर्मन में कैद करने से, वह अन्तर्मन तक नहीं जा पाएगा। संक्षेप में बात ऐसी है : बहिर्मन (जागृत मन) में विचाराकृति का निर्माण, उसकी पूर्ण विस्मृति, और बाद में स्व-संमोहन इस तरह सीढ़ियाँ चढ जाने पर आपके मन के विचार सफल हो जाते हैं।

स्व-संमोहन का उपयोग जिन बातों में उपयुक्त हो सकता है, उनकी चर्चा करना मैं अत्यंत उचित समझता हूँ।

(१) सिरदर्द, भय, न्यूनताका भाव (Inferiority Complex) आदि शारीरिक और मानसिक व्याधियों पर स्व-संमोहन एक सफल उपाय है। इस हेतु को सफल बनाने के लिए, स्व-संमोहन की स्थिति तक जाने के पहले साधक अपने मन में एक विचार- आकृति (Thought form) का निर्माण कर उसे भूल जाय। और उसके तुरन्त बाद संमोहित हो जाए। मान लीजिए, आपका मन न्यूनभाव (Inferiority Complex) से घिर गया हो। ऐसे वक्त मन में सोचिए, " अब मैं न किसी से डरूँगा, न खुद को क्षुद्र समझूँगा। " एकाग्र मन से इस विचार को स्थिर करने के बाद उसे भूल जाइए, और स्व-संमोहित हो जाइए। सप्ताह भर के प्रयत्नों से आप न्यूनभाव के दोष से मुक्त हो जाएंगे।

(२) सिगरेट, बीडी, तपकीर आदि साधारण आदतों से छुटकारा पाने में स्व-संमोहन बड़ा उपयुक्त उपाय है। संमोहन के पहले सोचते रहिए, "दिन-ब-दिन धुम्रपान के बारे में मेरी दिलचस्पी घटती जाएगी। अब मेरा मन धुम्रपान से घृणा करता रहेगा।" और कुछ दिनों के वाद बीडी-सिगरेट से आप का मन घृणा करने लग जाएगा। अँग्रेजी में इसे (Nausia) कहते हैं। स्व-संमोहन से निद्रानाश की पीड़ा से छुटकारा मिलता है। संमोहन के पहले सोचते रहिए, "आज मुझे दस बजने के वाद नींद आ–जाएगी, जंभाइयाँ आएंगी और आँखें भारी हो जाएंगी। नींद को रोकना मुश्किल होगा।" इस विचार को वाद में भूलकर संमोहित हो जाइए। कुछ दिनों की साधना के वाद निद्रानाश की पीड़ा निश्चित रूप से दूर हो जाएगी।

(३) अपने पहुँच की मनोकामनाएँ स्व-संमोहन के आधार पर सफल हो जाती है। लेकिन इसके लिए दृढ श्रद्धा की आवश्यकता भी है। आप की एकाद इच्छा को मन में सोचिए। उसकी पूर्ति के लिए दृढ श्रद्धा रखिए। बाद में उसे भूल कर संमोहित हो जाइए। जब आपकी यह इच्छा अन्तर्मन की गहराई में पैठ जाएगी, तब आप सफलता के स्वामी बने रहने में देर न होगा। अंतर्मन (Subconscious mind) की तुलना हम कल्पवृक्ष के साथ कर सकते हैं। कहते है कि कल्पवृक्ष की छाँह में बैठ कर मनुष्य जो भी कुछ सोचता है, वह सफल हो जाता है। आपके जैसे विचार होंगे, फल वैसा ही मिलेगा। इच्छापूर्ति के बारे में असफलता आने का कारण यही है कि मन का शंकित होना। शंकित मन की विचारधारा अन्तर्मन की गहराई तक जाने से यह प्रयोगविधि असफल रहती है। विचाराकृति (Thought form) का जन्म पंचतत्त्वों से होता है। योग्य मन:कामना, दृढ श्रद्धा और स्थिर मनोभावों से पंचतत्त्वरूप विचाराकृति के रूप में मूर्त स्वरूप (materialised) धारण कर लेगी इस विचार की सफलता के बारे में शक प्रकट करने का अर्थ है मूल सूक्ष्म विचार-बीज को ही कुचल डालना, मूल इच्छा का नाश होने पर मन इच्छारहित हो जाता है और इच्छारहित मन किस बात की पूर्ति करेगा ? संकल्प-(इच्छा) पूर्ति के लिए शांत और एकाग्र मन, प्रभावशाली संकल्प, और उसकी पूर्ति के बारे में नि:शंक वृत्ति इन बातों की नितांत आवश्यक है। मान लीजिए : एक लाख रुपये पाने का आपका संकल्प सचमुच प्रभावशाली और निःशंक होने पर सिद्ध होना ही चाहिए। लेकिन बात ऐसी है कि आपका मन ही प्रतिप्रश्न पूछने लगता है : लाख रुपये कितनी बड़ी रक्कम है; वह मुझे कैसे प्राप्त होगी; उसे पाकर मैं क्या करूँगा ? आदि इस प्रकार मूल इच्छा की अपेक्षा बलशाली संदेह मन में पैदा होने के बाद मूल संकल्प नष्ट होने में देर नहीं लगती। मानवीय अन्तर्मन ईश्वरीय-मन होने के कारण वहाँ तक पहुँची हुई इच्छा की पूर्ति हो ही जाती है। पारसमणि के स्पर्श से

लोहे का सोना बनही जाता है। लेकिन लोहा और पारस के बीच सन्देहरूप का अभाव होना चाहिए। संकल्प बीज है और अन्तर्मन भूमि है। अतः इस बीज का वृक्ष तब बनेगा जब वह इस भूमि में स्थान पाएगा।

(४) मेरे बहुतेरे पाठक पारिवारिक जीवन में दिलचस्पी लेनेवाले तथा इसी दुनिया के गोरखधन्दे को सत्य मान कर चलनेवाले हैं। अतः मैंने इस ग्रंथ में ऐसी समस्याओं की चर्चा की है जो उन सामान्यजनों की समस्याएँ हैं। दुःखनिवृत्ति किस प्रकार होगी, सुखप्राप्ति के क्या उपाय होते हैं, अपनी इच्छापूर्ति के लिए किसकी आवश्यकता है आदि बातों की चर्चा इस ग्रंथ में उपलब्ध है। जो भी उपाय मैं बता रहा हूँ, वे इन पाठकों के बसकी बात है।

स्व-संमोहन का उपयोग आत्मसाक्षात्कार के लिए भी हो सकता है। लेकिन इस ग्रंथ में वर्णित साधनाएँ सांसारिक आवश्यकताओं की पूर्ति को सामने रखकर लिखी गई हैं। साक्षात्कार योग में आत्मा के व्यतिरिक्त अन्य किसी का अस्तित्व ही नहीं रहता। और "मैं" भी संसार का अंश होने के कारण "मैं" भी ब्रह्म हूँ ("अहं ब्रह्मास्मि।") इस उच्च कोटी की सिद्धि के लिए (इसे सिद्धि भी कह सकते।) जीवन भी दे डालता है। द्रष्टा–दृश्य-द्वैत भाव को पार करनेवाले, द्रष्टा–दृश्य–भाव भी जिस मूल सत्य की आधारशिला पर अधिष्ठित है, उससे एकरूप हो जाने की साधना करनेवाले महात्मा इनेगिने होते हैं। गीता में भगवान ने स्पष्ट बताया ही है: "मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद् यतति सिद्धये।" अर्थात् ऐसे महात्मा अति अल्प संख्या में होने के कारण यह ग्रंथ उनके लिए नहीं है। लेकिन सांसारिक समस्याओं पर विजय पाते पाते जीवन मुक्तावस्था से जिन पाठकों का अल्प परिचय हो जाएगा उनके मन में उस स्थिति तक पहुँचने की इच्छा जरूर पैदा होगी।

◻ ◻ ◻

.११.

सिद्धियां

(Psychic Powers)

मन तुरियावस्था में स्थिर होने के बाद योगी अष्ट महासिद्धियों का स्वामी बन जाता है ऐसा पातंजल योगसूत्र में कहा गया है। इन महासिद्धियों के साथ कुछ क्षुद्र या निम्न कोटि की सिद्धियों का भी लाभ होता है: पानी के ऊपर चलना, हवा में उड़ना, अदृश्य होना आदि सिद्धियों के वर्णन हम पढ़ते हैं। लेकिन इन अद्‌भुत बातों को देखनेवाला जब तक सामने नहीं आता तब तक मन का शक दूर नहीं होता। जब तक साधना के द्वारा साधक कैवल्य सुख या सत्-चित्-आनंद का अनुभव नहीं कर पाता, तब तक अपनी साधना को वह जारी रखे इस उद्देश्य से योगशास्त्र ने साधना के पथ पर बीच बीच में सिद्धिरूपी विश्रामस्थान रखे हैं। एक के बाद एक उच्च कोटी की सिद्धियाँ प्राप्त करता हुआ साधक आगे बढ़ता जाता है। आत्मानुभव अथवा कैवल्यसुख अथवा सत्-चित्-आनंद अन्तिम सर्वश्रेष्ठ अनुभव है जो इन सिद्धियों को पार करने के बाद मिलने की संभावना है।

इस अध्याय में जिन सिद्धियों का वर्णन मैं कर रहा हूँ उनका लाभ उन सज्जनों को होगा जो श्रद्धावान, पवित्र आचरणवाले, प्रसन्न मन के और नियमित रूप से प्राणायाम आदि विधियों का अभ्यास करनेवाले होते हैं।

इन सिद्धियों के लाभ की आधारशिला श्रद्धा है। छांदोग्य उपनिषद् में "श्रद्धस्व सौम्य" इस प्रकार कहा गया है। "जिस बात की योजना बनाई गई है अथवा जिसकी इच्छा की गई है उसके होने में सन्देह का बिलकुल अभाव रहना" इसका ही नाम श्रद्धा है। सूरज का उदय पूरब में होता है, किसी भी स्थिति में अन्य दिशा में नहीं, अग्नि को स्पर्श करने से हाथ जल जाता, आदि बातों के बारे में हमारा मन निस्संदेह होता है। इसी तरह अगर आपका मन अन्य बातों के बारे में संदेह से मुक्त होगा तो आपकी मनःकामनाएँ, आपके संकल्प सभी सफल

हो जाएंगे यह निश्चित। इसके प्रमाण के लिए मैं बाईबिल से एक उदाहरण देना चाहता हूँ : भगवान ईसा मसीह एक दिन अपने शिष्यों के साथ यात्रा कर रहे थे। सामने एक छोटीसी पहाडी थी। भगवान ईसा ने शिष्यों से कहा, " तुम सामनेवाली पहाडी को देख रहे हो। तुम्हारे में से कोई भी व्यक्ति अगर इच्छा करेगा कि यह पहाडी यहाँ से उडे और समुंदर में गिरे; और उस इच्छा में तिलभर भी संदेह न हो तो सचमुच वह पहाडी उडकर समुंदर में जा कर गिर पडेगी! "श्रद्धा की महानता को स्पष्ट करनेवाला यह सर्वश्रेष्ठ उदाहरण हो सकता है। साधना के द्वारा जीवदशा उत्क्रान्त हो जाती है और साधक परमात्मभाव में स्थिर होने लगता है और इसके परिणामस्वरूप उसकी इच्छाएँ, उसके संकल्प सत्यसंकल्परूप बन जाते हैं। यह सिद्धांत है। जीवदशा में संकल्प कभी भी सिद्ध नहीं होते। लेकिन ईश्वर सत्यसंकल्परूप होने के कारण उसके सभी संकल्प सिद्ध हो जाते हैं। जब कभी आपके इच्छाएँ सफलता की सीढी पर पहुँच जाती है और जब कभी आपके संकल्प सत्य की स्थिति तक पहुँचते हैं तब आप बीना किसी हिचकिचाहट के समझ लीजिए कि आपका मन ईश्वरी भाव में एकरूप होने की स्थिति का यह फल है! इस दशा में अहंकार के भाव का त्याग कीजिए। " मैंने ऐसे किया, इसलिए यह फल मिला।" इस प्रकार अपने गर्व को प्रकट न कीजिए। श्रद्धा और पवित्र आचरण के द्वारा ही आप इस सिद्धि का अनुभव कर पाएंगे। पवित्र आचरण से मन सात्त्विक बनता है और सात्त्विक मन ही ईश्वरीय मन है। सत्त्वगुण ही ईश्वर है। इसके बाद में संतोष अथवा समाधान का महत्त्व है। सन्तुष्ट वृत्ति के बिना सिद्धियाँ प्राप्ती नहीं होगी। जो व्यक्ति विलासिता के लिए लालायित होता है, उसका मन हमेशा के लिए बेचैन रहता है। बेचैन मन स्व-स्थान (परमात्मस्वरूप) से अलग होकर भटकता रहता है। विचार, इच्छाएँ, संकल्प आदि भावों से पूर्णरूपेण मुक्त मन की स्थिति का नाम ही तुरीयावस्था है। " मेरा मन आज स्वस्थ है; शांत है।" इस प्रकार जब हम कहते हैं तब हम वास्तव में आत्मानंद को अनुभव करते हैं। हर दिन कुछ–न–कुछ समय साधना के अभ्यास में लगाने से ही मन स्थिर, एकाग्र और निर्विचार होता है। अतः हर दिन की साधना का समूचे जीवन में बडा महत्त्व है।

इस तैयारी के कारण निम्न प्रकार एक या अनेक सिद्धियों का लाभ होता है। इस अध्याय में मैंने कुल मिला कर छः सिद्धियों की साधना तथा उनका फल इसकी चर्चा की है। लेकिन पाठक एक महत्त्वपूर्ण बात को न भूले कि दो-चार महिनों की साधना से ये सिद्धियाँ नहीं प्राप्त होती। इस साधना में शिक्षक-विद्यार्थी नाते की बात को नहीं भूलना है। एक ही शिक्षक बीसों विद्यार्थियों को पढ़ाते हैं। लेकिन हर विद्यार्थी अपनी शक्ति-बुद्धि के अनुसार गुरु के ज्ञान को ग्रहण करता है। उसी तरह एक ही साधना से कुछ साधक शीघ्र ही फल पाएंगे; कुछ

साधकों के बारे में देर हो सकती है और कुछ ऐसे भी साधक होंगे जिनका अनुभव न के बराबर होगा। साधना की सफलता साधक के मनोबल पर निर्भर रहती है। अब हम इन छः सिद्धियों का परिचय कर लेंगे :

(१) **विचार-ग्रहण सिद्धि**–(Thought Reading) : आपके सामने उपस्थित व्यक्ति के मन में उस समय जो विचार उद्भावित होते हैं उनको जान लेने की सिद्धि को विचार-ग्रहण (Thought Reading) सिद्धि कहते हैं। बिन्दु-त्राटक के अभ्यास से यह सिद्धि प्राप्त होती है। इसके लिए एकाग्र, स्थिर मन की नितांत आवश्यकता होती है। निर्विचार या निर्विकार मन बिलकुल साफसुथरे दर्पण के समान होता है। जिस प्रकार स्वच्छ दर्पण के सामने जो भी वस्तु आ जाती है उसका यथातथ्य प्रतिबिम्ब उसमें प्रकट होता है, उसी प्रकार निर्विचार मन में सामने उपस्थित अन्य व्यक्ति के विचारों का यथातथ्य प्रतिबिंब प्रकट होना संभव है। इसके लिए निम्न प्रकार के अभ्यास की आवश्यकता है। १ से ९ तक के अंकों में से कोई भी एक अंक स्लेट पर लिखने के लिए किसीसे भी कह दीजिए। मन एकाग्र करने पर आपके मन में एकाद अंक प्रकट होने लगेगा। स्लेट पर लिखा हुआ यह अंक और मन में प्रकट अंक एक ही है। प्रारंभिक दशा में इसमें काफी गलतिया हो जाएँगी, और मनकी एकाग्रता का अभाव यही उसका कारण रहेगा।

(२) इसके बाद सामनेवाली व्यक्तिने चुने हुए ताश को पहचानने का अभ्यास शुरू कीजिए। अस्वच्छ, मैले दर्पण में स्पष्ट प्रतिबिंब नहीं प्रकट होता, उसी प्रकार बैचैन या बुरे विचारों से व्याप्त मन में सामनेवाले व्यक्ति के विचारों का प्रतिबिंब नहीं प्रकट होगा। इसके बाद अभ्यास की ओर एक उच्च स्थिति है। किसी व्यक्ति को आपके सामने बिठाइए। आप दोनों के बीच एक तकिया रखिए। उस तकियेपर उस व्यक्ति का पंजा रखिए। बाद में आप अपना पंजा भी उसके पंजे पर रखिए और अपनी आँखें मूँद लीजिए। आप अपने मन को एकाग्र कीजिए। एकाद निश्चित बात पर मन-ही-मन सोचने के लिए उससे कहिए। पाँच मिनट इस प्रकार शांत बैठने के बाद उस व्यक्ति के मन में उद्भावित विचारों की धारा आपके मन तक बहने लगेगी। यही विचार-ग्रहण है। यह होने पर आप अपनी आँखों को खोलकर एक कागज़ पर आपके मन में उन पाँच मिनट की अवधि में उद्भावित विचारों को लिपिबद्ध कीजिए। फिर उस व्यक्ति से पूछिए, "आप क्या सोच रहे थे?" उसके बताए विचारों की तुलना आपके द्वारा लिपिबद्ध विचारों से कीजिए। इस साधना में अगर आप चालीस प्रति शत भी सफलता पाते हैं तो समझ लीजिए कि आप निश्चित दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। भविष्य-कथन करते समय बीसों बार मेरा यह अनुभव रहा है। एक दिन एक सज्जन का भविष्य बताने के लिए मैं आसनस्थ हो गया। मैंने अपना हाथ उसके हाथ पर

रखा था। मन को शांत और एकाग्र कर दिया। उस समय मेरे मन में पेड़, साँप आदि विचार उद्भावित होने लगे। मैंने उस सज्जन से सवाल किया, "आप को कभी साँप ने काट खाया था?" उसने कहा, "मेरे मन में यही विचार आ रहे थे कि साँप ने काटने जैसी मेरे जीवन की महत्त्वपूर्ण घटना आप बता सकेंगे या नहीं?" उसके मन में उद्भावित विचार मेरे शांत और निर्विचार मन में प्रतिबिंबित हो गया था। पूना शहर में एक सुंदर युवती का हाथ देख कर भविष्य-कथन करने के पहले मेरे मन में कोढ़ संबंधी विचार उद्भावित होने लगे। मेरे मुँह से निकल पड़ा, "इस लड़की में कुछ शारीरिक दोष है जिसके कारण इसकी शादी में अडचन पैदा होने की संभावना है।" और वास्तव में उसके पैर की त्वचापर कोढ़ के सफेद दाग निकल चुके थे। विचार-ग्रहण (Thought Reading) की इस सिद्धि की सफलता के लिए बिन्दु त्राटक के अभ्यास की आवश्यकता है।

(२) **विचार-संक्रमण** : इस सिद्धि के बारे में चर्चा करने के पहले कुछ बातों का स्पष्टीकरण करना आवश्यक है। यह संसार वस्तुओं से भरा हुआ है। उन वस्तुओं में विचार (Thought) भी एक वस्तु है। मनुष्य के मन में जब कोई विचार उद्भावित होता है, तब वह विचार एक आकार (Form) धारण कर लेता है। लेकिन मानवीय मन लगातार नए नए विचारों की निर्मिति करता ही रहता है। अतः विचारों की इस भीड में सभी विचार करीब करीब दुर्बल तथा क्षणिक होते हैं। एक और भी बात है। एकाद विचार हमारे मन में उद्भावित होने के बाद, उसकी कार्यसिद्धि या सफलता के बारे में शक या संदेह पैदा होता है। ऐसा संदेह निर्माण होते ही पहले विचार की जड़ ही उखाडी जाती है और वह विचार "विचार के रूप" में (Thought form) जीवित ही नहीं रहता। कल्पना कीजिए। आप अपनी कचहरी में काम कर रहे है। किसी भी साधना से आपका कुछ भी परिचय नहीं है। ऐसी स्थिति में उस समय अगर आप सोचेंगे कि फलाँ अफसर एकाद फाइल उठाकर आपके टेबल के पास आ जा जाए, तो आपके ये विचार बिलकुल बांझ सिद्ध होंगे। आपका मन दुर्बल है और आपके विचार भी वैसे ही हैं। ऐसी स्थिति में आपके विचार बिलकुल सफल नहीं होंगे। लेकिन मान लिजिए कि अपने त्राटक साधना के द्वारा मन अत्यंत शांत, एकाग्र, एक-प्रवाही करने की बात में सफलता पाई है। ऐसी स्थिति में मन को एकाग्र कर आप उसी विचार को मन में लाते हैं तो आपकी साधना और एक मात्र विचार इनके कारण वही विचार प्रभावशाली हो जाएगा और जिस अफसर के बारे में आप सोचते हैं, उसके अंतर्मन में वही विचार किसी बाण की तीव्र गति जैसा घुस जाएगा। फिर वही विचार उस अफसर के बहिर्मन (जागृत मन-Conscious mind) में प्रवेश करेगा और उसे आपकी मेज तक खींच लाएगा। जब तक आपके अफसर आप के पास नहीं आएंगे

उनका मन बहुत ही बेचैन रहेगा। अपने अफसर को सामने उपस्थित खडे देख कर आप कहेंगे, "सर, यहाँ तक आने की तकलीफ आप क्यों उठा रहे हैं? मैं ही आता हूँ आपकी केबिन में।" लेकिन वह कहेगा, "तुम्हारे आने की कोई आवश्यकता नहीं है; क्योंकि कोई खास बात है नहीं। मैं यूही यहाँ आया हूँ।" लेकिन साधकों, याद रखिए कि अगर आप सोचते रहेंगे कि "मेरे अफसर अपनी जगह छोड़कर यहाँ तक कैसे आएंगे?" तो यह दूसरा विरोधी विचार पहले विचार का गला घोंट देगा और आपका संकल्प असफल रहेगा।

यह सिद्धि मूर्ति-ध्यान की लंबी साधना के बाद प्राप्त होती है। इसका कारण यही है कि मूर्ति-ध्यान के समय उस मूर्ति को अपने अन्तःश्चक्षु (या प्रज्ञाचक्षु) के सामने लाने की कोशिश हम करते हैं। साधना की उच्च सीढी पर यह मूर्ति लंबे समय के लिए मनःश्चक्षु के सामने दिखाई देती है। अब यह मानना ही पडेगा कि अंतःश्चक्षु को दिखाई देनेवाली वह मूर्ति एक तरह का विचार ही तो है। विचार का आकार (Form) मूर्ति के आकार से भिन्न होता है। फिर भी बहुत लंबे समय तक उस विचार को हम मन में स्थिर रख सकते है। सन्देह से मुक्त केवल एक मात्र विचार मन में स्थिर होने के बाद समझना चाहिए कि साधक इस सिद्धि के अत्यंत निकट जा पहुँचा है। विचार-संक्रमण में दो व्यक्तियों के बीच की दूरी बाधा नहीं बनती। सुदूर देशों में रहनेवाले लोगों के मन में हमारे विचारों का संक्रमण हो सकता है। इसका स्पष्ट मतलब यह है कि विचार-संक्रमण स्थल-सापेक्ष नहीं है। वह स्थल-निरपेक्ष याने स्थल के बन्धनों के पार की बात है। लेकिन यह अति उच्च कोटि की स्थिति है।

किसी व्यक्ति के ऊपर आप अधिकार प्रस्थापित करना चाहते होंगे या आप की इच्छा होगी कि कोई व्यक्ति विशेष आपकी आज्ञा का हमेशा के लिए पालन करे तो निम्न प्रकार की विधि को अपनाइए।

शुरुआत में उस व्यक्ति की हाल ही में खींची हुई (recent) एक तस्वीर प्राप्त कीजिए। रात के दस या ग्यारह बजे उस तस्वीर को सामने रखिए। मन को शांत कर, स्थिर नजरों से उसी तस्वीर की ओर दस-पंदरह मिनट देखते रहिए। उस व्यक्ति के बारे में आप जो भी कुछ आशा रखते होंगे या उसके द्वारा आपकी जिस आज्ञा का पालन करा लेना आप चाहते होंगे, उसे आपके मन में उद्भावित कीजिए।

रात के दस-ग्यारह बजे का समय बताने का कारण यही है कि उस समय वह व्यक्ति सोया हुआ होता है और उसका बहिर्मन (जागृत मन-Conscious mind) सोया हुआ या क्रियाहीन रहता है। लेकिन उसका अन्तर्मन अधिकाधिक क्रियाशील हो जाता है। आपके मन में उद्भावित एक-प्रवाही और प्रभावशाली विचार उस व्यक्ति के अन्तर्मन (Sub-conscious mind) में प्रवेश करता

है। जब व्यक्ति जाग उठता है तब कुछ ही क्षणों में आपके द्वारा उसके अन्तर्मन में प्रक्षेपित वह विचार, उसके बहिर्मन तक आ जाता है। यह विचार इतना अधिक प्रभावशाली होता है कि उसके अनुसार कृति करने के सिवाय उस व्यक्ति के सामने कोई अन्य उपाय ही नहीं रह जाता। वह बहुत बेचैन हो जाता है। लगातार ऐसे प्रयोग एक ही व्यक्ति के के बारे में करने से वह व्यक्ति आपका गुलाम बन जाएगा। लेकिन मेरे सज्जन पाठकों, इस साधना का उपयोग किसी बुरे काम के लिए न करिए। इस प्रयोग के सहारे अगर आप किसी सज्जन स्त्री को अपने वश में कर लेने की बात सोचेंगे तो उसमें आप सफलता नहीं पाएंगे। क्योंकि सज्जन स्त्री के लिए चरित्र एक अमूल्य निधि होती है और वह कभी भी अपनी मर्यादा का गला घोंटने नहीं देगी। ऐसी स्त्री का मन अति बलशाली होने के कारण आपकी इच्छाओं का उस पर कुछ भी असर नहीं होगा।

अच्छे कार्य के लिए इस साधना का उपयोग अवश्यमेव करते जाइए। आपके किसी रिश्तेदार या मित्र का लडका पढ़ाई की ओर पीठ फेर कर आवारा बन रहा हो, या आपके कोई मित्र किसी बुरी आदत का शिकार बन रहे हो, तो ऐसी परिस्थितिओं में उन लोगों की तस्वीरों के सामने बैठ कर इस विचार संक्रमण की क्रिया को संपन्न करने से वे लोग अच्छे रास्ते पर आ जाते हैं। और बड़ा भारी लाभ होता है। यह मेरा व्यक्तिगत अनुभव है। इस विधि के लिए एकाग्रता और एक मात्र विचार की नितांत आवश्यकता होती है। इन दो बातों के अभाव में असफलता आ जाती है।

इस सिद्धि की प्राप्ति के लिए मन की तीव्र एकाग्रता और श्रद्धा की नितांत आवश्यकता है। मैं बार बार इस बात को दोहरा रहा हूँ। तीव्र एकाग्रतावस्था में उद्भावित विचार का साथ देने के लिए श्रद्धा का निर्माण करने मे आपका मन असफल रहता हो, तो आपका वह विचार बांझ है। "मैंने किसी व्यक्ति की ओर एक विचारप्रवाह भेज दिया है। वह विचार मेरी तुरियावस्थास्थित सत्यसंकल्प स्थिति का सृजन होने के कारण वह सफल रहेगा" ही इस प्रकार मन को निश्चित बनाइए।

अब और एक विधि का वर्णन करूँगा जो हर दिन उपयुक्त सिद्ध होगी। समझ लीजिए : आपके घर मेहमान आए है : उनका हार्दिक स्वागत करने के बाद उन्हें आपके सामने बिठा दीजिए। आप अपने मन में दृढ़तापूर्वक सोचते रहिए कि "मैं जो भी कुछ इन्हें बताऊँगा उसे ये स्वीकार करेंगे। मेरा साथ देंगे।" आपके मन की ओर से इस विचार को उस मेहमान की ओर तीव्र गति से छोड दीजिए। इसके बाद आप जो भी कुछ कहेंगे, आपके मेहमान उसे स्वीकार करेंगे।

भविष्य-कथन के समय मैं इस उपाय को अपना लेता हूँ। मैं जो भी कुछ कहता हूँ, सुननेवाला कबूल कर लेता है।

विचार–संक्रमण सिद्धि की शक्ति कितनी प्रभावशाली होती है, इसके बारे में एक अनुभव बताऊँगा। रात का समय था। मैं गहरी नींद में खो गया था और अचानक मैंने एक सपना देखा। चालीसगाँव के पास पाटना स्थित मेरे गुरु (जिन्होंने मुझे त्राटक विद्या की देन दी।) परमपूज्य बाबाजी सपने में दर्शन देकर कहने लेंगे, " दूध लाओ।" दूध पीने के बाद उन्होंने कहा, " ' ॐन्हीम् नमः ' इस मंत्र को हर दिन १०८ बार जपते जाओ। जप के समय श्वसन क्रिया का खयाल रखो। मेरा काम हो गया। अब मैं विदा होता हूँ।" सवेरे जागने पर इस सपने के बारेमें सोचने लगा। और वैसे ही मेरे एक मित्र के घर जा पहूँचा। मेरे मित्र भी इन बाबा के भक्त रहे हैं। मेरे सपने की हकिगत उन्हें बताकर मैं घर चला आया। तो क्या आश्चर्य ! दस–पंदरह मिनट के बाद मेरे घरके सामने एक टांगा आ कर रुक गया और उसमें से मेरे गुरु बाबाजी उतरने लगे! बडे आदर के साथ मैं उन्हे ऊपर ले आया। आसनस्थ होने के बाद बाबाजी ने पूछा, " क्यों? मेरा खत मिल गया?" मैं कहा, " बाबाजी, अपने कब पत्र लिखा है? यहाँ ग्यारह बजे ड़ाकिया आता है।" बाबाजी कहने लगे, " तू झूठ बोल रहा है। मैंने तुझे अवश्य खत भेजा है। मेरे लिए दूध कहाँ है? जा, भाग दूध ले आ मैं तुझे मंत्र देने आया हूँ।" बाबाजी के इन शब्दों से मेरे मन में छाया अज्ञान–अंधकार लुप्त हो गया। मैंने झट बाबाजी के पैर पकड लिए। बाद में उन्होंने दूध प्राशन किया और ' ॐन्हीम् नमः ' इस मंत्र का पाठ दे कर मुझसे कहा, " मेरा काम हो गया। अब मैं लौट रहा हूँ।" मैंने भोजन करने के लिए बहुत आग्रह किया; लेकिन उन्होंने उसे अस्वीकार किया और वे चले गए। इस घटना के बाद उस महात्मा के दर्शन का सुवर्णावसर मेरे जीवन में आज तक नहीं आया।

विचार–संक्रमण सिद्धि की सफलता से साधक दुनिया भर के व्यक्तियों को स्वामी बन सकता है। दूसरों को वश में लाने का उपाय प्राप्त होने पर उसे किसीका भी ड़र महसूस नहीं होता।

(३) **संकल्प सिद्धि :** योगशास्त्र में इस सिद्धि का अद्वितीय स्थान है। और वह स्वाभाविक बात है। हर दिन सोने के वक्त हर आदमी मन में कुछ–न–कुछ योजना बनाता है। कुछ–न–कुछ संकल्प करता रहता है। लेकिन अनुभव यह रहा है कि यह संकल्प बहुत कम सफल होता है। इन संकल्पों की तुलना हवा में बनाए किले के साथ हो सकती है। मेरे गुरु ब्रह्मीभूत चैतन्यानंद स्वामीजी के पास अहमदनगर को एक दिन बातचित कर रहा था। मैंने बडी नम्रता से कहा, " स्वामीजी, अगर आप को गुस्सा नहीं आएगा तो एक बात आपसे पूछूगा, जिसके बार में मेरे मन में कुछ संदेह पैदा हो गया है।" स्वामीजीने झट कहा, " बेटा, मन की रचना ही तो सन्देह से बनी है। ठीक है। पूछ लेना। " मैं पूछने लगा, " स्वामीजी, आप पूर्ण संन्यस्त और साक्षात्कारी महात्मा है। फिर भी आपकी

चारों ओर यह मठ, भोजन, भक्तों तथा मेहमानों की भीड़ ये क्यों ? जनसाधारण तो इसमें ही फँसे रहते हैं यह हम समझ सकते हैं। लेकिन आप जैसे मुक्तात्मा के पीछे ये पारिवारिक झंझट क्यों ?" स्वामीजी कुछ हँस पडे लेकिन फिर भी मौन रहे। मुझे लगा कि उन्हें गुस्सा आ गया हो। मेरे मन को बड़ा कष्ट पहूँचा। दूसरे दिन बडे तड़के, तीन बजे मुझे जगा कर स्वामीजी अपने कंबल के विस्तर के पास ले गए। उनकी मुद्रा बड़ी गंभीर थी। उन्होंने आँखें मूँद लीं। स्वामीजी ने मुझे जो भी कुछ बताया वह निम्न प्रकार है :

स्वामीजी ने कहा : "कल तूने जो सवाल उपस्थित किया उसका जवाब और लोगों की उपस्थिति में देना उचित नहीं था। आत्मज्ञान को प्राप्त करने के पहले, युवावस्था में घर–बार, बाल–बच्चे, आराम की चीजें आदि के बारे में मेरा मन बड़ा लालायित था। मैं गरीब था। इन सभी चीजों को हासिल करना मेरे वसकी बात नहीं थी। ये सांसारिक वासनाएँ मेरे मन की गहराई में जा कर छिप गई थीं। साधना के द्वारा मुझे मेरे असली चैतन्य स्वरूप का बोध होने लगा और मेरा मन आत्मभाव में स्थिर होने लगा। ये दबी हुई इच्छाएँ मेरे निर्विकल्प मानसरोवर में हिलोरने लगीं, और मैं फिरसे सांसारिकता के बारे में सावधान होने लगा। मेरी ये इच्छाएँ सत्य–संकल्प-स्वरूप निर्विचार–निर्विकल्प मन में प्रकट होने के कारण अनायास सिद्ध होने लगीं। इस बात को न भूलना कि जो इच्छाएँ व्यक्ति के मन में वास करती हैं, आत्मज्ञान की स्थिति तक जाने के बाद, उनका संबंध तुरियावस्था में स्थिर हुए मन के साथ प्रस्थापित हो जाता है; और ऐसा होते ही वे सभी इच्छाएँ अनायास सफल हो जाती है। सत्यसंकल्प की आधारशिला पर ऋषि विश्वामित्र प्रतिसृष्टि का सृजन करने में सफल रहे। अगर तुझे इस संकल्प-सिद्धि की प्रारंभिक दशा में मिलनेवाले अनुभव से परिचित होना है तो निम्न प्रकार की विधि को अपनाना : किसी व्यावहारिक बात को लेकर एकाद इच्छा मन में पैदा कर, आँखें मूँद कर, मन शांत तथा एकाग्र कर। इस वक्त मैं फलाँ व्यक्ति हूँ इसको भी भूलना चाहिए। देह को भूलने से प्राप्त मनोदशा का नाम ही तुरियावस्था है। बाद में अचानक अपनी इच्छा का प्रक्षेपण इस मन में कर, फिर एक बार देहस्थिति में लौट आ। जो इच्छा है उसे भूल जा। इस संकल्पको याद करने से वह तुरियावस्था में स्थिर नहीं रहेगा। वह फिर तेरे जाग्रत मन (बहिर्मन, Conscious-mind) में प्रवेश करेगा और यह विधि असफल रहेगी। मेरी बताई हुई विधि से काम चलाने पर तेरे साधारण व्यावहारिक संकल्प अवश्यमेव सफल होते जाएँगे। लेकिन मन में संदेह पैदा होते ही संकल्प का नाश हो कर मन संकल्परहित बन जाएगा।

एक दिन भगवान रमण महर्षि से उनके एक शिष्य ने प्रश्न पूछा, "If one practising Yoga with material desires, becomes a Dnyani in

the mean time, will the original desire be fulfilled or not ?" (अर्थ है : किसी लौकिक इच्छा को ले कर योग–साधना करनेवाला व्यक्ति अगर बीच में ही आत्मज्ञानी बन जाएगा, तो उसकी मूल इच्छा सफल होगी या नहीं ?) रमण महर्षि ने उत्तर दिया, " If one practising Yoga with material desires, becomes a Dnyani in the mean time, even though his original desire is fulfilled, he does not rejoice. " (अर्थ : लौकिक इच्छा की पूर्ति के लिए योग–साधना करनेवाली व्यक्ति बीच में ही ज्ञानी बनने के बाद, उसकी मूल इच्छा भले सफल क्यों न हो, वह उसकी खुशीमें अपना सन्तुलन नहीं खो बैठता ।) यह बिलकुल सत्य है। आत्मज्ञान की स्थिति में योगी सम-दृष्टि को प्राप्त कर लेता है। उसे सभी वस्तुमात्र आत्मस्वरूप दिखाई देते हैं। आत्मस्वरूप से भिन्न ऐसी कोई वस्तु ही नहीं रह जाती। अतः जो वस्तु उसे मिल रही है, (ऐसा हम कहेंगे।) और जो वस्तु उससे भिन्न नहीं होगी, उससे उसे और किस प्रकार खुशी हो सकती है ? उसको लेकर सभी संसार आत्मस्वरूप है। अन्य कुछ भी नहीं है। इस सिद्धि के लिए प्राणायाम तथा त्राटक की लंबी साधना की नितान्त आवश्यकता है। प्राणायाम और त्राटक से मन पूर्ण रूप से निर्विकल्प हो जाता है। इस सिद्धि के लिए निर्विकल्प मन और संकल्प के प्रति नितांत श्रद्धा आधारशिला के रूप में काम आती है। एक गरीब मामुली आदमी बंबई जैसे शहर में रहता है। प्राणायाम क्रिया से अपना मन निर्विकल्प करने में वह सफल हो चुका है। अब उसने संकल्प किया है, " बंबई के नरीमन पॉइंट जैसे अमीरों के विभाग में मेरा भी एक आलीशान मकान हो। " अपने संकल्प के बारे में अगर वह अटूट श्रद्धा रखता हो, तो उसकी यह कामना सिद्ध हो जाएगी। लेकिन बात ऐसी है कि इस इच्छा के प्रति उसके मन में अटूट श्रद्धा पैदा ही नहीं होती। श्रद्धा के बारे में उसकी स्थिति डाँवाडोल है। अतः श्रद्धा के अभाव में उसका संकल्प मनोभूमि में जड नहीं पकड़ेगा। और बिना संकल्प के सिद्धी कहाँ ? अतः मन के निर्विकार हो जाने के बाद जो असंभव नहीं, अपने पहुँच की बात है, उसे लेकर ही संकल्प करना है। ऐसे संकल्प के बारे में आपके मन में श्रद्धा पैदा होती है। एकाद शासकीय कर्मचारी सोचता है की उसका तबादला अन्य किसी गाँव में हो। यह उसकी इच्छा बिलकुल स्वाभाविक है। लेकिन इस व्यावहारिक संभवनीय इच्छा के बारे में भी संदेह पैदा हो जाने पर उसकी सफलता की इच्छा करना बेकार है। बेचारा कर्मचारी सोचता रहेगा कि बडे बाबू के रिश्तेदार ही वहाँ तबादला चाहते हैं तो मेरा क्या होगा ? तो फिर मूल संकल्प की जड़ें कट जाएंगी और सफलता कोसों दूर भाग निकलेगी।

सिद्ध, योगी आदि महात्मा अपनी कामनाओं को सफल होते हुए अनुभव करते हैं इसका कारण यही है कि उनकी कामनाएँ (अथवा संकल्प) उनके

अंतर्मन की गहराई में पहुँची हुई होती हैं। सभी संकल्प अन्तर्मन में इकट्ठे होते हैं और वहाँ से जागृत मन (वहिर्मन Conscious mind) में प्रवेश करते हैं। अन्तर्मन से बहिर्मन तक पहुँचे संकल्प अवश्यमेव सिद्ध होते हैं। यह सिद्धान्त है।

संकल्प–सिद्धि के बारे में काफी चर्चा हो चुकी है। अब इसके बारे में मेरे अनुभव की बातों का कथन करना पाठकों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होगा। मेरे अनुभव की बातों को पढ़कर पाठकों का मनोरंजन भी होगा और उनका मन श्रद्धा तथा आत्मविश्वास से भर जाएगा।

(१) आषाढ की एकादशी का दिन था। मेरे सद्गुरु स्वामी चैतन्यानंदजी का मुक्काम महाराष्ट्र की पवित्र सन्तभूमि पैठन में थी। मैं उनके दर्शन करने वहाँ चला गया। शाम के वक्त बडी संख्या में लोग उनके साथ गपशप कर रहे थे। स्वामीजी यकायक रुक गए। उनका मन एकाग्र हो गया। उसी स्थिति में कहने लगे, "हर आषाढ़ की एकादशी को मैं पवित्र क्षेत्र पंढरपूर जा कर भगवान श्रीपांडुरंग (या विठ्ठल) के दर्शन किया करता था। अब बुढा बन चुका हूँ। यात्रा–सफर के कष्टों को नहीं उठा सकता। भगवान श्रीपांडुरंग चाहेंगे, तो यहाँ आकर मुझे दर्शन देंगे।" स्वामीजी की ध्यान-मुद्रा भंग हो गई। दूसरे दिन मैं स्नान करने के लिए कुएँ पर गया था। स्नान को प्रारंभ करने ही वाला था कि अचानक स्वामीजी का सन्देश ले कर एक सज्जन उपस्थित हुए और कहने लगे की "जैसी स्थिति में हो, वैसी स्थिति में स्वामीजी के पास उपस्थित हो जाओ।" स्नान को बीच में ही छोडकर मैं स्वामीजी के सामने उपस्थित हुआ। तो क्या आश्चर्य! स्वामीजी के सामने एक आसन पर विठ्ठल रुक्मिणी की दो सुन्दर मूर्तियाँ रखी गयी थी जिसे एक भक्त पंढरपुर से ले आया था! मेरा मन गद्गद् हो उठा। आँखें आँसुओं से डबडबा आई। अपने भक्त के लिए भगवान पैठण आ पधारे थे। इसी का नाम संकल्प–सिद्धि कहते हैं। भगवत वचन भी कहता है कि "ये यथा मां प्रपद्यन्ते तान्स्तथैव भजाम्यहम्।"

(२) स्वामीजी का मुक्काम मेरे घर था। एक दिन उनके दर्शन के लिए बहुत बड़ा जनसमूह इकट्ठा हो गया था। वातचित के दौरान स्वामीजी ने मुझसे सहज भावसे कहा, "कही व्याघ्रासन मिले तो देखना। आसन पर बैठ कर ध्यान करने की इच्छा हुई है।" दूसरे दिन सवेरे एक अपरिचित सज्जन मेरे घर उपस्थित हो गए। उनके पास दो व्याघ्रासन थे। स्वामीजी के पास जाकर उनका स्वीकार करने की विनंती उन सज्जन ने की। स्वामीजी ने उसमें से एक व्याघ्रासन अपने लिए रख लिया। प्रत्यक्ष जीवन अद्भुत कथा से भी बढ़कर अद्भुत है! "Horatio! There are more wonders in this world than you dream of,"

(३) शाम का वक्त था। स्वामीजी के साथ बातचित चल रही थी। अगरबत्तियाँ खत्म होने को आयी थीं। बातचित के दिव्यानंद को छोडकर अगरबत्तियाँ लाने के लिए बाहर जाने के लिए मेरा मन राजी नहीं था। स्वामीजी ने मेरी मनोदशा को शायद पहचान लिया। उन्हों ने कहा, "तुम शांत बैठे रहो। अगरबत्तियाँ खुद आ रही हैं।" और सचमुच एक भक्त वहाँ उपस्थित हो गया जिसके हात में अगरबत्तियों का पैकेट था। उनमें वे तीन-चार अगरबत्तियों को जला कर उस भक्त ने स्वामीजी के चरणों को स्पर्श किया। उस समय स्वामीजी जो हँसी हँस रहे थे उसे मैं जिंदगी भर नहीं भुलूँगा।

स्वामीजी साक्षात्कारी महात्मा थे। अतः संकल्प-सिद्धि की अद्‌भुत बातें उनके लिए खेल था। उनकी तुलना में मैं एक क्षुद्र जीव हूँ। फिर भी मेरे जीवन में संकल्प-सिद्धि की कई बातें मैं अनुभव कर चुका हूँ। उनमें से तीन घटनाओं का वर्णन करना चाहता हूँ।

(१) रविवार का दिन था। छुट्टी थी। कुछ मीठा खाने की इच्छा हुई। संकल्प कर लिया। पत्नी से कहा, "आज छुट्टी है। कुछ मीठा खाएँगे।" तब पत्नी ने कहा, "अजी, घर में न शक्कर है न घी। और बनिया का बकाया भी इतना है कि वह आज उधार नहीं देगा।" बिना कोई शब्द कहे मैं पब्लिक लायब्रेरी में चला गया। समाचार-पत्र वगैरह पढ़कर दस बजे तक घर लौट आया। इतने में हमारे एक पडोसी की पत्नी ने सन्देश भेजा कि भोजन जरा देर से हो। ग्यारह बजे के समय उनकी बहू एक पतीली ले कर आई जिसमें हलुवा-पुड़ी के साथ और भी कुछ मीठी चीजें थीं। "माम् एकं शरणं व्रज।" यह वचन प्रसिद्ध है। "मैं" इस शब्द का अर्थ है विशुद्ध ज्ञान (Pure Consciousness)। शरण जाने का अर्थ है "अहम् भाव" को उस विशुद्ध ज्ञान में विसर्जित करना। और इस एकरूपता के बाद अष्टसिद्धियाँ उस योगी महात्मा के सामने हाथ जोड़ कर उपस्थित रहती है।

(२) मैं पहले भी बता चुका हूँ कि सन १९६७ इ. में शेयर के धंधे में मुझे हानी उठानी पड़ा। उसमें मेरा सर्वस्व चला गया। मैं बिलकुल अकिंचन बन गया। अमरावती के मेरे लड़के का सहारा लेने के सिवाय मेरे सामने अन्य चारा नहीं था। मन में बडी शर्म लग रही थी। एक सवेरे योंही लेटे लेटे सोच रहा था। अचानक मेरे मनमें आया, "अगर मुझे तीन हजार रुपये नगद मिलेंगे तो मैं सारी हानी को निवटा लूँगा और फिर से पैर जमाऊँगा।" मन शांत और एकाग्र हो गया। साँस जैसे रुक गई हो। संकल्प किया कि दिनांक २२–५–१९६८ के दिन सवेरे नऊ बजे तक तीन हज़ार की रकम हाथ लगे। फिर सावधान होने के बाद सभी भूल गया। ठीक २२–५–१९६८ के दिन सवेरे ८ बजे मेरे एक स्थानीय मित्र वहाँ उपस्थित हो गए। उन्होंने कहा, "भागवत साब, आपके

Read Your Own Palm नामक ग्रंथ की प्रतियाँ आजकल उपलब्ध नहीं है। मैं उसका नया संस्करण निकालना चाहता हूँ। मै तीन हज़ार दूँगा। कॉन्ट्रैक्ट कीजिए। पाँच सौ एडवान्स के रूप में अभी देता हूँ। " मैंने पाँच हजार की माँग की। वे राजी नहीं हुए चले गए। उस ग्रंथका पहला संस्करण बीस साल पहले निकला था। उसके बाद उस ग्रंथ के बारेमें मैंने कुछ भी नहीं सोचा था। वह तीन हजार देने को तैयार था। फिर भी मेरा संकल्प असफल रहा इसका कारण यह है कि मेरे ही मन में कुछ सन्देह था।

(३) पहले मैं गुरु–पौर्णिमा का पर्व मनाया करता था। रात के समय लोग भजन भी गाया करते थे। ऐसे ही एक अवसर पर बहुत सज्जन इकट्ठे हुए थे। लेकिन न तबला-हार्मोनियम आदि वाद्ययंत्रों का कहीं पता था, न भजन गानेवालों का। बड़ा कठिन समय था। लंबी परंपरा खंडित होने का डर था। फिर भी मेरे मन को शांत रखा। उसे स्थिर किया और भगवान से मन–ही–मन प्रार्थना करने लगा, " भगवान ! आज यह कैसी घडी आ चुकी है ! तेरी मर्जी हो तो रात को तेरी महीमा कथन करनेवाले गीतों का गायन होगा। " जब मैं सावधान हो गया तो यकायक नीचे से सुनाई दिया, " भागवत सांब यहीं रहते हैं क्या ? " सज्जे में से हमने देखा तो नीचे वाद्य-यंत्रों के साथ कुछ मंडली खडी राह देख रही थी। वे चालीसगाँव से आए थे। मेरे एक मित्र ने उन्हें भेज दिया था। इतने में गाँव के भजनवाले भी उपस्थित हो गए। जलतरंग बजानेवाले एक सज्जन भी अपनी कला दिखाने के लिए राजी हो गए। उस दिन गायन तथा वादन से सारा वातावरण गूँज उठा। संगीत–सागर में सभी तैरने लगे। मेरी जिंदगी में संकल्प-सिद्धि का यह एक महान् उदाहरण है।

पश्चिम के मनोविज्ञान में संकल्प-सिद्धि के लिए एक अलग विधि का जिक्र किया गया है। उसके अनुसार अपनी इच्छा को एक कागज़ पर लिखकर उसके ऊपर मन एकाग्र कीजिए। बादमें उस कागज को फाड़कर फेंक दीजिए। इसके बारे में अब कुछ भी न सोचिए। कुछ दिनों के बाद आपकी मनोकामना सफल होगी। आपका संकल्प सिद्ध होगा। मैंने उस उपाय को अपनाने की कोशीश की। लेकिन असफल रहा। पाठकों की मालुमात के लिए इस बात की चर्चा यहाँ की गयी है।

(४) **दूरदर्शन** (Clairvoyance):–मनुष्य का अंतर्मन (Sub-conscious mind) स्थल-काल के बन्धनों से मुक्त है, इस सत्य को आधुनिक विज्ञान ने कबूल किया है। जाग्रत मन (बहिर्मन, conscious mind) के कार्य को पूरी तरह रोकने में सफल होने पर इंद्रियों के परे होनेवाले अंतर्मन का पता साधक को लग जाता है। स्थान की मर्यादा से मुक्त होने के कारण अन्तर्मन कहीं भी वास कर सकता है। जाग्रत मन शांत, क्रियाहीन होने के बाद सभी शारीरिक क्रियाएँ

अंतर्मन के अंतर्गत आ जाती हैं। ऐसी स्थिति में चर्मचक्षु के बिना, केवल अंतःचक्षु के सहारे दुनिया के सुदूर कोने में घटनेवाली घटनाओं को साधक देख सकता है। बैठे बैठे उनका वर्णन कर सकता है। इसे ही दूर-दर्शन सिद्धि (clairvoyance) कहते हैं। इस सिद्धि को प्राप्त करने के लिए किस साधना की आवश्यकता होती है इसका पुरा ज्ञान त्राटक सिखाते समय मेरे गुरुजी ने मुझे प्रदान किया है। मेरे पाठकों के कल्याण के लिए मैं यह रहस्योद्घाटन कर रहा हूँ।

कर्ण-पिशाच से सहायता लेकर भी इस चमत्कार को सिद्ध किया जा सकता है।

मृत आत्मा का मन त्रिपरिमाण (Three dimensional) स्वरूप नहीं होता। वह चतुर्परिमाणयुक्त (Four dimensional) होता है। वह स्थल-काल के बन्धनों से मुक्त होता है। ऐसी किसी आत्मा को वश में कर लेने से कहाँ क्या चल रहा है इसका पता लगाना संभव है। लेकिन यह अघोर विद्या है और उसके बारे में मेरा ज्ञान न के वरावर होने के कारण मैं उसकी चर्चा नहीं करूँगा। सज्जनोचित उपाय से दूर-दर्शन सिद्धि कैसे हासिल की जाय इसके बारे में गुरू ने जो कुछ बताया है उसे पाठकों के सामने रखूँगा।

एक छः इंच लंबा और चार इंच चौड़ा काँच का टुकडा लीजिए। कपूर की ज्योति जला कर उसके धुएँ से उस काँच का तल पूर्णतया काला कीजिए। दीवार के सहारे टेबुल पर उस काँच को ऐसे रखिए कि वह आपकी आँखों के बिलकुल सामने रहे। उस कांच के सामने एक घी का दिया जलाइए। उस दिये की ज्योति का प्रतिबिंब उस काली कांच में दिखाई देगा। अब कमरे की सारी खिडकियाँ और दरवाजे बंद कीजीए। कमरे में बिलकुल अंधेरा होने दीजिए। वहाँ आप के सिवाय कोई अन्य व्यक्ति न रहे। अब आप उस काँच के सामने दो फीट की दूरी पर बैठ जाइए। उस कांच में प्रकट प्रतिबिंब की ओर अपलक देखते रहिए। श्वसन क्रिया को बिलकुल धीमी रखिएगा। मन्द श्वास के कारण ज्योति भी स्थिर रहेगी। कुछ दिनों के अभ्यास से वह काली काँच बिलकुल प्रकाशमान दिखाई देगी। यह प्रकाश उस ज्योति का नहीं वल्कि वह दिव्य प्रकाश है। इस दिव्य प्रकाश के दर्शन तक आपकी साधना सफल होने के बाद मन में सोचना शुरू कीजीए। उहाहरण के लिए मैं बताऊँगा-" काशी के विश्वेश्वर मंदिर में अब क्या चलता होगा ?" इस साधना की प्रारंभिक स्थिति में ऐसे स्थानों को पसन्द कीजिए जिन्हें आप देख चुके हैं। कुछ दिनों के वाद उस दिव्य प्रकाश में वह स्थान आप अवश्यमेव देख पाएंगे। इस साधना का मर्म यही है कि आपका एकाग्र, एकप्रवाही जाग्रत मन (वहिर्मन) और अंतर्मन, इन दोनों का एक क्षणभर के लिए मिलन हो जाता है। ऐसी स्थिति में जिस स्थान के बारें आप जाग्रत मन में सोचते हैं, उस के संबंधित विचार शलाका-स्पर्श अन्तर्मन को हो कर आप उसी

स्थान के तत्काल दर्शन करते हैं। अन्तर्मन सर्वव्याप्त है। एकाद स्थान संबंधित सूचना मिलते ही, उस अंतर्मन में उस स्थान का प्रतिबिंब (Reflection) प्रकट होता है। इस प्रतिबिंब का संचार बहिर्मन में होने से आप उस स्थान विशेष को देख सकते हैं। काँच की आवश्यकता केवल शुरुआत में महसूस होती है। क्योंकि बहिर्मन में प्रकट होनेवाला वह दृश्य उस कांच में दिखाई देता है। इस साधना की उच्चतम सीढ़ी पर पहुँचने के बाद काँच की कोई भी आवश्यकता नहीं रह जाती।

यह साधना साधारण साधकों के पहुँच की बात नहीं है। क्योंकि जिन्हें दिव्य-दृष्टि का लाभ हुआ है ऐसे योगी-महात्मा दुनिया में बहुत कम पाए जाते हैं। हर दिन एक घंटे के हिसाब से कई महीनों तक इस साधना का अभ्यास करने के बावजूद भी मैं इसमें पूरी तरह सफल नहीं रहा। मेरी साधना के दरमियान एक दिन मुझे जंगल, उसमें चरनेवाले हिरन दिखाई दिए, और एक बार क्रिकेट के मैच को भी मैं देख सका। इस साधना में मैं अधिक कुछ भी नहीं पा सका। फिर भी मेरे गुरु के द्वारा यह साधना बताई गई है। इसलिए मेरे पाठकों के लिए मैं उसकी चर्चा कर रहा हूँ। आपमें से कोई पाठक इसमें सफल होगा, तो मुझे बड़ी खुशी होगी। लेकिन दूर-दर्शन की सिद्धि के लिए ऊपर वर्णित साधना के सिवाय अन्य कोई उपाय नहीं है।

(५) **भविष्य–कथन सिद्धि :** पातंजलयोगदर्शन कहता है कि यह एक साधारण सिद्धि है। दूर–दर्शन (Clairvoyance) सिद्धि में " स्थान "(Space) की प्रधानता रहती है। तो भविष्य-कथन में " काल " (Time) के अंग की प्रधानता होती है। लेकिन अंतर्मन (Subconscious mind) स्थल-काल की मर्यादा से मुक्त रहता है। जाग्रत मन (बहिर्मन–Conscious mind) का विसर्जन हो जाने के बाद मनुष्य की सारी इंद्रियाँ केवल अंतर्मन (Subconscious mind) के काबू में आ जाती हैं। मनकी आत्यंतिक एकाग्रता के कारण जाग्रत मन और अंतर्मन का क्षणकाल के लिए मिलन हो जाता है। अंतर्मन त्रिकाल ज्ञानी होता है। एकाग्र होकर निम्न सवाल को उपस्थित करना चाहिए। " मेरे सामने उपस्थित व्यक्ति के भूतकाल में विशेष समय पर क्या घटना घटी है ? तथा भविष्य में क्या घटना घटेगी ?" और अंतर्मन में सवाल का प्रवेश होने के बाद इस के जवाब का ज्ञान बहिर्मन तक आ पहुँचेगा। लेकिन इन मनोभूमियों का स्पर्श केवल क्षणभर के लिए होता है। मूर्तिध्यान त्राटक की साधना से इस काल को बढाया जा सकता है। जन्मपत्रिका, हस्तरेषा, अंकशास्त्र आदि के आधार पर ग्रहस्थिति को जानकर भविष्यकथन किया जाता है। लेकिन यह भौतिक (अथवा जड़) ज्ञान है। इस ज्ञान के साथ अंतर्ज्ञान को जोड़ देने से भविष्य–कथन सत्य साबित होता है। इस शास्त्र में जड़ बुद्धि की अपेक्षा चेतनामय

अंतर्मन पर अधिक निर्भर रहना चाहिए। ज्योतिष अथवा हस्त सामुद्रिक दोनों भी शास्त्र हैं। फिर भी दस लोग जब भविष्य-कथन करते हैं तब उनमें से दो-एक का कथन सच निकलता हैं। इसका कारण यही है कि जो भविष्य-कथन असत्य निकला, उसके बारे में अन्तर्मन और अंतर्ज्ञान का पूर्णतया अभाव रहा। बहिर्मन का ज्ञान सन्देहयुक्त होता हैं और अंतर्मन से प्राप्त ज्ञान निःसंदेह होता है।

एक लड़के को संमोहित कर मैंने पूछा, " ३४३×२८ = कितने होते हैं ? " उसने जवाब दिया, " ९५७६।" एक स्लेट ले कर हमने भी उस गणित को किया तब उत्तर ९४७६ आ गया जो गलत था। बहिर्मन की बुद्धिका वह उत्तर गलत रहा और अन्तर्मन ने जिसे ढूंढ लिया वह उत्तर सही रहा। अन्तर्मन और बहिर्मन के मिलन की घटनाएँ हमेशा नहीं घटती। भविष्य-कथन व्यवसाय में मुझे कई बार ऐसा अनुभव हो चुका है। मेरी सफलता के जो भी उदाहरण मैं दे रहा हूँ उसके पीछे आत्मप्रशंसा या घमंड का भाव बिलकुल नहीं है। उसके पीछे एक ही उद्देश्य है और वह है पाठकों का मार्गदर्शन।

उन दिनों मैं कोल्हापुर में रहा करता था। एक दिन एक ऐसा व्यक्ति मेरे सामने उपस्थित हुआ जिसके पहनावे से वह खेतीहर लगता था। मैली धोती, सिर पर मुडासा, देहाती बोली ये उसकी विशेषता थी। वह अपना भविष्य जानना चाहता था। अब एक मामुली किसान का भविष्य क्या हो सकता है ? मैंने उसे सामनें बिठाया और उसके पंजे पर मेरा पंजा रख दिया। मन एकाग्र किया। आलिशान मकान, मोटरगाडी, ऊँचे वस्त्राभूषण आदि के विचार मन में उद्भावित हो गए। मैंने कहा, " बाबा, तुम्हारा भविष्य बताना मेरे लिए कठिन है। यह हात जिसका है उसके नसीब में बड़ा मकान, मोटरगाडी आदि हैं। तुम तो एक किसान दिखाई देते हो।" उसने कहा , " क्यों गरीब का मज़ाक उड़ाते हैं ? कुछ भी भविष्य कथन कीजिए। आपकी फीस मैं दे दूंगा।" फिर भी मैंने कुछ भी नहीं कहा। वह भी चला गया। दूसरे दिन सवेरे एक आलीशान मोटर गाडी मेरे दरवाजे पर रुक गई। उसके ड्राईवरने बताया, " सरदार साहब ने दावत दी है। चलिए। " मैं चला गया। उसी आलीशान बंगले के भव्य दालन में एक तेजस्वी सज्जन बैठे थे ऊँचे-वस्त्राभूषण पहने हुए। बड़े स्वागत के साथ उन्होंने मुझे बिठा लिया। मैं कुछ चक्कर में पड़ गया। उन्होंने मेरी स्थिति को पहचान कर झट कह दिया, " आपने मुझे नहीं पहचाना ? किसान की पोशाक में मैं ही कल आपके घर उपस्थित था ! क्षमा कीजिए, मैं आपकी परीक्षा लेना चाहता था। " फिर गपशप आदि के बाद भोजन हो गया और उन्होंने मुझे अपनी गाडी में बिठाकर मेरे घर छुडा दिया।

एक दिन एक महिला मेरे घर आ गई। मन एकाग्र करने पर जिसका पैर टूटा हो ऐसे व्यक्ति के बारे में मन सोचने लगा। मैंने उस से सवाल किया,

"तुम्हारे रिश्तेदारों में से किसी का पैर टूटा तो नहीं गया है ?" उस औरत ने मेरे पैर पकड लिए और बताया कि कल ही डाक्टरों ने उसके पति की बायी टाँग को आपरेशन कराके काट दिया है।

एक दिन पूना के प्रसिद्ध फर्ग्युसन कालिज के ग्रंथपाल मुझसे मिलने आए। ज्योतिषशास्त्र तथा हस्तसामुद्रिक में उनका विश्वास नहीं था। उनके साथ और तीन–चार व्यक्ति थे। उनके हाथ को स्पर्श करते ही मेरा मन एकाग्र हो गया और मेरे मन में विवाह-मंडप, बाजे, पक्वानों का भोजन आदि आदि बातों के विचार आ गए। इन विचारों के बाद झट दूसरे भी विचार मन में उद्‌भावित हो गए जिसका मतलब था चूल्हे (स्टोव) की आग का भडक जाना और उसमें किसी व्यक्ति का घायल हो जाना। मैंने उनसे कहा, "आपको अग्नि से ड़र है। साल-भर के लिए शादी–व्याह का मामला रोक दीजिए।" कुछ महीनों के बाद खबर मिली कि शादी के समय स्टोव भडक जाने की दुर्घटना में उनकी मृत्यु हो गई।

ज्योतिषशास्त्र में सफलता पाने के लिए ग्रह गणित और हस्तरेखा-विज्ञान काफी नहीं है। बहिर्मन का अन्तर्मन से होनेवाला स्पर्श भी इसमें अपना अलग महत्त्व रखता है। विश्वविख्यात ज्योतिषी और हस्तरेखा-विज्ञान के महापंडित किरो की सफलता का राज़ यही साधना थी।

(६) **रोमानी सिद्धि :** अरेबियन नाईट्स आदि अद्‌भूत कथाओं में हम पढ़ते हैं कि जिन्द, राक्षस आदि अतींद्रिय कोटि के प्राणियों को वश में कर लेने से वे जीव मनुष्य के द्वारा बताए आश्चर्यकारक कामों को कर डालते हैं। ये कथाएँ काल्पनिक होने के कारण इन राक्षसों के द्वारा किए गए अद्‌भुत कार्यों को कोई भी पाठक सच नहीं मानता। मनोरंजन का एक साधन इतना ही महत्त्व इन बातों को दिया जाता है।

लेकिन एक सवाल हम अवश्यमेंव उपस्थित कर सकते हैं। वह यह है कि, अरेबियन नाईट्स् जैसी कथाओं का मूल सूत्र पकड़ कर उस प्रकार के अतींद्रिय मानव का सृजन कर, उसके चतुर्परिमाणवाले (Four dimensional) मन के द्वारा कुछ अलौकिक अद्‌भूत कृत्य किए जा सकते हैं या नहीं ? और यह सच भी हो सकता है कि साधक ऐसे अति-मानवीय जीव की निर्मिति की बात पर जरूर सोचते होंगे।

इन प्रश्नों की दिशा में सहाय्यक होनेवाली एक दिव्य साधना इस ग्रंथ में पहली बार प्रकट कर रहा हूँ। इसका ज्ञान मुझे मेरे गुरु के द्वारा हो गया है। अतींद्रिय या गूढ शास्त्र की चर्चा करनेवाले किसी भी ग्रंथ में इस साधना की मालुमात अभी तक नहीं प्रकट की गई है।

प्रात:काल नींद खुलने पर साधक वैसा ही पड़ा रहे। नींद खुलनेपर आदमीका मन निर्विकार होता है। अत: प्रात:काल इस साधना के लिये योग्य समय है। फिर

साधक मन ही मन अपने पंचतत्त्वयुक्त सूक्ष्म मन का एक छोटासा अंश काट कर अलग करे। अपने मन के उस अलग अंश से मन ही मन एक आकृति (Form) का सृजन करे। यह आकृति साधक के अपनेही चैतन्यमय मन का एक अंश है। फिर अपने मनके द्वारा उस आकृति में एक अंतर्मन को प्रतिष्ठित करे। ऐसा करने से साधक के ही चैतन्यमय मन कि देह और देह में साधक के ही अन्तर्मन रूपी मन का अस्तित्व इस तरह की एक दिव्य देह तैयार हो जाएगी। यह देह अपनीही मानस-कन्या हैं ऐसा साधक माने। जितने समय के लिए उसे याद करना संभव है, साधक याद करता रहे। इस विचार (Thought form) को कभी भी भूलने न दे। इस मानस-कन्या की अच्छी देखभाल साधक मन ही मन करे। जैसे कि स्नान कराना, बाल वनाना, खाना खिलाना आदि। इस साधना का रहस्य यही है कि साधक इस मानस-कन्या को क्षणार्ध के लिए भी न भूल पाए। कुछ महीनों के बाद यह विचार (Thought form) एक निश्चित ठोस (Concrete) रूप धारण कर लेगा। इस के बाद मन ही मन अपनी इस मानसकन्या से वातचित करने की कोशिश साधक करता रहे। इसमें शीघ्र सफलता असंभव है। क्योंकि यह मानसकन्या खुद साधक के मन का सृजन होने के बावजूद भी वह उसे अजनवी पाता हैं। कुछ दिनों के बाद साधक और उसकी मानस-कन्या के बीच विचारों का आदान-प्रदान शुरू होगा। कभी कभी साधक को लगेगा कि उसके शरीर को कोई स्पर्श कर रहा हो। जब यह आकृति साधक के मन में ठोस रूप धारण कर पैठ जायगी तब वह उसकी दासी बन जाएगी। साधक का त्रिपरिमाणयुक्त (Three dimensional) मन जिन बातों को कर नहीं सकेगा उन बातों को यह मानस-कन्या बडी आसानीसे कर डालेंगी। "फलाँ जगह क्या चल रहा है?" इस तरह सवाल करते ही वह वहाँ की घटनाओं का ज्ञान विचार-धाराओं के रूप में साधक के बहिर्मन में छोड देगी।" फलाँ मित्र को बुला लेना।" जैसी आज्ञा के सुनते ही यह मानस-कन्या उस सन्देश को उस मित्र के मन तक पहुँचाएगी और वह मित्र तुरन्त साधक से मिलने आएगा।" साधना-काल में मेरे मन में अन्य विचार उद्भावित होते हैं, उन्हें मन से निकाल दे। "ऐसी आज्ञा पाते ही यह मानस-कन्या उन फालतू विचारों को मन से निकाल देगी। "कुछ ऐसा कर कि जिस के कारण मैं गहरी नींद में खो जाऊँ।" ऐसा सोचते ही साधक सो जाएगा। भविष्य-कथन में यह मानस-कन्या वडी उपयुक्त चीज हैं। लेकिन भौतिक या जड, व्यावहारिक लाभ के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। क्योंकि इस मानस-कन्या की देह प्रवाही है और उसके केवल अन्तर्मन है। अतः भौतिक चीजें उसके द्वारा नहीं होंगी।

इस साधना की परमोच्च सीढी पर ऐसी मानस-कन्या का साथ साधक के लिए अति सुखद सिद्ध होता है। उसकी देह दिव्यत्वकी निशानी होने के कारण उसका साथ भी ईश्वरीय आनंद की खान सिद्ध होगा। साधक को इस मानस-

कन्या के लिए कौडी का भी खर्च नहीं है । वह न कभी बीमार हो सकती है, न उसकी उम्र बढ़ सकती है। वह अमर ह। आगे चलकर ऐसा लगेगा कि इस सारे संसार में साधक और उसकी दिव्य मानस-कन्या इनके सिवा अन्य किसी का अस्तित्व ही नहीं है । इस साधना के लिए मैंने " रोमानी " नाम दे रखा है। लेकिन उसका तार्किक स्पष्टीकरण करना मैं उचित नहीं समझता।

रोमानी सिद्धि के बारे में एक इशारा भी देना चाहता हूँ। साधक इस मानस-कन्या को लगातार कष्ट न दे। शायद वह भी थक जा सकती है या उसे भी कंटाला आ सकता है ।

कुछ पाठक पूछ सकते हैं कि इस साधना के लिए किसी देवता विशेष की मूर्ति को क्यों न लिया जाए? लेकिन मेरी स्पष्ट राय हैं कि मामुली, व्यावहारिक कार्य में देवता या भगवान को खींच ले आना अत्यंत अयोग्य बात है। विविध देवता और ईश्वर का संबंध मुक्ति से है ।

अब तक पांच-छ: सिद्धियाँ, उनकी साधनाओं की विधियाँ और उनके फल आदि की चर्चा मैं कर चुका हूँ। पाठक न भूलें कि किसी जादुगर के समान इन सिद्धियों को जहाँ चाहे वहाँ प्रकट नहीं किया जा सकता । केवल अद्‌भुत दिखाने की इच्छा से इनको प्रकट करने का प्रयत्न करने से साधक की फजिहत हो सकती हैं। योगी की सिद्धियाँ अपने आप (अनायास) प्रकट होती है। भगवान ईसा मसीह कें वस्त्र के छोर को स्पर्श करने से भी महारोग जैसी बीमारियाँ ठीक हो जाती थीं। भगवान ईसा शायद ही इसे जानते होंगे । सिद्धियाँ प्रकट होने के लिए " बोध " आवश्यक है । लेकिन ज्ञानियों का " बोध " ब्रह्म में विलीन हो जाता है । अतः " बोध " के अभाव के कारण ज्ञानियों में सिद्धियाँ नहीं प्रकट होती । यह मेरा अनुभव रहा है ।

" देह–भाव को भूल जाइए । "

" मैं हूँ । " " अहम् अस्मि " के ज्ञान का अस्त होने से ही साधक ब्रह्म बन जाता है ऐसा त्रिपुरा-रहस्य नामक ग्रंथ में कहा गया है। (True experience of the self is the unawareness of even " I AM. ")

साँप अपनी केंचुली को छोड़कर चला जाता है और उसे इस घटना की याद भी नहीं रहती। उसी प्रकार आत्मज्ञान की स्थिति तक पहुँचे व्यक्ति को अपनी देह का भी खयाल नहीं रहता। देह की विस्मृति होनेपर देहसंबंधित संसार, सुख-दुःख, साधना-सिद्धि, बंध-मोक्ष आदि कल्पनाएँ भी नष्ट हो जाती हैं और योगी मन की आनंदमय तूर्यावस्था में स्थिर हो जाता है। जब वह तूर्यावस्था के भी आगे बढ जाता है तब उस स्थिति का वर्णन भी नहीं किया जा सकता । " ब्रह्मैव भवति"– (" ब्रह्मविद् ब्रह्म जाननेवाला खुद ब्रह्म बन जाता हैं। ") यह

श्रुतिवचन प्रसिद्ध है। देह की विस्मृति हो जाना कोई कठिन सिद्धि नहीं है। कुछ दिनों के प्रयास से आप भी उसे प्राप्त कर सकते हैं।

देह-भाव का अभाव अथवा देह-भाव का विस्मरण ब्रह्मानंद के समान उच्च कोटी की स्थिति है। किसी भी देश के सन्त-साहित्य में इस का प्रमाण मिल सकता है।

देहातीत (देह के पार की) स्थिति को प्राप्त करने के लिए निम्न प्रकार की तीन–चार विधियों का वर्णन कर रहा हूँ। दिनभर में कभी न कभी इनपर अमल करने से दिव्यानंद प्राप्त होता है।

(१) आप कल्पना कीजिए की आप एक सपना देख रहे हैं। उसमें आप देख रहे हैं कि आप कुछ जमीन खरीदकर उस पर अच्छा खासा मकान बंधवा रहे हैं। आपका मकान खड़ा हो चुका है। गृह-प्रवेश के लिए आपके रिश्तेदारों तथा मित्रों को आपने दावत दी है। इतने में आप जाग उठते हैं। अब ऐसी कल्पना कीजिए कि वह सपना पूर्ववत् जारी है। सभी मित्र-मंडली का भोजन हो चुका है; रात के समय मनोरंजन के कार्यक्रम भी हो गये; और आप नए मकान में रहने लगे। अब सपना टूट जाने के बाद होनेवाली घटनाओं का ज्ञान आप को नहीं है। क्यों कि सपना देखनेवाला स्वप्न-द्रष्टा ही अदृश्य हो गया। जागृति की दशा भी उसी प्रकार समझ लीजिए। अब मान लीजिए कि मानो जाग्रत दशा को अनुभव करनेवाला जाग्रत द्रष्टा अदृश्य हो गया हो। अब ऐसी स्थिति में जाग्रतावस्था में आगे घटनेवाली घटनाओं का ज्ञान आपको नहीं होगा। लेकिन वह घटनाचक्र तो जारी ही है। क्योंकि जाग्रतावस्था का द्रष्टा ही अदृश्य है। इस विचार से आपको बडी शक्ति के साथ दिव्यानंद का लाभ होता है।

(२) रेगिस्तान में दोपहर के समय मृगजल दिखाई देता है और उसके बीच में सूरज का प्रतिबिंब भी दिखाई देता है। मूल मृगजल असत्य है। अतः उस में प्रतिबिंबित सूरज की प्रतिमा भी असत्य है। इस घटना में सत्य है केवल सूरज की किरणें। मृगजल तथा सूर्यप्रतिबिंब दोनों भी असत्य, भ्रामक है। चैतन्य सत्य है। लेकिन मनरूपी मृगजल में जीवदशा रूपी चैतन्य दिखाई देता है। मन और उसमें प्रतिबिंबित यह जीवदशा दोनों भी असत्य हैं। इस विचार को समझने से और उसके सत्य को जानने से जीवसंबंधित असत्य से साधक मुक्त हो जाता है।

(३) "मेरी देह दस-बीस फीट की दूरी पर है और "मैं" केवल उसे देख रहा हूँ। उस देह के सुख-दुखों, अपमानों, असफलताओं, आदिसे "मैं" मुक्त हूँ।", ऐसा आप सोचते रहिए। इस साधना से देहविषयक पीडाओं से आप बचे रहते हैं और आपको मनस्वास्थ्य का लाभ होता है।

(४) कल्पना कीजिए कि आप जमीन में बनी चिंटियों की बाँबी के पास खड़े हैं। चिंटियाँ दाएं–बाएं दौड़ रही हैं। अपने मुंह में वे अनाज के दाने

ले जा रही हैं। बीच में रुक कर आपस म बातचित कर रही हैं। छोटासा जल–प्रवाह पार करने में उन्हें कठिनाइयाँ महसूस हो रही हैं। आपकी दृष्टि में ये सारे दृश्य बचकानी (Childish) बातें हैं। क्योंकि आप चिंटी नहीं हैं; मानव हैं। आपकी दृष्टि में ये चिंटियाँ नगण्य हैं। उसी तरह आप अति–मानव (Divine Being) बन कर इस संसार की और देखना सीखिए। दुनिया भर की अमीरी-अधिकार, सौंदर्य आदि आदि बातें बच्चों के खेल जैसी महसूस होंगी। आप अति-मानव की कोटि में प्रवेश कर एक महान ऊँचाई तक पहुँचे हैं और इसीलिए साधारण मानव–प्राणी का यह संसार आपकी नजरों में चिंटियों के संसार-समान है। इस विचार से आपका मन बाहरी चीजों के प्रति होनेवाली वासनाओं से मुक्त हो जाएगा और आप दिव्य–आनंद की स्थिति का अनुभव करेंगे।

(५) ईश्वर की इच्छा से इस संसार का कारोबार चल रहा है और मैं भी इस संसार का एक अंश होने के नाते मेरा जीवन भी ईश्वर की इच्छा से चल रहा ह, ऐसी श्रद्धा से जीवन बिताइए। यही श्रद्धा भक्ति–मार्ग (भक्ति-योग) की चरम सीमा है। आपके जीवन को बनाने–बिघडानेवाला एकमात्र ईश्वर है, इस सत्य को पहचान कर उस सर्वसाक्षी ईश्वर की इच्छा के अनुसार जीवन बिताने की सही कोशिश कीजिए। यह नसीब के भरोसे जीने की तरह नहीं है। यह अंधश्रद्धा भी नहीं है। मेरा अनुभव कह रहा है कि यह सत्य है। इस श्रद्धा का विकास यहाँ तक करिएगा कि जब आप अपनी उँगली को भी उठाएंगे तब मन में यह विचार ध्वनित होना चाहिए कि ईश्वर की इच्छासे ही आपकी उँगली हिल रही हैं! इस विचारधारा से महान लाभ होता है। मनुष्य की जीवदशा समाप्त होती है। मानवीय जीवन ईश्वर की इच्छासे चलता है और मानवीय देह पर एकमात्र ईश्वर का अधिकार है। अतः वह दयालु ईश्वर उसे अवश्यमेव मुक्ति देगा, यह भाव मन में स्थिर हो जाता है।

इन विचारों का विकास दो–चार दिनों में नहीं होगा। वह एक दीर्घ तपस्या है। लेकिन उसके लिए किसी वन में जाने की आवश्यकता नहीं है। दिन में जब कभी मौका मिले तो इन विचारों को मन में जगाते रहना चाहिए। इस विचारधारा के कारण जीवन के प्रति प्रकट होनेवाली अनावश्यक भयपूर्ण गंभीरता घटती जाती है और मन को लगता है कि यह समूचा विश्व ईश्वर का एक छोटासा खेल है। इस मनोदशा को प्राप्त करने के बाद सुख–दुःख, मानापमान, आशा-निराशा, सफलता या असफलता आदि बातों से मनुष्य मुक्त रह जाता है। मेरा अनुभव रहा है कि अंतिम अनुच्छेद में मैंने जो उपाय बताया है वह सर्वश्रेष्ठ और शीघ्र फल देनेवाला है।

◻ ◻ ◻

.१२.

वस्तुओं को अभिमंत्रित करना

इस संसार में पाई जानेवाली हर वस्तु में कोई न कोई विशेष कुदरती (स्वाभाविक) शक्ति वास करती है, इस सत्य को सभी जानते हैं। लोहचुंबक लोहे को अपनी ओर खींच लेता है। क्विनाइन मलेरिया को हटाता है। शराब, अफीम या भांग से नशा आ जाता है। वे उन चीजों के निजी गुण हैं। किसी वस्तु विशेष में किसी गुण विशेष (या शक्ति विशेष) का होना एक दैवी योजना है। अतः वस्तु में वास करनेवाली शक्ति या गुण जब तक वह वस्तु संसार में होती है तब तक रहता है–नष्ट नहीं होता।

अतींद्रिय (इंद्रियों के पार) ज्ञान जिन्हों ने हासील किया है ऐसे योगी-महात्माओं का कहना है कि इस जड़ संसार में पाई जानेवाली किसी भी वस्तु विशेष में विचार-संक्रमण के द्वारा अन्य कोई भी गुण प्रक्षेपित (Project) किया जा सकता है। मानवी शक्ति तथा ज्ञान के द्वारा किसी वस्तु विशेष के संबंध में इस प्रक्रिया को सफल बनाने के बीसों उहाहरण मिल सकते हैं। जो इन पिरामिडों को खोदने की कोशिश करेगा वह नष्ट हो जाएगा इस प्रकार की शापवाणी इजिप्त के पिरामिडों के संबंध में किसी महाशक्तिशाली व्यक्ति ने उच्चारित कर रखी है, और उसका अनुभव बहुत पुरातत्त्ववेत्ता कर चुके हैं। "होप" के समान कीमती हीरा जिसके पास होगा, उसका सर्वस्व नष्ट हो जायगा, ऐसी प्रभावशाली इच्छा को (या शापवाणी को) किसीने व्यक्त किया होगा। शनिग्रह का रत्न पहनने से दारिद्रय नष्ट होता हैं और उसको पहननेवाला अमीर बन जाता है, ऐसी श्रद्धा लोगों में प्रचलित है। अब सवाल यह है कि दारिद्रय को मिटाने की शक्ति उस बेजान कंकड़ जैसी वस्तु में है या उसका स्रोत कहीं और जगह है ? दारिद्रय दूर करने का गुण या सामर्थ्य उस रत्न में नहीं है। वह सामर्थ्य है उस मनोकामना में, उस संकल्प में जिसे किसी महान योगी-महात्मा ने उस रत्न में (या हीरे में) स्थापित

कर दिया है। किसी वस्तु क वारे में हम जो भी कुछ अनुभव करते हैं उसकी आधारशिला यही है कि वह वस्तु किस व्यक्ति ने हमे प्रदान की है और किस भाव से प्रदान की है। जीवन में इसका बड़ा महत्त्व है। दो वैद्य या डाक्टर एक ही दवा देते हैं। लेकिन एक डाक्टर की दवा निष्फल सिद्ध होती है और दूसरे डाक्टर की दवा से मरीज की तबीयत सुधारने लगती है। इसका कारण यही है कि दूसरा डाक्टर अपने मरीज को दवा देते समय अपनी सदिच्छाओं का प्रक्षेपण (Projection) उस दवा पर कर देता है। किसी फल विशेष को भक्षण करने से दशरथ को सन्तान का लाभ हुआ। क्या अयोध्या में उस जाति के फलों की कमी थी ? नहीं। बिलकुल नहीं । फिर उसी फल का अद्भुत परिणाम क्यों निकल आया ? वह फल एक साधु-महात्मा का दिया हुआ था जिसकी सदिच्छाएँ और आशीर्वाद उसमें थे। साधारण आदमी के आशीर्वाद की अपेक्षा किसी सदाचारी, त्यागी, ज्ञानी, दयालू सज्जन के आशीर्वाद अधिक सफल हो जाते हैं। आशीर्वाद के शब्द वे ही होते हैं लेकिन आशीर्वाद देनेवालों के भावों की शक्ति अलग होती है। एक स्त्री का सिरदर्द केवल श्रद्धा के आधार पर कैसे दूर हुआ इसकी कहानी तो मैं पहले ही कह चुका हूँ।

वस्तु और वाणी में अपनी मानसिक शक्ति को स्थापित किया जा सकता है। प्राचीन भारतीय ऋषि–मुनि लोग प्रसन्न होनेपर वर और क्रोधायमान होने पर शाप दिया करते थे। आज-कल ऐसे वर अथवा शाप देने पर उनका कहाँ तक असर होगा, इस पर सोचा जा सकता है। प्राचीन ऋषी-मुनि तपस्या करते थे। और वह भी बडे लंबे समय के लिए। फलस्वरूप उनका सांसारिक जीवन भी अन्तर्मन के सहारे चलता था। उनके विचारों, भावों तथा इच्छाओं के प्रवाह का उद्गम उनके अन्तर्मन रूपी मानसरोवर में हो जाने के कारण वे सभी सत्यसंकल्परूप बन जाते थे। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात ऐसी है कि उस जमाने में जनसाधारण के मन में ऋषि-मुनियों के प्रति अपार श्रद्धा रहती थी। उनका मन ऋषि-मुनियों के प्रति विश्वासपूर्ण होता था। महानतम सम्राट भी ऋषिमुनियों का आदर करते थे। इतनाही नहीं तो उनके चरण धोने में वे धन्य समझते थे। इस श्रद्धा तथा विश्वास का स्वाभाविक परिणाम यह निकलता था कि उन ऋषि-मुनियों के मुँह से निकला शब्द सत्य हो कर ही रहेगा ऐसी समाज की धारणा बन चुकी थी। ऋषि-मुनियों के अन्तर्मन से निकला संकल्प और लोगों की असीम श्रद्धा एक होने के कारण ऋषि-मुनियों के वर तथा शाप सच होकर ही रहते थे। शाप और वरदान को असत्य अथवा अंध श्रद्धा मानना एक महान गलती है। देहाती जीवन में शापवाणी सच निकलने के बीसों प्रमाण मिल सकते हैं। साधारण तौर पर गरीबों को सतानेवाले को गाँव की निष्पाप प्रजा शाप देती है। किसी गाँव में जाने के बाद एकाद उजड़ा हुआ घर दिखाई देता है और पूछने पर वहाँ के लोग बताते

हैं कि वह घर ऐसे ही दुष्ट व्यक्ति का था और गरीबों की शापवाणी से उस घराने का कोई भी नहीं बच सका।

इतने दीर्घ प्राक्कथन के बाद मूल विषय की ओर आगे बढ़ेंगे। किसी वस्तु में जो गुण स्वाभाविक नहीं है उसे पैदा करना, अपनी वाणी तथा इच्छा को प्रभावशाली बनाना आदि के बारे में मैं चर्चा करना चाहता हूँ। किसी वस्तु में किसी शक्ति अथवा गुण का प्रक्षेपण करने की विधि को प्रचलित भाषा में उस वस्तु को अभिमंत्रित करना या मंत्रसिद्ध करना या मंतराना कहते हैं। भूत-प्रेत बाधा को नष्ट करने के लिए डोरा या तावीज देना, नींबू मंतराना, पानी अभिमंत्रित कर मरीज़ को देना, सिद्धि तथा लक्ष्मी यंत्र तैयार करना, आदि बातों को सभी जानते ही हैं। अब इनका योग्य परिणाम निकल आना दो बातों पर निर्भर है। पहली आवश्यक बात यह है कि उस वस्तु को अभिमंत्रित करनेवाला मांत्रिक निर्विचार अवस्था में हो और जिस गुण को उस वस्तु में वह अभिमंत्रित करता है, उस गुण के बारे में उसका संकल्प पूर्णरूपेण श्रद्धायुक्त हो। दूसरी आवश्यक बात यह है कि जिस व्यक्ति के लाभ के लिए वस्तु में नया गुण अभिमंत्रित किया जा रहा है, उस व्यक्ति का मन भी उस अभिमंत्रित गुण के बारे में पूर्ण श्रद्धायुक्त हो। जिस गुण को वस्तु में अभिमंत्रित करना है, उस गुण के बारे में, अगर साधक सन्देह करता हो, तो ऐसी परिस्थिति में उस वस्तु में उस अपेक्षित गुण विशेष की स्थापना नहीं होगी। लेकिन संयोगवश उस अभिमंत्रित वस्तु से लाभ भी हो सकता है। फिर भी उसका श्रेय मांत्रिक को नहीं है। वह श्रेय श्रद्धा के साथ उस अभिमंत्रित वस्तु का स्वीकार करनेवाले व्यक्ति को है। लेकिन दृढ संकल्प में अभिमंत्रित वस्तु परिणामकारक सिद्ध होती ही है। फिर श्रद्धा हो या न हो। यह प्रमाणित बात है। भरोसा हो या न हो, विष प्राशन करने पर मृत्यु यह उसका स्वाभाविक फल है। लेकिन साधक (याने मांत्रिक) और अभिमंत्रित वस्तु को पानेवाला, इन दोनों का श्रद्धायुक्त होना दुग्धशर्करा योग है।

कोई वस्तु विशेष क्यों और कैसे अभिमंत्रित होती है? जो उस वस्तु का गुण नहीं है वह उस में कैसे बस जाता है? इस गुण का प्रक्षेपण उस वस्तु में कैसे होता है? इन सभी प्रश्नों के उत्तर देने की कोशीश मैं कर रहा हूँ। यह विषय अत्यंत गहन है। गंभीर है। अतः इस अध्याय को ध्यानपूर्वक पढना अत्यन्त आवश्यक ह।

जिस गुणधर्म का प्रक्षेपण किसी वस्तु में करना है, उस गुण से युक्त वस्तु की एक विचाराकृति (Thought form) को एकाग्र मन में पैदाकर उस आकृति को खास तरीके से अभिमंत्रित करने की वस्तु में प्रक्षेपित करना यह एक सुप्त प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया को समझाने के लिए मैं एक उदाहरण देना चाहता हूँ। मान लीजिए कि, किसी व्यक्ति पर किसी पिशाच का साया है। इसे पिशाचबाधा

पिशाच हावी होना, भूतग्रस्त होना भी कहते हैं। अब उस व्यक्ति को इस संकट से छुडाने के लिए एक डोरे को अभिमंत्रित करना है। ऐसे समय साधक (या मांत्रिक) उस डोरे को अपने हाथ में रखे। अपने मन को एकाग्र और निर्विचार-निर्विकार करे। साधक का मन जितना अधिक एकाग्र होगा, डोरा उतना अधिक प्रभावशाली सिद्ध होगा। जिसका नाम सुनते ही भूत-प्रेत भी डर के मारे काँपने लगते हैं, उस प्रभु रामचंद्र या दत्तात्रेय की मूर्ति को साधक अपने निर्विचार मन में प्रतिष्ठित करे। अब यह विचाराकृति साधक के मन में व्याप्त है। साधक का मन ही उसकी आधारशिला है। बिना किसी आधार के उसका अस्तित्व असंभव है। अब साधक संकल्प करे कि इस आकृति की समूची शक्ति और पवित्रता उस डोरे में जा बैठे। इस के बाद साधक थोड़ासा रुक जाये। जब वह विचाररूप देवताकृति अंतःचक्षू से हट जाएगी (याने अदृश्य होगी) तब साधक पहचाने कि उसकी स्थापना उस डोरे में हो गई है और वह डोरा अब अभिमंत्रित हो गया है। इस प्रक्रिया का अर्थ यह है कि साधक के मन की आधारशिला टूट पडने से वह आकृति डोरे में जा बसी है। इसके बाद साधक उस डोरे को पीड़ित व्यक्ति की कलाई में (अथवा गले में या कहीं भी) बाँध दे। डोरे में प्रक्षेपित आकृति अपने गुणधर्म के कारण अपना नियत कार्य शुरू करेंगी और वह व्यक्ति पिशाच पीड़ा से (या अन्य किसी भी पीड़ा से) मुक्त हो जाएगा। कुछ लोग समझते हैं कि, डोरा देनेवाला मांत्रिक कुछ मंत्रों का पठन करता है और उस मंत्रप्रभाव से उस डोरे में खास शक्ति निर्माण होती है। लेकिन यह सत्य नहीं है। मान लीजिए कि, वह साधक कुछ मंत्रों का पाठ करता हो। फिर भी वे मंत्र भगवान की स्तुति में रचे वाक्य, या पद्यपंक्तियाँ होती हैं। अतः यह प्रक्रिया वही होती है जिसका वर्णन मैं कर चुका हूँ। मंत्रों की शक्ति के बारे में बड़ा विवाद हो सकता है। मंत्रों के प्रभाव को मैंने अभितक अनुभव नहीं किया है। अतः किंवदन्तियों पर भरोसा रखना मेरे बारे में असंभव है। लेकिन मेरा यह अनुभव रहा है कि संकल्प की शक्ति असीमित है। सत्य और श्रद्धायुक्त संकल्प को मंत्र कहा जा सकता है।

रोजमर्रा बातों में वस्तुओं को अभिमंत्रित कैसे किया जाता है और इस विधि का क्या फल निकलता है इसके बारे में मैं अब चर्चा करूँगा। किसी भी वस्तु को अभिमंत्रित करते समय साधक का एकान्त में होना नितांत आवश्यक है। आसपास या उस कमरे में अन्य कोई न हो। इस विधि के पहले हाथ-पैर धो कर शूचिर्भूत होना चाहिए। साधक शुभ्र वस्त्र धारण करे। उसका मन निर्भय, प्रसन्न तथा श्रद्धायुक्त हो। "मैं जिसे अभिमंत्रित कर रहा हूँ, उस वस्तु में वह गुण जरूर बस जाएगा।" इस दृढ विश्वास के साथ साधक अपना कार्य जारी रखे। इस साधना की प्रारंभिक अवस्था में नास्तिक अथवा ऐसी अतींद्रिय शक्ति पर भरोसा न करनेवाले लोगों को ऐसी अभिमंत्रित वस्तुएँ न दी जाये। जब आप ही इस

रास्तेपर नए मुसाफीर हैं, तब आपके संकल्प का क्षीण होना स्वाभाविक है।

१ : जल अभिमंत्रित करना

उदरशूल, तथा शरीर के मोटेपन के लिए पानी को अभिमंत्रित कर दिया जा सकता है। पहले टेबुल पर एक फूट लंबाचौडा वस्त्र फैला दीजिए उस वस्त्र के ऊपर एक चमकीली काँच का स्वच्छ गिलास रखिए। तीन चतुर्थांश गिलास को पानी से भर दीजिए। उबलकर ठंडा किया हुआ अथवा बर्फ का पानी इसके लिए काम में न लाए। अब उस गिलास के सम्मुख, कुर्सी पर शांति और प्रसन्नता से बैठ जाइए। एकाग्र दृष्टि से उस पानी को देखते रहिए। अब दृढ संकल्प कीजिए कि, "इस पानी से वह बीमारी नष्ट करने का मेरा संकल्प मेरी देहगत प्राणशक्ति (Will power) के साथ उस पानी में प्रतिष्ठित हो रहा है।" दो-तीन मिनट तक इस तरह की प्रबल विचार धारा को मन में जारी रखिऐ। अपनी दृष्टि को पानी पर से न उठाइए। इसके बाद अपनी उँगलियों को गिलास की सभी ओर फेर लीजिए और ऊपर से झाड़ दीजिए। मनुष्य की प्राणशक्ति का प्रक्षेपण ऊँगलियों के अग्रों, आँखों और जिव्हाग्र से अधिक मात्रा में होता हैं। आप सोचते रहिए कि "मेरी इन उँगलियों द्वारा गिलास में रखे पानी में जिसका संक्रमण हो रहा है उस प्राणशक्ति (Will power) में व्याधिमुक्तता का दृढ संकल्प एकरूप हो गया है और वह भी प्राणशक्ति के साथ उस पानी में जा रहा है।" इस विधि पर पाँच मिनट से अधिक समय खर्च न कीजिए। बाद में उँगलियों को पानी के ऊपर झाड़ दीजिए। यह अभिमंत्रित पानी पीने के लिए रुग्ण के हवाले कीजिए। सात-आठ दिन के बाद रुग्ण की स्थिति में अनुकूल परिवर्तन दिखाई देगा। शरीर का मोटापन घटने के लिए पानीको अभिमंत्रित करना हो तो मन में संकल्प कीजिए कि, "इस पानीको प्राशन करनेवाले व्यक्ति के शरीर में पैदा हुई अनावश्यक चरबी को पिघलाने की शक्ति इस पानी में प्रविष्ट हो।" अन्य तरीकों को पहले जैसे ही अपनाएइ।

है, जो व्याधि होगी, उसको दूर करने के दृढ संकल्प को उस पानी में प्रक्षेपित कीजिए। असाध्य रोग भी इस उपाय से दूर हो जा सकते हैं। लेकिन साधक और रूग्ण दोनों की भी श्रद्धा में दृढता का अभाव होने के कारण अभिमंत्रित पानी योग्य परिणाम साधने में अ सफल हो जाता है। मेरा यह व्यक्तिगत अनुभव है कि स्त्रियों की अतिरिक्त मेदोवृद्धि (मोटेपन) पर ऐसे अभिमंत्रित पानी का इलाज करने के बाद उनका काफी मेद हट गया है। एक अनुभव ऐसा है कि एक महिला का वजन २१० पाउण्ड से १८० पाउण्ड तक नीचे आ गया। और इस पानी के प्राशन करने के सिवा उस महिला ने न कोई दवा ली, न कोई पथ्य किया! यह उपाय दीर्घकालीन है अतः इसे बीच में नहीं छोड़ना है।

२ : अँगूठी, रुमाल या भस्म को अभिमंत्रित करना

प्राथमिक क्रियाएँ पानी अभिमंत्रित करने की क्रियाओं जैसी ही हैं। फर्क केवल इतना ही है कि पानी की जगह इन वस्तुओं को रखकर उनकी ओर दृढ़ संकल्प के साथ एकाग्र दृष्टी से देखते रहिए। इस प्रयोग में एक विचित्र-सी बात को मैंने अनुभव किया है। अँगूठी या भस्म आदि वस्तुओं से पानी का स्पर्श होने पर उनकी अभिमंत्रित शक्ति या तो घटती है या नष्ट हो जाती है। लेकिन पानी को अभिमंत्रित करने में ऐसा कोई चमत्कार नहीं होता। वहुत कुछ सोचने पर भी इसका हल मैं नहीं ढूंढ सका। इस शास्त्र में ऊँची सीढ़ी पर पहुँचा कोई साधक अगर मेरी इस शंका का समाधान करे, तो मैं उसका आभारी रहूँगा।

अब मैं इन वस्तुओं को अभिमंत्रित करने के कारणों का स्पष्टीकरण करूंगा। अपना प्रियकर (या अपनी प्रिया) अपने प्यार को हमेशा के लिए कायम रखे, इस उद्देश्य से अँगूठी को अभिमंत्रित करना हैं। लेकिन इस बात को हमेशा ध्यान में रखना है, कि जिसने सम्मोहन विद्या का श्रीगणेश भी नहीं किया हैं, अथवा मन को एकाग्र करने की साधना को जो विलकुल नहीं जानता है, ऐसा व्यक्ति जब इस प्रयोग को करने जाएगा तव उसका असफल होना निश्चित वात है। कोई भूला-भटका प्रेमी जीव, व्यसन में फँसे लोग और कामवासना पीडित लोग अभिमंत्रित अँगूठी के प्रभाव से अपने सही प्रेम-पथ पर वापिस लौट आते है। यह मेरे अनुभव की वातें हैं।

रुमाल को अभिमंत्रीत करने की विधि भी ऐसी ही है। इसके लिये आठ इंच लंबा तथा उतना ही चौड़ा मलमल का वस्त्रखंड काफी हो जाता हैं। दुःस्वप्न, भय को महसूस करना, निद्रानाश आदि के लिए योग्य संकल्प के साथ इस वस्त्र को अभिमंत्रित किजिए इस अभिमंत्रण क्रिया को १०-१५ मिनट तक जारी रखिए। सोते समय इस अभिमंत्रित रुमाल को सिरहाने रखने से दुःस्वप्न बन्द हो जाते हैं। जो निद्रानाश की दुष्ट व्याधि से पीडित है, वे सोने के वक्त इस वस्त्र को तह कर अपने माथे पर रखे। कुछ ही दिनों के उपाय से वे लोग इस दुष्ट व्याधि से छुटकारा पा कर गहरी नींद के सुख को अनुभव करेंगे। जिनका मन भूत-प्रेत-पिशाच आदि के भय से सदा ग्रस्त रहता है, वे लोग इस अभिमंत्रित रुमाल को अपनी बाईं कलाई में वांध दें। इस साधना में न्यून यह है कि पानी का स्पर्श होतें ही रुमाल का वह दैवी गुण नष्ट हो जाता है और हर दिन उसका उपयोग करना अनिवार्य होन के कारण तीन-चार महीने के अंदर उसकी शक्ति क्षीण हो जाती है और उस रुमाल को फीर से अभिमंत्रित करना पडता है। किसी कठोर स्वभाव के व्यक्ति से मिलना हो, तो "जो व्यक्ति इस रुमाल को देखेगा वह अत्यन्त नम्र हो जाएगा।" इस संकल्प से अभिमंत्रित रुमाल को साथ में ले जाइए, और उस व्यक्ति के सामने खड़े होने पर इस रुमाल को अपने हाथ में रखिए। उसे देखते ही वह व्यक्ति

प्रभावित हो जाएगा और आप से नम्रतापूर्वक वातें करने लगेगा। इसके वारे में मेरा एक निजी अनुभव कथन करूँगा।

राख (अन्य नाम है रक्षा, भस्म, भस्मी, विभूति) अभिमंत्रित करने की प्रथा भारतवर्ष में काफी पुरानी है। इसके पीछे जो मूल कल्पना है वही अन्य वस्तुओं को अभिमंत्रित करने के पीछे है। कभी कभी छोटा वालक बैचन हो जाता है या गोधूलि वेला पर विना किसी खास वजह के वह रोने लगता है। वास्तव में उस बालक को पूर्वजन्म का अस्पष्ट स्मरण हो आता और उसके दुःख से वह रोने लगता है। इस समय हाथ में थोडी-सी गाय के गोबर की राख ले कर इष्ट देवता का नाम जपते हैं। इससे वह रक्षा अभिमंत्रित वनती है। इस रक्षा का टीका बालक के माथे पर लगाते हैं बच्चे का रोना रुक जाता है। महाराष्ट्र में सन्त रामदास द्वारा रचित रामरक्षा का पठन करते हैं और रक्षा को अभिमंत्रित करते हैं। रीतियाँ अल अलग हो सकती है; लेकिन जड़ एकही है। रामरक्षा के पठन के लिए कुछ ज्यादह समय लगता है। और महाराष्ट्र के वाहर जिनकी मातृभाषा मराठी नहीं है है ऐसे परिवारों में रामरक्षा का पठन करने की प्रथा नहीं है। अतः इस अड़चन को दूर करने के लिए केवल नाथ-पंथियों में प्रचलित ऐसे एक गुप्त मंत्र को, जिसका लाभ मुझे साक्षात् मेरे गुरुदेव के मुख से हुआ है, मेरे पाठकों के कल्याण के लिए वता रहा हूँ। वह मंत्र है :

"ॐ नमो हनुमंता,
व्रिज का कोठा
जिसमें पिंड हमारा बैठा
ईश्वर कुंजी, ब्रह्मा ताला,
इस घट पिंड का यति हनुमंत रखवाला।"

हाथ में भस्म को लेकर, केवल एक बार इस मंत्र का पठन कीजिए और उस भस्म को वालक के माथे पर लगाइए। शाम के संधिकाल के समय रोनेवाला बालक तुरंत शांत होगा।

अव मेरे चिकित्सक पाठक आपत्ति करेंगे कि, "भागवतजी, मंत्रों के बारे में आप पहले ही अविश्वास प्रकट कर चुके हैं। अव इस मंत्र की सिफारीश क्यों ?"

आपका यह सवाल विलकुल दुरुस्त है। लेकिन मेरे जवाब को भी तो जरा पढिए। मेरा जवाव यह है कि "इस मंत्र के अर्थ को देखिए। वह एक महान् शक्तिशाली विचार है। अर्थहीन मंत्रों में कुछ शक्ति छिपी होती है, ऐसा मैं अभी भी नहीं मानता हूँ। और इसका कारण मैं पहले भी स्पष्ट कर चुका हूँ।"

इस के बाद किसी व्यक्ति को कैसे अभिमंत्रित कर सकते हैं इसके बारे में सोचेंगे। इस साधना की चर्चा इस ग्रंथ में करूँ या न करूँ इस के वारे में मेरे मन में काफी हिचकिचाहट थी। किसी व्यक्ति को अभिमंत्रित करने की सिद्धि आग जैसी

है। इसका सदुपयोग करने से अभिमंत्रित व्यक्ति का कल्याण हो जाएगा; और इसके दुरुपयोग से उसका नाश भी हो सकता है। लेकिन मेरी यह श्रद्धा है कि मेरे पाठक शिक्षित, सभ्य, और सात्त्विक विचारों के हैं। अतः वे इस सिद्धि का दुरुपयोग कदापि नहीं करेंगे। अतः इस भरोसे मैं इस साधना के रहस्य को प्रकट कर रहा हूँ। मैंने मेरे व्यक्तिगत जीवन में इस सिद्धि को अनुभव किया है और अभिमंत्रित अवस्था में मैंने जो भी कुछ कहा उसका तुरंत पालन करनेवाले बीसों व्यक्ति आज भी मौजूद हैं। केवल दिन भर के मेरे सहवास के लिए सौ–पचास रुपये खर्च कर, यात्रा–सफर की अड़चनों पर मात कर, मेरे घर आनेवाले लोग सैंकडों की संख्या में हैं। मेरे ऐसे लिखने में मेरे पाठक घमंड या अहंभाव के दर्शन करेंगे। लेकिन मैं इतना ही कहूँगा कि मैं आपका सच्चा मित्र हूँ। और मित्र के नाते जो वस्तुस्थिति है उसको ही आपके सामने रख रहा हूँ। इस ग्रंथ के द्वारा मैं आपकी जो भी कुछ सेवा करूँगा वह मेरी महीमा का फल नहीं है। भगवान श्री. रामकृष्ण परमहंस और मेरे सद्‌गुरु ब्रह्मीभूत स्वामी चैतन्यानंद यति इनकी कृपा का यह फल है। इन महामना साधुओं के सत्यसंकल्प को प्रत्यक्ष में लानेका मैं साधन मात्र ऐसा क्षुद्र लेखक या कलम का मजदूर हूँ। मुझे काहे का गर्व ?

अब अन्य व्यक्ति को अभिमंत्रित करने की प्रक्रिया का पूरा तफसील दे रहा हूँ। इस प्रयोग को संपन्न करने के पहले, अपने उद्देश्य को निश्चित कीजिए। बुरी राह पर चलनेवाले किसी रिश्तेदार को बचाने के लिए, किसी क्रोधी या स्वार्थी मनुष्य के स्वभाव को बदलने के लिए, अध्ययन की ओर ध्यान न देनेवाले बच्चों को अध्ययन का महत्त्व समझाने के लिए इस साधना का प्रयोग करना बिलकुल ठीक है। लेकिन किसी स्त्री की वश में लाने के लिए अथवा किसी को लूटने के लिए इस विद्या का उपयोग करने पर उसमें सफलता नहीं मिलेगी। इसका कारण यह है कि आपके जाग्रत मन में उद्‌भावित दुष्ट हेतु अन्तर्मन की गहराई में प्रवेश करेंगे और फलस्वरूप आपका मन बिलकुल एकाग्र नहीं होगा। आप इस प्रयोग को कर रहे हैं, इसका पता जिस व्यक्ति पर यह प्रयोग हो रहा है उसे नहीं होना चाहिए। उस अन्य व्यक्ति के अनजाने में यह प्रयोग सिद्ध होगा।

अब मान लीजिए कि क्ष व्यक्ति को अभिमंत्रित करना है। वह व्यक्ति बुरी आदतों का गुलाम बन चुका है। प्रयोग का हेतु उसे भलाई की राह पर लाना है। अब उसके दुर्वर्तन अथवा व्यसन के कारण उसको जली–कटी सुनाना बन्द कीजिए। हर मनुष्य में कुछ न कुछ सद्‌गुण तो होते ही हैं। उस व्यक्ति के सद्‌गुणों के लिए उसके स्तुतिपाठ को शुरू कर दीजिए। उसकी बुराइयों के लिए आप हमेशा उसे डाँटते हैं, उसकी निंदा करते हैं; इतना ही नहीं तो उसकी घृणा भी करते हैं। आपके विचार में यह जो परिवर्तन हो गया है उसे देख कर वह ज़रा

परेशान रहेगा। उसके मन की यही वह स्थिति है जो आपके प्रयोग में, जिसे आप आगे जाकर करनेवाले हैं, लाभदायक सिद्ध होनेवाली है। अब इसके बाद रात के समय लेटे ही लेटे उस व्यक्ति की मूर्ति को अपनी आँखों के सामने प्रस्तुत करने की कोशिश एकाग्र मन से करते रहिए। आपके मन:चक्षु के सामने उसकी मूर्ति प्रकट होते ही उसके मन पर अपने पवित्र विचारों का संक्रमण (या प्रक्षेपण) शुरू कीजिए। इस वक्त काम आनेवाली एक कुँजी को मैं बता देना चाहता हूँ।

जिस प्रकार आप उस व्यक्ति की मूर्ति को अपने मन:चक्षुओं के सामने उपस्थिन कर देते हैं, उसी प्रकार आप अपनी खुद की मूर्ति को भी आपके अन्त-चक्षुओं के सामने प्रस्तुत करने की कोशिश कीजिए। इसमें सफलता पाने पर कल्पना कीजिए कि आपकी वह मूर्ति (Image) उस व्यक्ति की मूर्ति (I mage) पर आपके शुभ विचारोंका प्रक्षेपण (या संक्रमण) कर रही है, और खुद आप साक्षी रूप से इस खेल को देख रहे हैं। यह जो दूसरी बात मैंने बताई है, उसके अज्ञान के कारण यह साधना असफल रहती है। गलती प्रयोगविधि में नहीं है, वह है प्रयोग करनेवाले के अधुरे ज्ञान में।

अगर आप उस परिचित की मूर्ति को अपने मन:चक्षुओं के सामने प्रस्तुत करने में असफल हो जाते हैं, तो दूसरा भी एक उपाय हैं: उस व्यक्ति की एक हाल ही में (recent) खींची हुई तस्वीर (Photograph) को अपने सन्मुख रख दीजिए। दो-तीन सेकेंड के लिए उस की और अपलक देख कर अपनी आँखों को बन्द कर लिजिए। अब आप के मन:पटल पर उस व्यक्ति की मूर्ति साफ साफ दिखाई देगी। लगातार पंधरह–वीस दिनों की साधना से आपका मन उस व्यक्ति से संबंधित मीठे भावों से भर जाएगा। इस प्रयोग-विधि में भी उस व्यक्ति के लिए आप जो संकल्प करते हैं, उनका श्रद्धायुक्त और प्रभावशाली होना निन्तात आवश्यक है।

साथ साथ और भी एक प्रयोग-विधि का वर्णन करूँगा। एक छोटी-सी कटोरी को लीजिए। उसमें शक्कर डालिए। ऊपर बताए हुए तरीके को अपना कर, उस व्यक्ति को भलाई की राह पर लाने के दृढ़ संकल्प के साथ, उस शक्कर को अभिमंत्रित कीजिए। अब ऐसी योजना बनाइए कि वह व्यक्ति इस अभिमंत्रित शक्कर को किसी न किसी ढंग से भक्षण करे। इस अभिमंत्रित शक्कर को चखने से भी उस व्यक्ति की मनोवृत्तियाँ बदल जाती हैं। भगूर (नासिक) में रहनेवाला मेरा एक मित्र ऐसाही गयाबिता और उन्मार्गगामी था। परिवारवालों के लिए अपने बुरे वर्तन से उसने एक बड़ी भारी समस्या खडी कर दी थी। फिर भी केवल खट्टे-मीठे चने और मूँगफली के दाने अभिमंत्रित कर उसे खिलाने से केवल तीन दिन में उसके स्वभाव में काफी परिवर्तन आ गया!

जब कोई समस्या मनुष्य की शक्ति के पार हो जाती है तब मनुष्य निराश हो जाता है। लेकिन अन्तर्मन की अज्ञात, अगाध, असीम शक्ति के सामने सिर झुका कर उसे वश करने से साधक किसी को भी "नर का नारायण" वना सकता है। यह प्रयोग (और अन्य भी) इस विधान का प्रमाण है।

किसी मित्र अथवा अफसर को अभिमंत्रित कर वश में कैसे किया जा सकता है इसे देखेंगे। इन्हें वश में करने से ये साधक के संकल्पानुसार वर्ताव करते हैं। मनोविज्ञान कहता है कि आपके मन में किसी अन्य व्यक्ति के बारे में घुलनेवाले विचार, उसके अन्तर्मन में प्रवेश कर, बाद में जाग्रत मन में प्रकट होते हैं और व्यक्ति को उनका ज्ञान हो जाता है। किसी दुष्ट व्यक्ति के बारे में उसका बदला लेने के, तथा उसको नष्ट करने के विचारों से आपका मन भरा रहता है। बिना किसी साधना के आपका मन इन विचारों से एकाग्र हो जाता है। अतः इन विचारों की शक्ति बढ़ जाती है। और वे उस दुष्ट के मन में भी प्रकट होते हैं। इस मनो वैज्ञानिक तथ्य को समझ लेने से अन्य व्यक्ति को अभिमंत्रित करने का काम वहुत ही आसान हो जाता है। उस व्यक्ति की बुराइयों के बारे में किसी भी विचार को अपने मन में स्थान न दीजिए। उसके सद्‌गुणों को सोचकर उसकी प्रशंसा के विचारों को मन में स्थिर कीजिए। आप के अन्तर्मन से ये विचार उस व्यक्ति के अंतर्मन में प्रवेश कर बाद में वहिर्मन (जाग्रत मन) में प्रवेश करेंगे; और उस व्यक्ति का चित्त प्रसन्न होगा। उसके पहले जैसे मैंने बताया है वैसे उस व्यक्ति की प्रतिमा (Image) को अपने अन्तःचक्षुओं के सामने लाकर अपनी प्रतिमा के द्वारा उनकी प्रतिमा पर सद्‌गुणों का प्रक्षेपण करते रहिए। कुछ दिनों के वाद उस व्यक्ति के स्वभाव में ऐसा परिवर्तन आ जाएगा कि आप दंग रह जाएंगे।

एक ज़माने में जो व्यक्ति आपका दुश्मन रहा हो, वह आपका ऐसा मित्र बनेगा कि दिनरात आपके निकट रहने की सच्ची कोशिश करेगा और आपका कहना हमेशा मानता रहेगा।

धन-दौलत, कीर्ति, प्रतिष्ठा आदि बीसों चीजों को पाने के लिये यंत्र, तंत्र, मंत्र आदि का अवलंव करनेवाले लोक बडी संख्या में पाए जाते हैं। क्या ऐसे यंत्रों मंत्रों, तथा तंत्रों में मनुष्य को धनवान् बनाने की कोई कुँजी है? सवाल तो दुरुस्त है। कुछ लोग विवाद भी करते हैं कि, अगर यंत्रों की पूजा से धन पाना संभव है, तो कष्ट उठानेवाले लोग अपने कष्टों को छोड़ केवल इन्हीं यंत्रों के पूजा-पाठ के पीछे ही पडे होते। लेकिन मेरी धारना है कि धन-प्राप्ति के संकल्प को उस यंत्र विशेष में प्रक्षेपित करने से, उस यंत्र को अपने पास रखनेवाला जरूर धनी हो जाता हैं। उस यंत्र में धन-प्राप्ति के बारे में जो शक्ति निर्माण होती है, उसका स्रोत उस यंत्र को बनानेवाले साधक का श्रद्धायुक्त और दृढ़ संकल्प है। वह सत्य

संकल्पस्वरूप है। अतः वह असफल नहीं हो सकता। कभी कभी ऐसा भी होता है कि धनप्राप्ति की इच्छा रखनेवाला व्यक्ति स्वयं ऐसा यंत्र खरीद लाता है और उसका पूजा-पाठ शुरू कर देता है। लेकिन मन ही मन उस यंत्र की शक्ति के बारे में शंकित होने के कारण वह असफल रहता है। और कभी कभी उस यंत्र की कीमत तक भी लाभ नहीं होता ! इस सृष्टि का संकल्पक, निर्माता ओर शासक एकमेवाद्वितीयम् परमात्मा है। फिरभी इच्छाशक्ति, ज्ञानशक्ति और कार्यशक्ति के संदर्भ में मनुष्य–प्राणी मुक्त है। वेदों में यह स्पष्ट कहा गया है। इस ग्रंथ में मैंने इच्छा शक्ति का संपूर्ण विवेचन किया है। अपनी इस इच्छाशक्ति का विकास चरम सीमा तक कर लेना केवल मनुष्य के स्वाधीन की बात है। इच्छाशक्ति के विकास के लिए जो भी उपाय आवश्यक हैं, मैंने उनकी दीर्घ चर्चा इस ग्रंथ में प्रस्तुत की है। केवल इस इच्छाशक्ति के सहारे साधारण से भी साधारण मनुष्य सफलता की सर्वोच्च सीढी पर पहुँच जाता है। फ्रान्स का सम्राट, जगज्जेता नेपोलियन एक गरीब घराने में पैदा हुवा था। फिर भी अपनी अथक इच्छाशक्ति (Will power) के सहारे ऐसा कार्य कर बैठा कि इतिहास का महा–मानव बन गया।

अब्राहाम लिंकन एक गरीब परिवार में पैदा हुए। लेकिन इच्छाशिक्त के सहारे अमरिका के प्रेज़िडंट बन गए। भारत के भूतपूर्व प्रधान-मंत्री स्व० लाल बहादुर शास्त्रीजी की जीवन-कथा को कौन नहीं जानता। अपने छात्र-काल में युवा लालबहादुर नदी को पार कर स्कूल आते-जाते थे। नाव का किराया देने के लिए भी पैसे उनके पास नहीं होते थे। इतिहास के पन्नों पर ऐसे सैंकडों उदाहरण प्रस्तुत हैं। बड़ी हस्तियाँ संकट में पलती हैं। संकटों पर मात करती हैं। सफलता की चरम सीमा तक पहुँच जाती है। क्यों ? कैसे ? उत्तर है इच्छाशक्ति का असीम विकास। कोई कहेगा, " उन्हें मौका मिला। " मित्रों ! मौका यूं ही या अपने आप में नहीं मिलता। मनुष्य की असीम, अथक इच्छाशक्ति अनुकूल अवसर को जन्म देती है। मनुष्य परिस्थितियों का निर्माता है। अपने सत्य संकल्पों की सिद्धिता के लिए अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण स्वयं इच्छाशक्ति करती है।

मेरे मित्रों ! रोने से काम नहीं चलेगा। " काश ! हमें मौका मिलता तो हम भी महान बनते ! " इस प्रकार खेद प्रदर्शित करनेवाले बहुत होते हैं। अगर आपके संकल्प शक्तिशाली हैं, उनके बारे में आपका मन पूर्णरूपेण श्रद्धायुक्त है, तो उसकी सफलता के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ जरूर पैदा होती है। स्वामी विवेकानंद युवावस्था में गरीबी में जीवन बिताते थे। कभी कभी दो जून भोजन मिलना भी मुश्किल हो जाता था। फिर भी उनके मन में आत्मसाक्षात्कार की इच्छा तीव्र होती जा रही। उनका मन इस एकमात्र इच्छा से तड़प रहा था। और

इस असीम इच्छाशक्ति के फलस्वरूप ऐसा अनुकूल अवसर आ गया कि भगवान श्री रामकृष्ण परमहंस से उनकी भेंट हुई। यही है असीम, अथक इच्छाशक्ति की महीमा !

इस विशाल और विविधतापूर्ण प्राणी-सृष्टि में भाषा की सुविधा केवल मनुष्य मात्र का अधिकार है। वाणी विचारों के आविष्कार का साधन है। अत: विचार और वाणी को अभिमंत्रित कर उनके प्रभाव से अपने संकल्पों को सफल कैसे बनाया जा सकता है, इसका निवेचन अब करूँगा। वस्तु कडुवी हो, तो लोग उसे टालने की कोशिश करते हैं। फिर कठोर, तथा कड़वाहट से भरी वाणी का स्वागत कौन करेगा ? अत: हमेशा मीठी वाणी का प्रयोग कीजिए। बोलते समय चेहरे पर स्मित हास की आभा को लाइए। अगर आप किसी व्यक्ति के साथ संभाषण करते हैं तो आप के बारे में ही लगातार न बोलिए। क्योंकि इससे वह सुननेवाला आपकी बातों में रस नहीं लेगा। मनुष्य स्तुतिप्रिय हैं, इस व्यावहारिक सत्य को न भूलिए। सामनेवाली व्यक्ति का जो भी कोई गुण आप देख चुके हैं, उसकी अवश्यमेव प्रशंसा कीजिए। औरों की प्रशंसा करने में कोई भी हिचकिचाहट न रखिए। आप लोंगो से जिस प्रकार बातचीत की इच्छा रखते हैं, वैसे ही बातचीत उनके साथ आपको करना है। आपके विचार तथा आपकी वाणी अन्तर्मन से प्रवाहित हो रही है, वे शक्तिशाली है, ऐसा भाव अपने मन में घोलते रहिए। ऐसे विचार श्रोता के मन पर ज़रूर असर ड़ालते हैं। अगर आप के आपके विचार तथा आपकी वाणी में ऐसा अनुकूल परिवर्तन हो जाता है, तो आप दुनियाभर के लोंगो के सूत्रधार बन जाते हैं ! अखंड भगवत-नामस्मरण से भी वाणी में दिव्यशक्ति आती है। संत-महात्माओं के उदाहरण से यह प्रमाणित होता है। अखंड नामस्मरण से मनुष्य का मन एक ऐसी अलौकिक ऊँचाई तक पहुँच जाता है कि, उसमें से प्रवाहित होनेवाले विचार और प्रकट होनेवाली वाणी के प्रभावशाली होने में कुछ भी संदेह नहीं। मेरा तो व्यक्तिगत अनुभव रहा है कि किसी की आँखों में अपलक देख कर विचार व्यक्त करने से वह व्यक्ति उन विचारों का स्वीकार करता ही है। मनुष्य की प्राणशक्ति (Will power) का आविष्कार सबसे अधिक उसकी आँखों में होता है। यह प्राणशिक्त और मनुष्य के शक्तिशाली विचार एक होकर नेत्रद्वारा अन्य व्यक्ति के मन पर गहरा असर डालते हैं, यह मनोविज्ञान का सिद्धांत है। जब हम किसी बडे व्यक्ति से मिलने जाते हैं, तो दिल ड़र के कारण धड़कने लगता है। इतना ही नहीं तो शरीर पसीने से तर हो जाता है ! क्या रंक, क्या राजा। दोनों भी मनुष्य हैं। लेकिन वैभव और अधिकार के करण राजा के सामने सभी माथा झुकाते हैं। वैभव और अधिकार के आवरण को राजा के व्यक्तित्व से दूर करने पर राजा और रंक दोनों भी मनुष्यत्व की एकही सतह पर खडे दिखाई देंगे। अत: जिससे हम मिल रहे हैं वह भी हमारे जैसा

मनुष्य है, इस सत्य का ज्ञान होते ही उस अधिकार के बारे में जो डर हमारे मन में वास करता है, वह तुरन्त नष्ट हो जाएगा। अब्राहाम लिंकन अमरिका के राष्ट्रपति थे। लेकिन परिवार के बच्चों के मनोरंजन के लिए उनको अपनी पीठ पर बिठा कर उनका घोड़ा बन जाते! संसार के महान पुरुष व्यक्तिगत या पारिवारिक जीवन में जनसाधारण जैसे ही होते हैं। बच्चों के साथ खेलनेवाले, अपनी पत्नि के साथ मनोविनोद करनेवाले अथवा स्नान से निवृत्त होकर पीतांबर पहन कर भगवान का पूजा–पाठ करनेवाले किसी महान व्यक्ति की मूर्ति को अपनी नजरों के सामने जरा लाइए। आप तुरन्त कहेंगे, "अरे! ये तो मेरे ही जैसे हैं!" बडी असामियों के बारे में आपके मन में आदर होना चाहिए, ड़र नहीं! भयग्रस्त मन से यदि आप किसी बडे व्यक्ति से मिलने जाएंगे तो आपकी संकल्प-शक्ति लंगडी-लुली बन जाएगी और आपका कार्य असफल रहेगा।

अपने संकल्पों को किसी वस्तु में प्रक्षेपित कर उसे अभिमंत्रित करना, विचार और वाणी को प्रभावशाली बनाना, "मनुष्य मनुष्य ही है।" इसे पहचान कर भयमुक्त हो जाना आदि के बारे में मेरे गुरु के मार्गदर्शन के अनुसार मैंने बहुत कुछ लिपीबद्ध कर लिया है। इसे अनुभव की कसौटी पर परखते समय कुछ कठिनाईयाँ महसूस होती हों, तो आगे भी आपकी सेवा में मैं उपस्थित हो जाऊँगा।

◻ ◻ ◻

. १३ .

कुछ अन्य साधनाएँ

अतींद्रिय शक्तियाँ (Psychic Powers) हासील करने के लिए आवश्यक ऐसी प्राणायाम आदि साधनाओं की दीर्घ चर्चा पहले ही कर चुका हूँ। इस अध्याय में उन अतींद्रिय शक्तियों को प्राप्त करने की कुछ अन्य प्रयोग-विधियों का परिचय कर देना चाहता हूँ। लेकिन पाठक याद रखें कि विशेष मनोरचना में ही ये विधियाँ सफल हो जाती हैं। फिर दीर्घ प्रयत्नों के द्वारा इन साधनाओं को सफल बनाया जा सकता है। मनोरचना साधना के अनुकूल होने पर सफलता मिल भी सकती है। अन्यथा मैंने बताए हुए दूसरे तरीकों को अपनाना चाहिए।

(१) **गोल में देखना** (Crystal Gazing) : प्राचीन काल से हर देश में यह क्रिया चलती आई है। यह क्रिया त्राटक साधना का एक अलग ढंग है। इसके लिए एक इंच व्यास का कांच का एक पारदर्शक गोल खरीद लाइए। उसमें हवा का एक भी कण (या बुदबुदा) न हो। ऐनक वेचनेवाली बडे शहरों की दुकानों में ऐसे गोल मिलते हैं। बिलकुल साफ गोल की कीमत साठ से लेकर सौ रुपये तक होती है। इस गोल को रखने के लिए लकडी का एक स्टैंड बना लिजिए। अगर मन बेचैन हो, सुस्ती लानेवाला भोजन ग्रहण किया हो अथवा बीमार हो, तो इस साधना का अभ्यास नहीं करना चाहिए। शाम के वक्त सूर्यास्त होते होते प्रसन्न मन से अपनी कुर्सी पर बैठ जाइए और उस गोल को सामने टेबुल पर रखिए। कमरे में तेज रोशनी न हो। फिर मन शांत तथा एकाग्र कर बारीक नजर से उस गोल में देखना शुरू कीजिए। लगातार देखने से आँखें पानी से भर आएंगी। ऐसी स्थिति में कुछ क्षणों के लिए आँखें मूंद लीजिए। फिर उसमें देखना शुरू किजिए। हर दिन बीस मिनट तक इस तरह करते रहिए। शुरुआत के दिनों में आप कुछ भी अनुभव नहीं कर पाएंगे। लेकिन कुछ दिनों के अभ्यास के बाद उस गोल के चारों ओर दिव्य तेज दिखाई देगा और क्षण भर में वह गोल उस रोशनी में खो जाएगा।

यह अनुभव आपकी सफलता के रास्ते का मार्गदर्शक चिन्ह है। इसके बाद आप और एक कदम आगे बढेंगे। उस गोल को चारों ओर दिखाई देनेवाला दिव्य तेज जब अधिकाधिक समय तक स्थिर रहने लगेगा, तब आपने जिसे पहले कभी देखा हो ऐसे दृश्य, या व्यक्ति, या कोई स्थान को याद करने की कोशिश कीजिए और उसे स्थिर रखिए। जिस वस्तु का आप स्मरण करेंगे, उस दिव्य प्रकाश में आपको वही वस्तु अत्यंत स्पष्ट दिखाई देगी। मान लीजिए : आप को नदी पर बनाए किसी पुल की याद आई हो, तो उस रोशनी में वही पुल स्पष्ट दिखाई देगा। अगर किसी व्यक्ति (जिंदा या मृतक) की याद आप कर रहे हैं तो वही व्यक्ति उस रोशनी में दिखाई देगा। इस अनुभव के कारण आप आश्चर्यचकित हो जाएंगे। लेकिन याद रखिए कि ऐसे दृश्य प्रारंभिक साधना के दरमियान बहुत थोडे समय के लिए दिखाई देते हैं। साधना की उच्च स्थिति में ऐसे दृश्य अधिक समय के लिए स्थिर रहते हैं और आप उन्हें ठीक ढंग से निहार सकते हैं।

इस साधना का वैज्ञानिक स्पष्टीकरण यही है : आप शांत तथा एकाग्र मन से उस गोल में देखते हैं। अतः आपका जाग्रत मन धीरे धीरे लुप्त हो जाता है। उस समय जिस दृश्य के बारे में आप सोचते हैं वह दृश्य अंतर्मन में प्रतिबिंबित हो जाता है। और आपका जाग्रत मन लुप्त होने के कारण वह दृश्य गोल के चारों ओर फैले प्रकाश में प्रतिबिंबित हो कर आपको दिखाई देता है। अन्तर्मन में प्रकट होनेवाली विचारों की यह आकृति (Thought form) आपको दृश्य स्वरूप में उस रोशनी में दिखाई देती है। इस साधना की यह केवल प्रारंभिक स्थिति है। इस साधना की उच्चतम स्थिति में किसी दृश्य या व्यक्ति विशेष की याद करने की आवश्यकता नहीं रह जाती। इसके लिए आपके एकाद मित्र को बुला लीजिए। उससे कह दीजिए कि "मैं अब इस गोल में देख रहा हूँ। तुम किसी भी दृश्य या व्यक्ति को याद करो जिसे मैंने कभी देखा न हो।" अद्‌भूत बात यही है कि आपके मित्र जिसके बारे में सोचते हैं वे ही दृश्य अथवा व्यक्ति उस गोल के बाहरी प्रकाश में दिखाई देते हैं। जब आप उस सबका वर्णन मित्र को सुनाएंगे तब वह आश्चर्यचकित हो जाएगा। इस प्रयोग-विधि में आपका जाग्रत मन (बहिर्मन Conscious mind) लुप्त हो जाएगा और अन्तर्मन का कार्य शुरू होगा। ऐसी परिस्थिति में मित्र जो कुछ सोच रहा है वह सब आपके अंतर्मन में प्रतिबिंबित होगा और वही दृश्य गोल के बाहर फैली रोशनी में दिखाई देगा। एक बात को ध्यान में रखना चाहिए कि जो दृश्य आप और आपके मित्रों ने कभी नहीं देखे होंगे वे दृश्य इस रोशनी में नहीं दिखाई देंगे। अगर ऐसा कोई दृश्य दिखाई दे रहा हो तो समझ लीजिए कि वह सस आपकी कल्पना की लीला है। सत्य नहीं है। इस गोल में किसी दूर की जगह पर जलता घर दिखाई देना या पानी में डूबनेवाला आदमी दिखाई देना या दूर रहनेवाले रिश्तेदारों के दर्शन होना आदि

अद्भूत बातों के वर्णन हम पाश्चात्य ग्रंथों में पढ़ते हैं। यह सब सत्य है। लेकिन इन दृश्यों को देखनेवाला व्यक्ति उच्चतम कोटि का साधक होना चाहिए। दूर घटनेवाली घटनाओं के दर्शन इस गोल में कैसे होते हैं यह समझ लेना कठिन बात नहीं है। चालीस-पचास मील की दूरी पर आपके किसी रिश्तेदार के मकान को आग लगी हो, तो वे लोग उसे जाग्रत मन से ही देखते रहेंगे। गोल में देखनेवाले रिश्तेदार का अन्तर्मन उसी समय क्रियाशील होने के कारण दूर के रिश्तेदार जिस दृश्य को देख रहे होंगे वह दृश्य उसके (गोल में देखनेवाले) अन्तर्मन में प्रतिबिंबित होगा। क्योंकि अन्तर्मन सर्वगामी, सर्वव्यापी है। और अन्तर्मन में प्रतिबिंबित दृश्य उस गोल की रोशनी में दिखाई देता है।

इस सिद्धि की भी सीमा होती है। इसे आवश्यक उच्च कोटि की मानसिक स्थिति बहुत ही कम लोगों में पाई जाती है। यह एक ईश्वरीय अथवा कुदरती देन है जिसका लाभ इनेगिने खुशकिस्मत लोगों को हो जाता है। इसका लाभ आपको भी हो सकता है। और उसके लिए बहुत लंबे समय तक Crystal Gazing का अभ्यास करते रहना चाहिए। इससे भी अगर सफलता नहीं मिलती हो तो अन्य साधनाओं के द्वारा इस अतींद्रिय शक्ति को आप हासील कर सकते हैं। बंजारा औरतें गोल में देखकर भविष्य-कथन करती हैं। उसी प्रकार गोल में देखकर त्रिकाल की घटनाओं के बारे में मार्गदर्शन करनेवाले लोग शहरों में होते हैं। लेकिन इसमें बदमाशी होने की अधिक संभावना होने के कारण बुद्धिमानी से काम लेना चाहिए।

इस साधना के बारे में मेरा अनुभव बहुत ही मर्यादित है। इस साधना के पीछे पड कर मैंने अस्सी रुपये का एक क्रिस्टल (गोल) खरीद लिया। दो-तीन महीनों के बाद उस गोल के चारों ओर दिव्य तेज प्रकट होने लगा। आगे चल कर गोल में देखते वक्त लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधीजी आदि वंदनीय महात्माओं की याद करने लगा। और उनकी तस्वीरें उस रोशनी में दिखाई देने तक मेरी साधना आगे बढ चुकी। लेकिन मेरे मित्रों के मन में उद्भावित दृश्य, जिन्हें मैंने खुद नहीं देखा था, मुझे नहीं दिखाई देते थे। अतः इस साधना में मेरा उपयुक्त समय मुफ्त गँवाना मुझे अच्छा नहीं लगा।

गोल में देख कर भूमि में गढे धन का पता लगाना अथवा कुए के लिए झरनों से युक्त जगह का पता लगाना आदि के बारे में दावे के साथ कहनेवाले लोग मिलते हैं। लेकिन यह सब असत्य है। इसका कारण यह है कि वह गुप्त धन अथवा भूमिगत जल किसी न किसी व्यक्ति के जाग्रत मन में प्रतिबिंब के रूप में प्रगट होना चाहिए। उसके सिवाय वह साधक के अन्तर्मन में भी प्रकट (प्रतिबिंबित) नहीं होगा। शायद एकाद दृश्य दिखाई भी दे, तो उसे साधक के जाग्रत मन द्वारा निर्मित भ्रम समझना चाहिए।

यहाँ मेरे पाठकों का मन सन्देह से भर जाएगा। वे पूछेंगे कि अगर किसीके मन में उद्‌भावित बातोंसे ही गोल में देखनेवाले को पता लग जाता है तो प्राचीन ऋषिमुनियों को आनेवाली हजारों हजार पीढियों के बारे में ज्ञान कैसे होता था? भृगुसंहिता आदि ग्रंथों में आनेवाले युग की स्थितियों तथा उस युग के लोगों का यथार्थ वर्णन मिलता है। फिर यह बात कैसे संभव हो गई? इसके जवाब में इतना ही कहना काफी है कि मानवीय देहधारी होते हुए भी प्राचीन ऋषिमुनि मानव-मनधारी नहीं थे। वे चैतन्यरूप थे। और यही चैतन्य सर्वसाक्षी होने के कारण उसे अ-ज्ञात ऐसी कोई भी घटना नहीं है। और भी एक बात है। हम सोचते हैं कि आज से पाँचसौ वर्ष के बाद संसार की जो स्थिति होगी वह आज अस्तित्व में नहीं है। लेकिन सोचने का यह ढंग बिलकुल गलत है। यह विश्व अनादि अनंत होने के कारण वह केवल " है। " गतकालीन विश्वस्थिति नष्ट नहीं हो गई है और भावी स्थिति तो है ही। मानवी मनुष्य–प्राणी को इस सत्य का ज्ञान नहीं हो पाता है। इसके बारे में अधिक चर्चा 'ॐ पूर्णमिदम्' इस अध्याय में दी गयी है।

(२) **काजल लगाना**–उँगली के नाखून को काजल लगा कर उसमें देखने से अज्ञात घटनाओं का अथवा भूमिगत धन का पता लग जाता है, ऐसे बहुत से लोग मानते हैं। पाँवकी ओर से जन्में व्यक्ति को इस साधना का माध्यम बनाने से सफलता शीघ्र मिलती है ऐसी भी लोगों की मान्यता है। लेकिन मेरा अनुभव बता रहा है कि ये मान्यताएँ बिलकुल झूठ हैं। बड़े लोगों को लेकर काजल लगाने की विधि सफल ही नहीं होती। काजल लगाए नाखून में छोटे बच्चों को कुछ दृश्य या व्यक्ति दिखाई देना असंभव नहीं है। एकाद बालक के नाखून को काजल लगा कर उसमें एकाग्र मन से देखने को कह दीजिए। फिर उससे पूछिए, "तुझे क्या दिखाई देता है?" उसे कुछ भी दिखाई नहीं देगा। अब उसे सूचित कीजिए कि, "क्या तुझे बाग दिखाई देता है?" बस्। इस सूचना का उसके अन्तर्मन में प्रवेश होकर उसे बाग का दृश्य दिखाई देगा। यह सब विशेष बात को सूचित करनेका खेल है। फिर उससे पूछ लेना, "बाग में तुझे दो स्त्रियाँ दिखाई देती हैं?" उसे दो स्त्रियाँ दिखाई देंगी। इस तरह सूचित करने से बहुत दृश्य वह बालक देख सकता है। काजल की यही एक अद्‌भुत बात हैं। बाकी गुप्त धन संबंधी बातें असत्य है। काजल में देख कर अगर भूमिगत गुप्त धन का पता लग जाता तो अबतक दुनिया भर का सारा गुप्त धन हस्तगत हो जाता। अतः काजल लगाना यह सूचनाओं का एक मामुली खेल है।

(३) **किसी के ऊपर देवी आना**–सुदूर देहातों में ही नहीं, बल्कि बड़े बड़े शहरों में रहनेवाले लोगों में भी यह दृढ श्रद्धा पायी जाती है कि किसी व्यक्ति पर (खास कर के स्त्रियों पर) देवी आती है। ऐसे भी लोग होते हैं जो दावे के साथ कहते हैं कि उनके अंदर किसी अज्ञात शक्ति का बसेरा है। किंवदंतियाँ होती हैं

कि किसी के अंदर श्री साईबाबा या अन्य ऐसे ही महान् सन्तों का बसेरा है; किसी तिथि या दिन विशेष पर उनके शरीर में इन महात्माओं की शक्ति का प्रवेश होता है। इसके संबंध में मेरा एक अनुभव कहूँगा : बम्बई में ऐसे ही एक सज्जन मेरे परिचितों में से थे। उनकी देह में किसी महान साधु की आत्मा संचार करती थी। जब उन पर ये बाबा आ जाते, तब उनके चेहरे पर के भाव जरूर बदल जाते थे। लेकिन मुझे खटकनेवाली बात यह थी कि उस दैवी अवस्था में भी उनके मुखकमल से रोज़मर्रा मामूली बातों के सिवा और कुछ आध्यात्मिक बातें नहीं निकलती थीं। वे पूछते थे, "आजकल श्याम कहीं दिखाई नहीं देता :" या "आपकी बहू के लड़का हुआ या लड़की ?" या "क्यों रामलाल, आपकी तबिअत कैसी है ?" आदि आदि। लेकिन भोले-भाले लोग उनके बातों को बड़ी श्रद्धा से सुनते थे। उनमें दिव्यशक्ति का बसेरा हो या न हो, ये मेरे परिचित बडे विनम्र थे। स्वार्थ उनके मन को कभी छूआ तक नहीं। मैं उन्हें पिताजी के समान मान कर उनका आदर करता था। फिर भी उनके शरीर में संचार करनेवाली दिव्य शक्ति के बारे में मेरे मन में काफी सन्देह था।

अब किसी के ऊपर देवी आने के पीछे क्या रहस्य है इसके संबंध में वैज्ञानिक दृष्टिकोन को अपना कर जरा चर्चा करेंगे। जिस पर देवी आती हो, ऐसी स्त्री का ही उदाहरण लीजिए। उसे लगता है कि, "लोग मेरी इज्जत करें। मेरे चरण छूएं। मेरे आशीर्वाद लें।" इस इच्छा को सफल बनानेका मार्ग है लोगों में ऐसी मान्यता को फैला देना कि इस स्त्री पर देवी आती है। उसकी देह में किसी दैवी शक्ति का बसेरा है। आदि। इस बात का प्रचार ऐसे जोरों-शोरों के साथ किया जाता है कि जनसाधारण में श्रद्धा की बाढ-सी आ जाती है। इस सब वातावरण के फल-स्वरूप वह विचाराकृति (Thought form) इतनी शक्तिशाली होती है कि सच-मुच एक दिन, विशिष्ट समय पर उस स्त्री का बहिर्मन (जाग्रत मन) लुप्त हो कर उसके अन्तर्मन का कारोबार शुरू होता है। अपने ऊपर देवी आती है, इस विचारका उसके अन्तर्मन में प्रवेश होते ही उसे लगता है कि सचमुच वह देवी का अवतार हो गई है। उसके चेहरे के भाव बदल जाते हैं। शरीर भर में थरथराहट महसूस होती है। वह स्त्री अपने शरीर को इस प्रकार घुमाती है कि मानो वह आँधी में हिलता हुआ पेड़ ही हो। मोहल्ले भर की औरतें इकट्ठा हो जाती हैं। उसकी पूजा करती हैं। उसे प्रश्न पूछती हैं। वह स्त्री गुनगुनाती हुई उनके उत्तर देती हैं। कुछ उत्तर सही होते हैं और कुछ गलत। आसपास उपस्थित स्त्रियों के मन में उस देवी के बारे में जो भी कल्पनाएँ होंगी उनके अनुसार वे प्रश्न पूछेंगी और देवी भी उस सीमा में रह कर उनके उत्तर देंगी। आश्चर्य यही है कि जिस स्त्री पर देवी आती है, वह कभी कभी नोकरानियों में सें भी होती है। किंवदन्तियाँ हैं कि देवी का संचार होने पर वह स्त्री अपने हाथों में से सिंदूर या भस्म आदि

को निकालती है। वास्तव में यह असत्य है और गरीब अज्ञ जनता की आँखों में धूल झोंकने की कोशिश है। रेशम के कपडे का छोटासा टुकड़ा ले कर उसमें सिंदूर या भस्म बांध देते हैं। जिस पर देवी आती है वह स्त्री कुछ गुनगुनाती हुई अपनी आँखें बंद कर देती हैं। इस समय वहाँ इकट्ठे भक्तों का ध्यान उसकी आँखों की ओर हो जाता है और इतने में वह अपने हाथों को ऊपर उठा कर मलती है और थोड़ासा सिंदूर नीचे गिरता है। असल में वह सिंदूर रेशम के कपड़े की पुडिया में से झरने लगता है। लेकिन लोग इस चालाकी को नहीं देख सकते।

मैंने यह भी अनुभव किया है कि जिन के ऊपर भगवान श्री दत्तात्रेय आते हैं उन लोगों में से वहुत अधिक लोग चरित्र की दृष्टि से गिरे हुए होते हैं। क्या, योगेश्वर गुरुदत्त ऐसे क्षुद्रों को शरीर में वास करेंगे ?

इसमें सचाई यही है कि किसी देवता विशेष के बारे में जिसकी जैसी धारना होगी, उसी प्रकार उस देवता विशेष का संचार होगा। फिर भी यह अन्तर्मन को सूचित करने का ढंग है, इस तथ्य को न भूला जाय। मनोविज्ञान की भाषा में उसे Suggestion to Subconscious mind कहते हैं। जिस स्त्री या पुरुष पर तथा-कथित देवी आती हो, वह किसी का भी भला या बूरा नहीं कर पाएगा। क्योंकि उसकी देह में बसेरा करनेवाला देवता सत्य नहीं होता। जिस पर वह आता है उसकी कल्पनाशक्ति के द्वारा रची गई वह एक विचाराकृति (Thought form) होती है। अतः पाठकों से मेरा नम्र निवेदन है कि वे इस भ्रम में पड़ कर न फँसे कि कोई ऐसा तथाकथित व्यक्ति उनकी भलाई करेगा। अपनी इच्छाशक्ति का विकास चरम सीमा तक करने से ही संकल्प सिद्ध होते हैं इस सत्य को वे न फूलें।

(४) **कर्णपिशाच–विद्या :** इसको पाने से दूसरे लोगों के मन में उद्भावित विचार तथा उनके जीवन में घटी भूतकालीन घटनाओं का पता लग जाता है। इस विद्या का महत्त्व इतना ही है। इस विद्या के अस्तित्व के बारे में कोई भी सन्देह नहीं है। लेकिन बडे खेद की बात है कि इस अघोर विद्या को हासील करनेवाले लोग साधुसन्त और त्रिकाल के ज्ञाता होने का दावा करते हैं, और अज्ञ-अपढों की आँखों में धूल झोंकते हैं। इस अघोर विद्या की चर्चा करने के पीछे मेरा उद्देश्य यह नहीं है कि पाठक उसको पाने के लिए प्रयत्न करें। बल्कि मेरी सलाह यही है कि इसके पीछे पड़ कर कोई भी व्यक्ति अपना स्वास्थ्य, अपनी पवित्रता, अपनी ईश्वर-भक्ति आदि उदात्त गुणों को तीलांजली न दें।

कर्णपिशाच-सिद्धि को प्राप्त करने के जो भी मार्ग उपलब्ध हैं वे बिलकुल घृणास्पद हैं। जनसाधारण इन अपवित्र तरीकों से अपरिचित होते हैं। पिशाच-वशिकिरण-विद्या को हासील करने की विधियों का वर्णन मेरे एक मित्र के शब्दों

में ही करूँगा जिससे उस मार्ग की अमानवीयता का ठीक पता लग जाएगा। मेरे मित्र ने मुझसे बताया : " बहुत पुरानी बात है । एक दिन मेरे घर एक बंगाली व्यक्ति आ गया । वह बूढ़ा हो चुका था । उसे भूख लगी थी । संयोगवश वह मेरे दरवाजे पर आ कर कुछ माँग रहा था । उसकी दशा को देख कर मेरे मन में दया उपज आई और मैंने उसे खाना खिलाया । भोजन के बाद वह बरामदे में बैठ गया। मुझे नज़दीक बिठा कर उसने मेरा नाम, मूल जन्मगाँव, मेरे पिताजी का धन्धा, तथा मेरे भाई की हाल ही में हुई मृत्यु आदि के बारे में ठीक ठीक बता दिया । मैं आश्चर्य से दंग रह गया । वह कोई साधु-पुरुष होगा इस भाव से मैं उसके पैर छूने लगा तब उसने मुझे मना कर दिया । उसने कहा ' मैं साधु–महात्मा वगैरह नहीं हूँ । मैं केवल कर्णपिशाच–विद्या का ज्ञाता हूँ । ' मुझे लगा, इस विद्या का लाभ मुझे भी होगा तो ! मैंने उससे पूछा, ' बाबूजी, आप मुझे यह विद्या सिखाएंगे ? ' उसने कहा, ' मित्र, यह विद्या बड़ी खतरनाक है । जो पिशाच तुम्हारे वश में हो जाएगा, वह तुम्हें क्षणभर के लिए भी शांति से बैठने न देगा । तुम्हारा मानसिक सन्तुलन बिलकुल नष्ट हो जाएगा । इस अघोर विद्या के पीछे तुम कभी भी न पड़ना । इस विद्या को पाने से मुझें पश्चात्ताप हो रहा है । उस बंगाली का यह वक्तव्य सुनकर मुझे लगा कि यह चालाक आदमी अपनी विद्या मुझे नहीं देना चाहता है और इसी लिए यह बहानेबाज़ी कर रहा है। मैंने दृढता-पूर्वक कहा, ' देखिए बाबूजी, चाहे जो यातनाएँ सहन करनी क्यों न पडे, मैं सहन करते जाऊँगा । लेकिन मुझे यह विद्या जरूर सिखा दीजिए । ना न कहिए । ' मेरे इस आग्रह को देख कर उस बूढ़े ने कहा, " मैं कल सवेरे आऊँगा । तुम चावल को पका कर रख देना । दाँत को माँजना नहीं । और स्नान भी करना नहीं । '

" दूसरे दिन वह व्यक्ति मेरे घर हाज़िर हुआ। उस के हाथ में एक काले रंग का झोला था । मैंने उसे अन्दर बुला लिया । हम दोनों भी आमने-सामने बैठ गए । उसने अपने झोले में से एक खोपड़ी को निकाला और पक्व चावल (भात) लाने के लिए मुझ से कहा । चावल को उस खोपडी में भर कर भक्षण करने की आज्ञा मुझे दे दी । मेरी रीढ़ की हड्डी में से एक सर्द संवेदना दौडने लगी । मैं पश्चात्ताप करने लगा । ड़र, पश्चात्ताप तथा घृणा के भावों को दबा कर मैंने उस खोपड़ी में रखे चावल में से कुछ खाए । इसके बाद अपनी भाषा में कुछ मंत्र कह कर उसने ताजा मानवी विष्ठा लाने की आज्ञा दी । मेरे मानसिक विरोध को दबा कर मैंने उस काम को भी कर दिया । तब उसने थोडी-सी मनुष्य की विष्ठा खिलाई, और हुक्म दे दिया कि हर दिन सवेरे इतनी ही विष्ठा को भक्षण करना चाहिए । उस के बाद उसने और बताया, 'हर दिन सवेरे आटे की छोटी छोटी गोलियाँ बनवा कर घर के आँगन में होने वाले कुए में फेंक दो । उन्हें मछलियाँ भक्षण करती रहेंगी । और जिस दिन मछलियाँ आटे की उन

गोलियों को खाना बंद करेंगी, उस दिन पिशाच तुम्हारे वश में हो जाएगा।' और ऐसा कह कर उसने मेरी बाई जांघ पर अपने हात से आघात किया जिसके बाद मैं बेहोश हो गया। होश मे आने पर देखा तो उस बंगाली बाबू का कहीं भी पता नहीं था। उसके कहने के अनुसार मैं बड़ा मानसिक कष्ट उठा कर हरदिन मनुष्य की ताजा विष्ठा भक्षण करता था और कुएँ की मछलियों को आटे की गोलियाँ खिलाता था। पांच-छः दिनों के वाद मैंने देखा कि वे मछलियाँ उन गोलियों को स्पर्श तक नहीं करती थीं। उस दिन से मुझे लगने लगा कि मैं अब आज़ाद नहीं रहा। किसी का गुलाम बन गया हूँ। वार वार उस कुएँ पर जाने की इच्छा होती रहती थी। और वैसा करने के सिवाय मन को चैन नहीं आता था। यह आदेश कहाँ से आता था। इसका पता मुझे बिलकुल नहीं था। फिर भी मैं उसका पालन करता था। मेरी ईश्वर के प्रति श्रद्धा नष्ट हो गई। स्नान के बारे में घृणा पैदा हो गई और अस्वच्छता से मन प्रसन्न होने लगा। हाथ-पैर समय बे-समय हिलने लगे। चेहरे पर भय के दर्शन होने लगे। मेरी मनःशांति तथा प्रसन्नता नष्ट हो गई और मेरा मन किसी की गुलामी महसूस करने लगा।

"मैं जिस अमीर परिवार में काम करता था वहाँ एक दिन चोरी हो गई। मेरी मालकिन की सोने की चुडियाँ किसीने चुराई थीं। मालिक ने मुझे बुलाया। मैं थोड़ासा ज्योतिष-शास्त्र जानता था। इसलिए उन्होंने मुझे बुलाया था। उन्होंने मुझसे पूछा, "ये चुडियाँ किसने चुराई है?" मुझे बुलाने के पीछे मालिक का क्या हेतु है यह मैं नहीं समझ सका। अतः डर कर बडे दयनीय भाव से कहा, 'मालिक मैं क्यू चोरूँगा?' और ऐसा कहते वक्त मेरे वायें हाथ का अचानक मेरी जांघको स्पर्श हुआ। तो क्या आश्चर्य! किसी ने मेरे कानों में फुसफुसा कर कहा, "गुलाव के पास।" मैंने भी झट उन शब्दों को दोहराया। गुलाब नामक एक नौकरानी उस परिवार में काम किया करती थी। मालिक ने उसे शीघ्र बुला लिया और वे कठोर शब्दों में उसे डाँटने लगे। तब घबड़ा कर उस नौकरानी ने अपने अपराध को स्वीकार कर लिया और चुराई हुई चुडियों को मालकिन के हवाले कर दिया।

"एक बार हमारे गाँवमें एक नन्हे शिशु का मृतदेह गटर में पडा हुआ लोगों ने देखा। पुलिस आ गई। उन्होंने मुझे बुलाया और पूछा, "इस बालक की माँ कौन है?" बाई जांघ को हाथ का स्पर्श होते ही मेरे कानों में "विधवा मानुबाई।" ऐसी फुसफुसाहट सुनाई देने लगी। मेरे बताने के बाद पुलिस उस स्त्री के घर चले गई और उन्होनें अपने पूछताछ के काम को शुरू किया। वह मृत शिशु उस स्त्रीका ही बेटा था।"

पाठकों, यह आदमी तीन-चार साल पहले मर चुका। उसकी मृत्यू अत्यन्त दयनीय दशा में हो गई। यह दाने दाने को तरसता रहा। और मृत्यु के बाद उसका

मुंह कीडों से भरा हुआ था उसके प्रेत को स्मशान-घाटतक ले जाने लिए भी चार आदमी नहीं मिले !

इस ग्रंथ में केवल अनुभव की बातों को लिखने की प्रतिज्ञा मैं कर चुका हूँ। इसीलिए कर्णपिशाच-सिद्धि के बारे में इतनी विस्तृत चर्चा मैं ने की है। ऊपर जिस व्यक्ति का वर्णन किया गया है, उसकी यातनाएँ तथा दयनीय मृत्यु की बात को पढ़ कर किसी के भी मन में इस अघोर विद्या के प्रति कोई भी आकर्षण नहीं पैदा होगा। अगर इसको पढ़ने के पहले कोई दिलचस्पी रही भी हो तो इस हकिकत को पढ़ कर वह जरूर नष्ट होगी ! इस अघोरी घृणास्पद विद्या के पीछे पड़ने की अपेक्षा जिन सात्त्विक (पवित्र) साधनाओं की चर्चा मैं कर चुका हूँ उनका अभ्यास करना हमेशा सुखद सिद्ध होगा। शास्त्रों में भी कहा गया है कि कर्णपिशाच विद्या के ज्ञाता को मृत्यु के बाद स्वर्ग नहीं मिलता। उसकी आत्मा पिशाच-योनि में तड़फड़ाती रहती है।

(५) प्लैंचेट : (Planchet) करीब पच्चीस-तीस साल के पहले इस साधना का बड़ा बोलवाला था। घर–घर में प्लैंचेट के प्रयोग चलते थे। इस विधान में जरा भी अतिशयोक्ति नहीं है। इस साधना के लिए लकड़ी का एक समतल पीढ़ा और तिपाई को काम में लाया जाता है। उसी प्रकार कैरम के बौर्ड पर कपूर रखकर उसे जलाया जाता है और उस पर एक कांच का गिलास औंधा रखा जाता है। कपूर की ज्योति बुझने पर वह गिलास निर्वात (Vacuum) हो जाता है। कैरम बोर्ड की चारों ओर ए से लेकर जेड् तक अँग्रेजी अक्षर लिखे हुए होते हैं। इस विधि के लिए दो या चार व्यक्ति आवश्यक हैं। उनमें से एक व्यक्ति को मीडीयम (साधन या माध्यम) कहा जाता है। सभी लोग आँखें मुंद लेते हैं और उस गिलास पर सिर्फ अपनी उँगली बडी सावधानी से रख देते हैं। फिर मीडीयम के द्वारा किसी मृत व्यक्ति की आत्मा को मन ही मन आवाहन किया जाता है। कुछ समय के बाद वह गिलास हिलने लगता है और धीरे धीरे एक एक अक्षर पर जाकर फिर से अपनी जगह पर आकर रुक जाता है। उन उक्षरों को जोड़ने से जो नाम तैयार होगा उस नाम का व्यक्ति याने उसकी आत्मा प्लैंचेट पर उपस्थित है ऐसा माना जाता है। उस आत्मा से कोई भी प्रश्न पूछा जा सकता है। और जो उत्तर मिलते हैं उन्हें सत्य माना जाता है।

दो विभिन्न दिशाओं से इस साधना के बारे में सोचा जा सकता है। कुछ लोग कह सकते हैं कि प्लैंचेट की यह विधि शुद्ध ढोंग है। उसी तरह ऐसा भी माना जा सकता है कि मीडीयम का मन सचमुच शांत और एकाग्र हो जाने के कारण अंतर्मन की सूचना के अनुसार उसकी उंगली का स्पर्श होते ही वह गिलास अक्षरों के पास जा कर शब्द बन जाता है।

प्लैंचेट की साधना के बारे में वैज्ञानिक तौर पर भी स्पष्टीकरण किया जा सकता है। गिलास पर उंगली रखने से मीडीयम का मन सचमुच एकाग्र हो जाता है। " किसी मृत व्यक्ति विशेष की आत्मा प्लैंचेट पर आनेवाली है " यह जागृत मन का शक्तिशाली विचार-प्रवाह उसके अन्तर्मन की गहराई में प्रवेश करता है। अब उसका शरीर अन्तर्मन के काबू में होने के कारण उस अन्तर्मन में पैठे विचार के अनुसार उसकी उँगली के द्वारा वह गिलास उन अक्षरों को स्पर्श करता हुआ घुमने लगता है। अतः प्लैंचेट की विधि अन्तर्मन के खेल के सिवाय और कुछ भी नहीं है। प्लैंचेट पर जो भी सन्देश हम पढते हैं वे किसी मृत व्यक्ति की आत्मा से नहीं आते। उनका मूल स्रोत मीडीयम का अन्नर्मन ही है, इस में कुछ भी सन्देह नहीं।

कुछ लोग दावे के साथ कहते हैं कि वे लो० तिलक, पूज्य महात्माजी, नेताजी सुभाष आदि आदि महान नेताओं की आत्माओं को बुला लाते हैं। अगर यह सच है तो उन महात्माओं से आज भी नए नए ग्रंथों को लिखाया जा सकता है और उन के ज्ञान से आज भी लाभ उठाया जा सकता है। लेकिन प्लैंचेट चलानेवाले किसीने भी ऐसा नहीं किया है।

घूड़–दौड़ में जीतनेवाले घोडों तथा मटका जैसे जुए के आँकडों का पूर्वज्ञान प्राप्त करने के लिए कुछ लोग प्लैंचेट के पीछे पागल हो जाते हैं। लेकिन ये प्रयोग कभी भी सफल नहीं होते। क्योंकि मीडीयम जिस विचार को अन्तर्मन में छोडेगा वही विचार प्लैंचेट पर प्रकट होगा। अतः ऐसी बातें कभी सच नहीं निकलती। अतः प्लैंचेट अन्तर्मन का एक मामुली-सा खेल है और कुछ भी नहीं।

□ □ □

.१४.

स्वप्नसृष्टि

प्राचीन भारतीय शास्त्रों के अनुसार मानव मन की चार स्थितियाँ होती हैं। उनके नाम हैं: सुषुप्ति, स्वप्न, जागृति तथा तूर्यावस्था। सुषुप्ति में मनुष्य को व्यक्तिगत तथा सांसारिक दृश्य-जगत् का ज्ञान नहीं होता। इस स्थिति में मनुष्य का मन दो तरह से अनुभव करता है। एक "मेरी समझ में कुछ भी नहीं आया।" दो "मैं गहरी नींद में था।" ये दो अनुभव अज्ञान तथा सुखसे भरे हैं। कुछ योगियों ने सुषुप्ति की तुलना समाधि से की है। लेकिन समाधि की स्थिति में मन चेतन से एकरूप हो जाता है और वह आत्मज्ञान को अनुभव करता है; तो निद्रा में मन अज्ञान में विसर्जित हो जाने के कारण वह केवल अज्ञान का अनुभव कर सकता है। अतः निद्रा और समाधि समान स्थितियाँ नहीं है। अगर ऐसा होता तो नींद के कारण सभी मानव-समाज ज्ञानी बन जाता। नींद एक सांसारिक, जड, कुदरती बात है और समाधि स्व-प्रयत्न, साधना या तपस्या का फल है। निद्रा नियत समय के बाद नष्ट हो जाती है तो समाधि का काल केवल योगी की इच्छा पर निर्भर होता है। नींद के सिवाय मनुष्यप्राणी जिंदा नहीं रह सकता। लेकिन समाधि के बिना भी योगी जीवन बिता सकता है। संसार के सभी जीव निद्रावस्था का अनुभव करते हैं। लेकिन समाधि की स्थिति में प्रवेश करना मनुष्य की अपनी बात है। निद्रा में अन्य विचारों की शृंखला टूट जाने से मनुष्य एक तरह का सांसारिक, क्षणिक सुख पाता है; तो समाधि की स्थिति में मनुष्य ब्रह्मानंद को अनुभव करता है। पहला सुख विचारों के अभाव (Negation of thoughts) का फल है। तो समाधि से प्राप्त सुख सत्-चित-आनंदस्वरूप होता है। तूर्यावस्था की स्थिति को प्राप्त करना अत्यंत कठीण बात है और इसका लाभ केवल इनेगिने भागवान लोगों को ही होता है। माण्डूक्य उपनिषद में तुर्यावस्था को "चतुर्थं मन्यन्ते।" कहा गया है। इसका मर्म यही है कि मन की चारों दशाओं में तूर्यावस्था मनुष्य मन की स्थिति नहीं है।

वह उससे भी वढ़ कर आत्मस्वरूपावस्था है। इस तूर्यावस्था में मन को सांसारिकता का ज्ञान नहीं होता। वह ब्रह्मस्वरूप और विशुद्ध आनंद का अनुभव करता है। अतः " चतुर्थं मन्यन्ते। " का अर्थ है तूर्यावस्था जिसे चौथी (सर्वोच्च) स्थिति माना गया है। वह केवल मन की दशा ही नहीं है। वह अति उच्च कोटि की स्थिति है। ब्रह्मज्ञान तथा आनंद को अनुभव करनेवाला मन आत्मस्वरूप या ब्रह्मस्वरूप से भिन्न होना आवश्यक है। अतः स-विकल्प समाधि में मन का अलग अस्तित्व होता है। लेकिन निर्विकल्प समाधि में मन ब्रह्मस्वरूप में एकरूप हो जाने के कारण ब्रह्म का अलगता से अनुभव करनेवाला मन बच ही नहीं सकता। अतः ऐसी एकरूपता की स्थिति का वर्णन करना असंभव है।

अब जाग्रतावस्था की चर्चा करना मैं उचित समझता हूँ। अपने अज्ञान के कारण जब तक मनुष्य इस संसार को सत्य मान कर चलता है तव तक इस संसार का सृजन करनेवाला कोई सर्जक (निर्माता) अवश्यमेव होगा, इस बात को भी मानना पडेगा। च्यूंकि यह संसार ईश्वरीय संकल्प के कारण निर्माण हो चुका है, इसी लिए वह मनुष्य पैदा होने के पहले भी था, मनुष्य के जीवन-काल में भी है और मनुष्य की मृत्यु के वाद भी अनंत काल तक रहेगा, इस तर्क का स्वीकार करना ही पडता है। यह सारा जड़ संसार और उसका द्रष्टा " मैं " यह सब माया है। मृगजलवत् है। यह मृगजल आत्मस्वरूप की ऊपरी सतह पर दिखाई देता है। यह द्वैत के पीछे महान गहराई में, अंतीम, शाश्वत, एकमेवाद्वितीयम् ब्रह्म है। मनुष्य प्राणी जव इस द्वैतभाव को पहचान कर उसके पार होनेवाले ब्रह्म नामक सत्य को पहचान लेने में सफल होता है तब वह जन्म-मृत्यु के फेरे से मुक्त हो जाता है। वह ब्रह्मरूप हो जाता है। यह बाहरी जड़ संसार सत्य प्रतीत होने के कारण मनको क्षणभर सुख देनेवाली चीजों के प्रति मोह उत्पन्न होता है और मन को पीड़ा पहुँचानेवाली चीजों के प्रति घृणा का भाव पैदा होता है। सत्, चित्, आनंद, नाम और रूप इने पाँचों को लेकर सांसारिक वस्तु की रचना हो गई है। लेकिन मनुष्य की ज्ञानग्रहण करने की शक्ति सीमित होती है। मनुष्य का सारा ज्ञान केवल नाम और रूप इन दो बातों पर निर्भर होता है। अतः मनुष्य जिस वस्तु का अनुभव करता है उसमें से सत्, चित्, आनंद को अलग करता है। हर वस्तु सें सत्–चित् आनंद का अनुभव करने की क्षमता मनुष्य में नहीं होती है। उस तत्त्व को स्पष्ट करने के लिए मैं सोने के गहने का उदाहरण दूंगा। जब हम गहने का आकार (रूप) और उसकी चमकदमक को देखते रहते हैं, तव उस रूप के पीछे जो सोना होता है उसका जरा भी खयाल नहीं करते। वास्तव में उस गहने में गहना नामक कोई भी वस्तु नहीं होती। जो कुछ है वह सोना ही है। अतः सोने के वारे में सोचने पर इस तथ्य को जानना चाहिए कि गहने का नाम और रूप दोनों भी मिथ्या (असत्य) हैं और सोना एकमात्र सत्य है। बिलकुल

इस न्याय के अनुसार जब तक हमारा ध्यान नामरूपात्मक वस्तु के पीछे होनेवाले ब्रह्मसत्य की ओर आकर्षित नहीं होता, तब तक वह नामरूपात्मक वस्तु, वस्तू के रूप में (सत्य के रूप में) भासमान होती रहेगी। महान् ज्ञानी व्यक्ति जब "सर्वं खलु इदं ब्रह्म " इस महान् सत्य को अनुभव कर पाता है तब उसे यह सारी नामरूपात्मक सृष्टि भी सत्य प्रतीत होती है। और इस नामरूपात्मक सृष्टि को देखनेवाला (द्रष्टामन) भी ब्रह्म है यह ज्ञान उसे हो जाते ही, " ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति।" ऐसी उसकी स्थिति हो जाती है । परमात्मा को छोड़ कर कोई भी अन्य वस्तु उसे नहीं दिखाई देती। और ऐसी अद्वितीय दशा में वह बोल उठता है, "तत्र को मोहः को शोक : एकत्वम् अनुपश्यतः " सभी प्राणियों में केवल मनुष्य मात्र को मुक्ति का अधिकार है। यक्ष, किन्नर, गंधर्व और पशुपक्षी आदि, भोग-योनि के अन्तर्गत आते ह। मानव जीवन की सार्थकता आत्मज्ञान-प्राप्ति में है। अतः द्रष्टा-दृश्य-दर्शन, भोक्ता-भोग्य-भोग, ज्ञाता-ज्ञेय-ज्ञान आदि त्रिपुटियाँ आत्मस्वरूप की ऊपरी सतह पर केवल भासमान होनेवाली बातें हैं। सत्य जो है वह इनके पीछे, बड़ी गहराई में छिपा रहता है। वह सत्य ही ब्रह्म है। वही आत्मस्वरूप है। वही मेरा, आपका, उनका स्वरूप है। इस तथ्य को अनुभव करने से मनुष्य-जीवन कृतार्थ हो जाता है। वही जीवन की चरितार्थता है।

अब मैं स्वप्न-दशा का वर्णन करूँगा। उपनिषदों में इस दशा की विस्तृत चर्चा की गई है। उपनिषद् के अनुसार सुषुप्ति और जागृति इन दोनों को जोड़ने की कडी (Link) है स्वप्न। स्वामी रामतीर्थजी के अनुसार पहले निद्रा और उससे संबंधित अज्ञान, बाद में उस अज्ञान से सूक्ष्म स्वप्न-सृष्टि और इस सूक्ष्म-सृष्टि से जाग्रतावस्था की स्थूल सृष्टि ऐसी शृंखला है। अतिश्रम के कारण मनुष्य का शरीर थक जाता है और अति विचारों के कारण मन थक जाता है। शरीर और मन थकने के बाद स्वाभाविक ढंग से मनुष्य निद्रा के आधीन हो जाता है। इस वक्त जाग्रत मन (बहिर्मन) निद्रारूपी गहरे अज्ञानांधःकार में डूब जाने के कुछ क्षण पहले अथवा नींद खुलने के कुछ क्षण बाद, उसका अन्तर्मन से संबंध प्रस्थापित हो जाता है। उस समय वह अत्यन्त थोड़े समय के लिए ज्ञानमय हो जाता है। उस ज्ञान के आलोक में अन्तर्मन में घटनेवाली अगणित घटनाओं के दर्शन हो जाते हैं। इस स्थिति को स्वप्न कहते हैं। जन्मजन्मांतर के दृश्यों, संस्कारों तथा अनुभवों का भांडार यही अन्तर्मन होता है। लेकिन जाग्रतावस्था से मनुष्य इस भांडार के बारे में कुछ भी नहीं जानता। लेकिन सपने में थका हुआ मन भी जाग्रतावस्था को पूर्ण रूपेण भूल कर अन्तर्मन से संपर्क प्रस्थापित कर लेता है। सपनों पर मनुष्य का काबू नहीं चलता। अगर ऐसा होता तो दुःखपूर्ण तथा भयप्रद सपनों से मनुष्य छुटकारा पा लेता या अपनी अतृप्त इच्छाओं को सफल बनानेवाले ही स्वप्न मनुष्य देखता। जाग्रतावस्था में जो इच्छा बडी तीव्र

होती है, उसके ही बारे में मनुष्य स्वप्न देखता है। लेकिन ऐसे प्रसंग इनेगिने होते हैं। बहुतेरे ज्ञानी लोगों का कहना है कि सपने जागृतावस्था में होनेवाली घटनाओं को सूचित करते हैं। कुछ समय के लिए इसे सच भी माना जा सकता है। लेकिन अनेकों बार सपने में देखी घटनाओं तथा सूचनाओं का कुछ भी परिणाम जाग्रतावस्था में नहीं दिखाई देता। एक अन्य मत के अनुसार अज्ञान सुषुप्ति का बीज है; स्वप्नदृश्य उस बीज का कोंपल और जाग्रतावस्था उस कोंपल का पूर्ण विकास है। इस विचार में बहुत कुछ तथ्य है। किसी भी वस्तु या घटना की विकसित दशा के पहले सूक्ष्म बीजावस्था का अस्तित्व आवश्यक है। वृक्ष के उदाहरण से यह सब स्पष्ट हो जाएगा। कोई भी वृक्ष एकाएक नहीं दिखाई देता। उसके लिए बीज बोना आवश्यक है। जमीन में बीज बोने के बाद उस में से नन्हा कोपल बाहेर आ जाता है। और निश्चित समय के बाद पूर्ण विकसित वृक्ष दिखाई देता है। मैं पहले भी कह चुका हूँ कि सूक्ष्म वस्तु का द्रष्टा भी सूक्ष्म होना चाहिए। जागृति और सुषुप्ति इन दो स्थितिओं के बीच में होनेवाला यह मन विचार–विकारहीन होने के कारण सूक्ष्म बन जाता है। और इस तरह का कुछ हद तक ज्ञानी और कुछ हद तक अज्ञानी मन स्वप्न में जो भी कुछ देखेगा वह सच निकलने की बडी संभावना होती है। जागृति और सुषुप्ति के बीच स्थित मन जितना अधिक ज्ञानमय होता जाएगा, सपने में पैदा हुए सूक्ष्म बीजभाव को देखने की उसकी शक्ति उतनी अधिक विकसित हो जाएगी। इससे स्पष्ट हो जाता है कि इस मन पर अज्ञान अंधःकार का जितना अधिक प्रभाव रहेगा, वह उसी मात्रा में मूढ बनता जाएगा और उसे स्वप्न-सृष्टि का विपरीत ज्ञान हो जाएगा। अतः सपनों में भावी घटनाओं की सूचना मिलने के बावजूद भी, इस मन को उस सूचना का सही ज्ञान नहीं हो पाता और स्वप्नदृश्य सच नहीं निकलते। या ऐसा कहेंगे कि स्वप्नदृश्य और जाग्रतावस्था की घटनाओ में कुछ भी समानता नहीं दिखाई देती।

बहुत लोगों का यह अनुभव रहा है कि उषाकाल में जो सपने दिखाई देते हैं वे सच निकलते हैं। इसकी मीमांसा यह है कि शांतिपूर्ण, गहरी नींद के कारण मन भी पूर्णरूपेण आराम पाता है। जब मनुष्य शांत निद्रा के बाद जाग उठता है तब उसे " मैं " या " अहम् " का ज्ञान हो जाता है। यही विशुद्ध ज्ञान है। जागने के पहले मन शांति से सपना देखता है और उसके संबंधी जो भी ज्ञान उसे हो जाता है वह यथार्थ और सन्देहहीन होता है। यही कारण है कि प्रातःकालीन सपने सच निकलते हैं। मेरे एक अद्भुत सपने का वर्णन यहाँ अनुचित नहीं होगा। बहुत वर्ष पहले मैंने इस सपने को देखा था। सपने में पुलिस आ कर मेरे हाथों में हथ-कडियाँ ड़ाल कर मुझे साथ ले जाने लगीं। मैं चौंक कर जाग उठा। मन बड़ा परेशान रहा। कुछ समझ में नहीं आया। फिर दोपहर दो बजे पुलिस मेरे घर आ

गईं। अदालत में हाजिर होने का हुक्म (समन्स) था। अब मुझे पता चला कि मेरे घर का गटर भर गया था और गंदा पानी सार्वजनिक रास्ते पर वह रहा था। दो-तीन दिन मैंने उसी की ओर ध्यान भी नहीं दिया था। अतः मेरे शहर की म्युनिसिपल्टी ने मेरे खिलाफ मुकदमा दाखिल किया था। वहाँ मुझे पाँच रुपए जुर्माना हो गया।

इस तरह भावी घटनाओं को सूचित करनेवाले सपने कभी न कभी दिखाई देते हैं।

स्वप्न-मीमांसा करनेवाली सैंकडों किताबें उपलब्ध हैं। विशिष्ट स्वप्न दृश्य, विशिष्ट भावी घटना का सूचक होता है, इस तरह के कुछ कार्य–कारण भाव के आधार पर इन किताबों की रचना की गई है। इन ग्रंथों में बताई गई सभी बातें सत्य नहीं हैं।

मेरे स्वप्न–दृश्यों को लिपीबद्ध करने की मेरी पुरानी आदत है। ऐसे स्वप्न और जागृतावस्था में घटनेवाली घटनाओ का रिश्ता सिद्ध करने का प्रयत्न मैं बरसों से कर रहा हूँ। मेरे अनुभव के आधार पर सपनो के निम्न अठारह प्रकार और उनसे संबंधित अनुभव दे रहा हूँ।

(१) सपने में बाघ–सिंहादि हिंस्र प्राणियों के दर्शन होने से किसी भयानक घटना की सूचना मिलती है। इस घटना से मन को बड़ा दुख पहुँचेगा।

अगर बाघ–सिंह कुछ दूरी पर से जा रहे हों तो उस घटनाकी भयानकता अधिक नहीं होगी।

लेकिन घर में घुस कर ये पशू आपके ऊपर हमला करते दिखाई देंगे तो समझना चाहिए कि कोई भयानक घटना शीघ्र ही घटनेवाली है।

(२) सपने में हम देखते हैं कि रास्ते में खूब सिक्के बिखरे पड़े हैं। हम उन्हें इकट्ठा कर रहे हैं। यह सपना द्रव्यनाश को सूचित करता है।

सन १९६८ इ. में इस तरह का सपना मैंने लगातार देखा। और कुछ दिनों के बाद शेअर बाजार में आठ हजार रुपएका नुकसान उठाना पड़ा।

(३) कभी कभी सपने में हम हवा में उड़ रहे हैं; इस तरह का दृश्य दिखाई देता है। इसके पीछे दो कारण हैं। पेट में गैस (वायु) होने से अथवा भावी शुभ घटनाओं के कारण। ऐसा सपना देखने के बाद मनुष्य की स्थिती सुधर जाती है। कुछ शुभ समाचार भी आ पहुँचते हैं। यह स्वप्न वायुतत्त्वात्मक होने के कारण पवनपुत्र हनुमानजी की आराधना करने से अच्छा फल प्राप्त होता है।

(४) स्वप्न में मंदिरों, वनों, साधु-सन्तों, पवित्र नदियों के दर्शन होने से ढ़ाई वर्ष बाद इष्ट देवता अथवा किसी अज्ञात शक्ति की कृपा से लाभ होता है। जिस व्यक्ति को ऐसे सपनों को देखने के सुअवसर प्राप्त होते हैं वह बडा भागवान होता है।

(५) जिस व्यक्ति की मृत्यु सपने में दिखाई देती है, वह दीर्घ काल तक जीवित रहने की संभावना होती है। लेकिन स्मशान घाट पर जलती चिता के दर्शन होना अशुभ है ऐसा मेरा अनुभव रहा हैं। किसी प्रिय व्यक्ति की मृत्यु का भी यह सूचक है।

(६) स्वप्नद्रष्टा खुद को किसी ऊँची खतरनाक जगह पर पाता है। पहाड की चोटी, मीनार, मंदिर का कलश जैसे ये स्थान होते हैं। परिवार की संपन्नता नष्ट होने की यह सूचना हैं। ऐसी जगह से अगर स्वप्नदृष्टा ठीक नीचे उतर पाएगा तो जीवन में कुछ मामुली अड़चनों का सामना करना पड़ता है।

(७) सपने में अकेशा विधवा स्त्री के दर्शन से सुंदर स्त्री से परिचय होता है। प्रेमी जनों के लिए यह स्वप्न शुभ लक्षण है। मेरे कई मित्रों का यह अनुभव रहा है।

(८) सपने में ऐसा दृश्य दिखाई देता है कि हम प्लेटफार्म पर हैं। हमारा सामान रेलगाडी में है। और इतने में गाडी छूट जाती है। इस सपने से यह सूचित होता है कि स्वप्न-द्रष्टा को मिला सु-अवसर व्यर्थ चला जाएगा। वह उसका लाभ नहीं उठा पाएगा।

(९) सपने में पर-स्त्री से अनैतिक रिश्ता प्रस्थापित होने से स्वप्नद्रष्टा की पत्नी का स्वास्थ्य बिघड़ने की संभावना होती है।

(१०) सपने में हाथी के दर्शन होने से धन प्राप्त होता है और दरमियान स्वप्नद्रष्टा की पत्नी गर्भवती हो तो उसे पुत्ररत्न का लाभ होता है।

(११) स्वप्न में वृद्धजनों की भीड़ दिखाई देने पर पितरों को पिंडदान कर तृप्त करना कल्याणप्रद होता है। उनके दर्शन से विस्मृति में खोई बातों की याद आने से मन भी उदास हो जाता है।

(१२) सपने में किसी महात्मा या राजनीतिक के दर्शन होना स्पप्नद्रष्टा के लिए अनुकूल है। मेरे सपने में एक बार श्री रामकृष्ण परमहंस प्रकट हो गए और उन्होंने दूध, चावल आदि की माँग की। जागने पर मैंने इन चीजों का भोग चढ़ाया। मेरा मन बहुत प्रसन्न हुआ।

(१३) बीमार व्यक्ति सपने में देखता है कि वह बीमार है, तो उसका स्वास्थ निश्चित ठीक हो जाने का यह शुभ-लक्षण है।

(१४) सपने में अनुत्तीर्ण होनेवाला विद्यार्थी परीक्षा में जरूर उत्तीर्ण होता है।

(१५) सपने में अति-भोजन करना, आवश्यकता से अधिक पानी पीना शारीरिक पीड़ा को सूचित करते हैं।

(१६) स्वप्नदृष्टा सपने में स्वयं को नग्नावस्था में घूमता-फिरता देखता है। धन प्राप्न होने का यह लक्षण है।

(१७) अगर स्वप्नद्रष्टा सपने में दुर्घटना का शिकार हो जाता है तो वास्तव में वह दुर्घटना टल जाती है।

(१८) स्वप्नद्रष्टा अनुभव करता है कि वह चलने में बिलकुल असमर्थ है। यह स्वप्न सूचित करता है कि वह व्यक्ति दो महीने तक नया धंधा शुरू न करे। नई योजना न बनावे। उसमें जोखीम है।

उपनिषदों में दो प्रकार के स्वप्नों की चर्चा की गई है। उपनिषद् प्राचीन भारतीय ऋषियों की प्रतिभा का सृजन होने के कारण उनमें जो कुछ लिखा है उसके बारेमें कुछ भी संदेह प्रकट नहीं किया जा सकता।

(१) सपने में कृष्णदन्त पुरुष के दर्शन होने से छः मास के अंदर मृत्यु आ जाती है।

(२) सपने मे कीचड़ से सने पानी की बाढ़ के दर्शन होने पर निश्चित समझना चाहिए कि किसी महान् संकट का आगमन होनेवाला है।

जिसे मैंने ग्रंथ में पढ़ा है और जो मेरे व्यक्तिगत जीवन में सिद्ध हो चुका है ऐसे एक सपने का उल्लेख करना चाहता हूँ। जब स्वप्नद्रष्टा सपने में अन्य व्यक्ति के जूतों को पहन लेता है तब परस्त्री उसके वशमें हो जाती है।

◻ ◻ ◻

. १५.

प्रार्थना का रहस्य

" More things are wrought by prayer than this world dreams of. " संसार में ऐसा कोई भी धर्म नहीं है जिसमें प्रार्थना के लिए अनन्य साधारण स्थान न हो और अगर प्रार्थना में पूर्ण द्वैतावस्था की स्थिति नहीं होगी, तो वह सफलता प्रत भी नहीं जाएगी। प्रार्थना का मर्म भक्त और भगवान के बीच में होनेवाले द्वैत भाव में है। भक्त खुद को एक अत्यन्त क्षुद्र जीव मान लेता है और भगवान को सर्व शक्ति-शाली व सर्वज्ञ, सर्वसाक्षी, सर्वव्यापी तथा दयालु मानता है। निर्गुण निराकार परब्रह्म की जगह भक्त एक उच्च कोटि के ईश्वर को प्रतिष्ठित कर देता है। उसी की आधारशिला पर भक्त जीव कल्पना को विकसित कर देता है। भक्त सोचता रहता है कि, " सांसारिक मायाजाल में मैं एक क्षुद्र, हीन, दीन जीव हूँ और ईश्वर सर्वश्रेष्ठ है। इस ईश्वर की शरण में जाने से सांसारिक दुःखों का विनाश होगा। " अर्थात् भक्त के मन में निर्माण होनेवाला यह भी एक भ्रम ही तो है। इसी लिए मेरा कहना है कि जीवदशा को बनाए रखने पर ही प्रार्थना के प्रति रुचि जाग्रत हो सकती है। सुख तथा विलास की अभिलाषा रखने का काम जीव करता है। इस अभिलाषा की पूर्ति के लिए मनुष्यरूप में जीव प्रयत्नशील रहता है। फिर भी जीवात्मा की यह भौतिक अभिलाषा असफल रहती है। उसके दुःखों की मात्रा नहीं घटती। और ऐसी विषम परिस्थितियों में जीव ईश्वर के चरणों की शरण में जाता है। ईश्वर के पास लौकिक भोग-विलास की माँग करना अन्यन्त दरिद्रता का लक्षण है। जब तक जीव सत्य है तब ईश्वर सत्य है। जीवदशा को सत्य मान कर ईश्वर को असत्य मानना शुद्ध अज्ञान है। अण्डों के लिए आधी मुर्गी को जिंदा रखना और क्षुधा शांति के लिए आधी मुर्गी को काट खाने जैसी यह बात हैं।

प्रार्थना का मर्म क्या है ? क्या प्रार्थना हमेशा सफल होती है ? प्रार्थना करनेवाले को ईश्वर कहाँ तक सम्हाल लेता है ?

मानवी प्रार्थना की आवश्यकता ईश्वर क्यों महसूस करता है ? क्या ईश्वर प्रशंसा-परस्त है ? आदि आदि प्रश्नों से मन व्याप्त हो जाता है। प्राचीन यूनान (ग्रीस) में एक मंदिर था। वहाँ का देवता भक्तों की मनौती को सफल बनाता था। मनोकामना सफल होने के बाद मनौती मनाने के लिए भक्त-गण छोटी घंटियाँ वहाँ टाँग देते थे। एक दिन संयोगवश एक ज्ञानी सज्जन और उस देवता का एक भक्त मंदिर में आ पहुँचे। उस भक्त ने उस ज्ञानी महात्मा को बताया, "देखिए जी ! यहाँ कितनी घंटियाँ लगाई गई हैं जो ऐसे भक्तों ने अर्पण की हैं जिन की मनोकामनाओं को इस देवता ने अपने आशीर्वाद से सफल बनाया है। क्या इससे यह प्रमाणित नहीं होता कि देवता भक्तों की मदत करते हैं ?" इस बात को सुन कर वह ज्ञानी थोड़ासा हँस पड़ा। उसने सवाल किया, "अजी, तुम जो भी कहते हो वह सच है। लेकिन जिन भक्तों की मनोकामनाएँ असफल रही हो, उनके स्मृति चिन्ह यहाँ कहीं भी नजर नहीं आ रहे हैं ?"

इस कहानी का मर्म यही है कि सभी प्रार्थनाएँ सफल नहीं होती।

क्या प्रार्थना के सहारे भाग्य की रेखाएँ बदलती हैं ? नसीब के चक्कर में परिवर्तन होता है ? इस प्रश्न के उत्तर में रमणमहर्षि ने स्पष्ट कह दिया है कि "कर्म-फल को अपरिवर्तनीय मान लेनेसे कर्म-फल ईश्वर से भी महान् बन जाता है। लेकिन कर्म जड़ है और ईश्वर चेतन है।" पति-निधन से व्यथित स्त्री का वर्णन "गुरुचरित्र" ग्रंथ में किया गया है। वह स्त्री पूछती है, "अगर नसीब भगवान से भी अधिक शक्तिशाली है तो भगवान को भजने से क्या लाभ ?"

प्रार्थना के समय जीव–दशा का ज्यों के त्यों रहना आवश्यक है। द्रौपदी-वस्त्र-हरण की कथा को लीजिए। द्रौपदी गर्व के साथ सोच रही थी कि वह स्वयं अपने शील की रक्षा कर पाएगी। और इसीलिए उसने अपने वस्त्रों को थाम लिया था। लेकिन उसके मन में जब तक इस अहंभाव का वास था तब तक श्रीकृष्ण भगवान उसकी सहायता के लिए नहीं आए। जब द्रौपदी ने देखा कि वह अकेली अपनी इज्जत को नही बचा सकती है, तब उसने हाथ जोड़ कर भगवान को आवाहन किया। यहाँ द्रौपदी के मन में जीवाभिमान भी था और उसके साथ आर्तता थी। दोनों भाव एक होने से द्रौपदी की प्रार्थना सफल हो गई। प्रार्थना में आर्तता और श्रद्धा को इतनी ऊँचाई तक ले जाना चाहिए कि "एकमात्र भगवान के सिवाय मुझे बचानेवाला अन्य कोई भी नहीं है; वही मेरा संकट दूर करेगा।" इस भाव के सिवाय मन में अन्य भाव को स्थान नहीं मिलना चाहिए।

जीवदशा समाप्त होने पर कौन, क्यों और किसकी प्रार्थना करेगा ? जीवदशा का लय होने से साधक परम-आत्म-स्वरूप बन जाता है। नमक की लाठी बनवा कर उससे सागर की गहराई को नापने का प्रयत्न करने पर वह

लाठी सागरमय हो जाती है। अतः ऐसी स्थिति में जीवदशा के अ-भाव के कारण सुखप्राप्ति, दुःखविमोचन, आदि आदि भाव समाप्त हो जाते हैं। साधकावस्था में स्वामी विवेकानंद सैकडों संकटों का सामना करते रहे। नौकरी की खोज में दर दर घुमना पड़ा। उनका परिवार भी बड़ा था। ऐसी दशा में वे भगवान श्री रामकृष्ण परमहंस की शरण में आ गए। बडे करुण स्वर में उन्होंने पूछा, "भगवन्, मैं क्या करूँ? कहाँ जाऊँ?" भगवान रामकृष्ण परमहसने कहा, "अरे, तू माँ की प्रार्थना क्यों नहीं करता? उससे एकाद नौकरी माँग।" युवा विवेकानंद भगवती, कालीमाता के मंदिर में पहुँच गए। लेकिन जगद-जननी के सम्मुख खडे होते ही वे निर्विकल्प समाधि की स्थिति में पहुँच गए। प्रार्थना करनेवाला, कालीमाता और प्रार्थना की विधि सबकुच चिन्मय हो गए। अद्वैत मीट गया। सावधान होने के बाद स्वामीजी ने अपना अनुभव भगवान रामकृष्ण को कथन किया। इस घटना का मर्म यहीं है कि प्रार्थना के समय जीवदशा मीट जाने के कारण प्रार्थना सफल हो गई। एक पाई की जगह किसी भिखारी को एक लाख रुपये मिलेते हैं, उसी तरह नौकरी की इच्छा करनेवाले युवा विवेकानंद को शुद्ध समाधि की स्थिति का अनुभव हो आया।

ईश्वर-भक्ति में प्रार्थना और ईश-स्तुति का क्या स्थान है? भगवान पत्रम्-पुष्पम्-फलम्-त्तोयम् की इच्छा नहीं रखते। भगवान भक्ति के प्यासे होते हैं। जीव खुद को ईश्वर से अलग समझता हैं। यह वि-भक्त भाव हैं। यह वि-भक्ति नष्ट होने पर जीव और ईश्वर ये दो अलग भाव नष्ट हो जाते हैं और दोनों का मूलस्त्रोत ज्ञानस्वरूप परमात्मा प्रकट हो जाता है। इसे ही शुद्ध समाधि अथवा निर्विकल्प स्थिति कहते हैं। इस स्थिति में से उत्थान होते वक्त धीरे धीरे जीव-कल्पना का उदय होने लगता है और इस अर्धजाग्रत जीव-कल्पना की स्थिति में मन में जो इच्छा उद्भावित होती है, वह सफलता की स्थिति तक पहुँच जाती है। क्योंकि वह इच्छा सत्य-संकल्प-स्वरूप होती है। इस विवेचन का सार यही है कि सही भक्ति वही है जिसमें साधक स्वयम् जीवदशा को त्याग कर परम्-आत्म-भाव में एकरूप हो जाता है।

जब तक इस तत्त्व का सही अर्थ समझ में नहीं आएगा तब तक भक्ति-मार्ग या प्रार्थना में औपचारिकता का बड़ा प्रभाव रहेगा। देवताओं की तस्वीरों को दीवार पर लगाते समय विशिष्ट दिशा का खयाल करना, किसी यंत्र की उपासना करना, उपवास के दिन नमक भक्षण न करना, शनि की उँगली (मध्यमा) में अँगूठी को न पहनना, आदि उपचार या विधियाँ साधना कि प्रारंभिक स्थिति में आवश्यक हैं। इन वातों पर दृढ़ श्रद्धा रखने से साधकों की मनोकामनाएँ सफल होती है, इसमें सन्देह नहीं। लोग सोचते हैं कि किसी विशिष्ट विधि को अपनाने से ईश्वर की कृपा हो जाती है। इसके वारे में सत्य यह है कि ईश्वरकृपा की प्राप्ति

के बारे में साधक की इच्छा तीव्रता की उच्चतम सीढ़ी तक पहुँच जाती है और उसका स्वाभाविक परिणाम साधक की मनोकामनाएँ सफल होने में प्रकट हो जाता है। औपचारिक विधियों की अपेक्षा इस प्रभावशाली तीव्र इच्छा का महत्त्व अधिक है। कीचड़ से सना हुआ लोहे का छोटासा टुकड़ा लोहचुंबक की ओर आकर्षित नहीं होता। उसी प्रकार मलीन मन ईश्वर की ओर नहीं खींचा जाता। मन की मलिनता को दूर करने का काम ये औपचारिक विधियाँ करती हैं। अतः ये विधियाँ अपने आप में साध्य नहीं हैं। वे केवल साधन मात्र हैं।

इस संसार में मनुष्य प्राणी के साथ साथ कीड़े-मकोड़े, पशु-पक्षी आदि जीव भी रहा करते हैं। ईश्वर कीड़ों-मकोड़ों की मनोदशा को समझ लेता है। तो क्या वह मनुष्य के (जो उसकी सर्वश्रेष्ठ कृति है।) मनोभावों को नहीं पहचानेगा ? अगर ऐसी ही स्थिति है तो फिर ईश्वर के पास कुछ माँगने की क्या आवश्यकता है ? ईश्वर की इच्छा से मनुष्य जीवन में जो भी घटनाएँ घटती जाएँगी उसका स्वागत कर प्रसन्नता से जीवन बिताना सर्वश्रेष्ठ भक्ति की परिसीमा है। प्रार्थना में द्वैतभाव रहा करता है। उसमें जीव-दशा रहा करती है। और जब तक द्वैतभाव का अस्तित्व है, तब तक सच्चा सुख कैसे मिल सकता है ? " द्वितियाद वै भयं भवति।" "यो वै भूमा तत्सुखं नाल्पे सुखमस्ति।" आदि श्रुति-वाक्य प्रसिद्ध हैं। मैं ईश्वर से यही प्रार्थना करता हूँ कि "हे भगवन्, जिस स्थिति में तुम मुझे रखोगे उसी को कल्याणप्रद मान कर, उसी स्थिति में प्रसन्नतापूर्वक जीवन बिताऊँगा। धन, कीर्ति, विलास आदि आदि बातें खिलौनों के समान हैं जिनकी अभिलाषा अज्ञ बालक रखते हैं। ऐसा हट मेरे मन में न उपजे। मेरी तुम्हारे प्रति ऐसी दृढ श्रद्धा है कि जब तक तुम मुझे जीवित रखना चाहते हो, तब तक दो जून भोजन की समस्या मेरे सामने कभी भी उपस्थित नहीं होगी। भगवन्, मेरी यही प्रार्थना है कि मेरी जीवदशा को शीघ्र समाप्त करो ताकि मैं तुमसे एकरूपता पा जाऊँ। बस। मेरी यही प्रार्थना है।"

मेरे पाठक इस मर्म को समझ सकते हैं। अत: मुझे और बताने की आवश्यकता नहीं है।

"भगवन् जैसे रखना चाहते हैं, वैसे रहो।" इस सन्तवाणी को नहीं भूलना है। उसी प्रकार "Those also serve him best who only stand and wait." इस कवि–उक्ति के अनुसार ईश्वर के पास कुछ भी न माँगते हुए उसने जैसे रखा है वैसे ही प्रसन्नता से जीवन को बिताने के मर्म को मेरे पाठक समझ पाएँगे इसमें कोई सन्देह नहीं।

□ □ □

. १६ .

भक्तियोग

"जब तक मनुष्य के मन में भोग-लालसा क्रिया-शील है और जब तक वह संसार को सत्य मानता है तब तक ईश्वर भी सत्य है। सपने में प्यासा मनुष्य जिस प्रकार सपने में दिखाई देनेवाले जलाशय की ओर दौड़ता है उसी प्रकारे संसार के गोरखधंधे में जकड़े हुए मनुष्य प्राणी को भी ईश्वर की ओर जाना है। इस तत्त्व को पहचानने से मेरा जीवन सुखी हो गया।"

इस ग्रंथ के "चिरंजीव जीवन" नामक अन्तीम अध्याय में मैं इस सूत्र को प्रकट किया है।

मनुष्य प्राणी जड़ संसार का अंश है। जिस परमात्मस्वरूप से यह भासमान विश्व विकसित हुआ है उस सत्-तत्त्व का हमें परिचय नहीं है। उसके संबंध में हम अज्ञ हैं। इसी दशा का नाम वि-भक्ति है। परमात्मा और मैं–दोनों भी एक हैं, इस तत्त्व को पहचान लेने की क्रिया का नाम भक्ति है। धन, प्रतिष्ठा, कीर्ति आदि के लिए हम जीवन भर कष्ट उठाएँ रहते हैं। फिर हमारी ये मनोकामनाएँ सफल बनाने में हमारे प्रयत्नों के हाथ छोटे सिद्ध होते हैं। ऐसा क्यों होता है? उत्तर है : मनुष्य के प्रयत्नों में जब तक भगवान सहायक सिद्ध नहीं होते, तब तक वे प्रयत्न असफल रहते हैं। यह त्रिवार सत्य है। इसको समझाने के लिए मैं एक उदाहरण देना चाहता हूँ।

मान लीजिए कि मैं शांति से लेट रहा हूँ। मेरी आँखें बंद हैं। मन ही मन एक विशाल नगरी का निर्माण मैं कर रहा हूँ। इस नगरी में महाभव्य भवन खड़े हैं। गरीबों की झोपडियाँ भी हैं। बाज़ार हैं। अमीर गरीब-भिखारी सभी तरह की प्रजा हैं। मैं अपने मनःचक्षुओं के सहारे यह सब दृश्य देख रहा हूँ। इस मनो-निर्मित नगरी के किसी भी एक भिखारी के मन में अमीर-बनने की महत्त्वाकांक्षा जागृत हो गई। लेकिन उसके लिए यह बात असंभव है। क्योंकि यह नगरी मेरे मन

का सृजन है। अतः वह भिखारी भी मेरी मानसिक सृजन-सृष्टि का एक छोटा-सा अंश है। जब मैं अपना संकल्प बदल कर उस गरीब को अमीर बनाऊँगा केवल तब वह अमीर बनेगा। अन्यथा वह गरीब भिखारी ही रहेगा। इस कथा में उस काल्पनिक नगरी के निर्माण के पूर्व जो स्थिति है वह निर्गुण, निराकार ब्रह्म है। नगरी के सृजन की इच्छा करनेवाला "मैं" ईश्वर है। मनोनिर्मित नगरी यह सृष्टि (या विश्व) है। और उसमें चरने-विचरनेवाली जानदार चीजें जीव हैं। अतः ईश्वर सृष्टि का निर्माता होने के कारण वही मेरे जीवन को बनाने-बिघाड-नेवाला है। मेरे जीवन में घटनेवाली भली–बुरी सभी घटनाएँ उसी ईश्वर की योजना का अंग हैं, इस प्रकार की श्रद्धा को दिनरात मन में जता कर, ईश्वर की भक्ति करने से अखंड सुखद स्थिति का अनुभव का लाभ हो जाता है। और यही विचार सर्वोच्च सीढ़ी तक जाने पर जीवनमुक्ति का हेतु सफल हो जाता है।

भक्तिमार्ग के अंतर्गत पूजा, प्रार्थना, पवित्र स्थलों की यात्रा, व्रत, नेम, उपवास आदि क्रियाएँ जीवदशा के रहते हुए भी मनुष्य को सुख मिलने के लिए प्रचलित की गई हैं। जब तक मनुष्य जीवदशा को सत्य मानता है तब तक दृश्य-रूप सृष्टि उसके लिए सत्य है। सपने में सपना देखनेवाले द्रष्टा को सपने में ही जीवित कोई दुष्ट मारपीट कर रहा है। और इतने में वह स्वप्नद्रष्टा जाग्रत हो गया। उसकी जागृति के कारण स्वप्न द्रष्टा और दुष्ट मनुष्य की मारपीट और उसके कारण द्रष्टा को पहुँची पीड़ा इन बातों की जड़ ही उखाडी जाती है, और वह जाग्रत मनुष्य अकेला रह जाता है। उसी तरह इस विशाल, लंबे विश्वस्वप्न में जीव अनन्त यातनाओं को सहता रहता है। ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धा तथा "भगवान जो दिन दिखावेंगे, उन्हें देखेंगे।" इस तरह के भाव से मनुष्य के मन को आराम मिलता है। मनुष्य का जीवन उसकी अपनी इच्छा से नहीं चलता। मनुष्य-जीवन के स्वामी तो साक्षात् ईश्वर है। इस तत्त्व के बारे में कोई विवाद नहीं हो सकता। अगर ऐसी स्थिति न होती तो हर आदमी अपनी इच्छा के अनुसार सुखी बन जाता।

अतः दो-चार क्षण पूजा-पाठ करने से या किसी धर्म-ग्रंथ को पढ़ने से "मैं महान् ईश्वर-भक्त बन गया।" इस तरह घमंड कर अपने जीव-अहंभाव को पुष्ट किया न जाए। जब तक जीव-संबंधी अहंभाव नष्ट नहीं होता तब तक सिद्धि और जीवन्मुक्ति भी नहीं। दान-धर्म, परोपकार, तीर्थाटन आदि बातों को करते रहना चाहिए। लेकिन इन्हीं बातों का निर्माता "मैं हूँ।" इस तरह का भाव मन में कभी भी नहीं रखना चाहिए। ईश्वर की इच्छा से मेरी देह के द्वारा यह सब हो रहा हैं, उसमें मेरा कुछ भी कर्तृत्व नहीं है इस तरह की मनोवृत्ति को बढ़ाना है। जिस प्रकार सूरज की रोशनी को पा कर चाँद प्रकाशित हो जाता है, उसी प्रकार मनुष्य-जीवन में जो भी कुछ तेज है, उस का स्रोत ईश्वर ही है, इस सत्य ?

पहचानना है। जो भी सुख मनुष्य पाता है उसमें उसका अपना योगदान न के बराबर है। जो कुछ है वह सब ईश्वर की देन है। वह ईश्वर की महीमा है।

जिस साधक की जीवदशा भक्तियोग के सहारे परमात्मस्वरूप से एकरूप हो जाती है, वह साक्षात् परमात्मा बन जाता है। वह मामुली जीव नहीं रह सकता। "ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति।" यह श्रुति-वचन प्रसिद्ध है। इस दशा में वह योगी बीसों सिद्धियों का स्वामी बन जाता है। लेकिन इन सिद्धियों के बारे में उस योगी के मन में जरा-सा भी आकर्षण नहीं रहता। क्योंकि वे सिद्धियाँ, उनका द्रष्टा तथा साधक सभी परमात्मस्वरूप हो जाते हैं। फिर भी उसके हाथों अनजाने में बहुविध अद्‌भुत बातें हुआ करती हैं। लेकिन यह ईश्वर की महीमा है। ज्ञानी पुरुष की मनोकामनाएँ सफल होती हैं। उसके आशीर्वाद सच निकलते हैं। लेकिन यह उसका कर्तृत्व नहीं है। जिस परमात्मस्वरूप में वह जा मिला है उस परमात्मा की यह महीमा है।

अतः प्रार्थना के द्वारा भगवान के पास किसी वस्तु की माँग करना जीवदशा को बनाए रखने के समान है। ईश्वर जिस दशा में हमें रखते हैं उसमें ही खुश रहने और अन्य लोगों के सुखी जीवन को बरदाश्त करने के भाव को भक्तियोग कहते हैं। ईश्वर कीड़ों-मकोड़ों का भी ख्याल करता है। अतः वह तुम्हें नाराज क्यों करेगा? धनिक लोग शक्कर की थाली लेकर जंगल में जाते हैं और चिंटियों की बाँबी को ढूंढ निकाल कर उन्हें शक्कर खिलाते हैं। यह इच्छा उनके मन में कौन पैदा करता है? "हमें शक्कर खिलाओ।" इस प्रकार चिंटियाँ नहीं चिल्लाती हैं। अतः आप प्रार्थना का रास्ता अपनाना चाहते हैं तो इतना ही कीजिए: "हे भगवन, यह सृष्टि तेरा ही सृजन है और उसमें घटनेवाली घटनाएँ तेरी ही इच्छा की लीला है। मैं इस सृष्टि का एक अंश होने के नाते मेरा जीवन भी तेरी इच्छा का खेल है। अतः हे भगवन, तू मेरे मन में ऐसे भावों को भर दे कि जिससे मैं अपनी स्थिति में प्रसन्नता से जीवन बिताऊँ।"

मेरे पाठकों के लिए भक्तियोग पर एक विस्तृत ग्रंथ लिखने की मेरी इच्छा है। इस ग्रंथ में भक्तियोग के बारे में इतनी चर्चा काफी है। तुर्यावस्था की स्थिति में जा कर पारिवारिक जीवन में मग्न मनुष्य के मन को किन अच्छी बातों का लाभ हो सकता है यह मेरे इस ग्रंथ का विषय है। अतः भक्तियोग के बारे में नितान्त आवश्यक बातों की चर्चा करना मैं योग्य समझता हूँ।

"ईश्वर कृपा का प्रमाण"

अपनी सांसारिक जिम्मेदारियों को भगवान पर छोड़कर, उसकी इच्छा से चले संसार में प्रसन्नता से रहने पर वह दयालु परमात्मा अपने भक्तों के लिए क्या

क्या करता है और, और भक्त भी ईश्वर को कैसे पाते हैं, इसके बारे में मेरे कुछ व्यक्तिगत अनुभवों को यहाँ प्रकट करना उचित समझता हूँ। मेरे पाठक इसे आत्मप्रशंसा न समझें। जो कुछ है वह ईश्वर की महीमा है।

मैं एक दिन शेववाँव से पाथर्डी गया था। बैंक का कुछ ज़रूरी काम था। पाथर्डी से दस–बारा मील की दूरी पर श्रीवृद्धेश्वर नामक एक पवित्र क्षेत्र है। यहाँ तक तो आ ही चुका हूँ तो श्रीवृद्धेश्वर के दर्शन कर ही लौटूँगा, ऐसा मैंने सोचा। सवेरे मेरे एक मित्र के साथ साइकिल पर बैठ निकल पड़ा। पाँच-छः मील पार करने के बाद मेरी साइकिल की ट्यूब पंक्चर हो गई। अब साइकिल को खींचते खींचते आगे बढ़ने के सिवाय और कोई चारा न था। ऐसा होते हुए भी हम दोनों उस गाँव तक पहुँचे जहाँसे वह मंदिर दो–ढाई मील की दूरी पर एक पहाडी पर था। दोपहर के बारह बज रहे थे। अतः विश्राम करने के लिए हनुमानजी के एक मंदिर में हम चले गए। मंदिर में चारों ओर कुड़ाकचरा पड़ा था। उसे साफ कर हम जमीन पर बैठ गए। पेट में चूहे दौड़ने लगे। गाँव में से कुछ खाने की चीजें ले आने के लिए मित्र को भेज दिया। लेकिन गाँव छोटा होने के कारण वहाँ दूकान भी नहीं थी। मित्र खाली हाथ लौट आए। अब कैसे होगा ? इतने में स्मरण हो आया कि हनुमानजी के इस मंदिर में आने के बाद हमने नमस्कार भी नहीं किया है। मैं झट खड़ा हो गया और हनुमानजी के सामने साष्टांग दंडवत् कर दिया। मन ही मन कहा, " हे भगवान, तू कीडों-मकोडों के पेट का खयाल करता है। तो फिर आज हमारी यह दशा क्यों हो रही है ? " मेरी आँखें भी डबडबा आई थीं। तो क्या आश्चर्य ! वहाँ से एक मारवाडी सज्जन जा रहे थे। उन्होंने हमें देखा और पूछा, " आप यहाँ क्यों बैठे हैं ? " हमने जवाब दिया, " हम श्रीवृद्धेश्वरजी के दर्शन करने जा रहे हैं। लेकिन धूप के कारण थोड़ा आराम करने के लिए यहाँ ठहरे हैं। " वह सज्जन आग्रहपूर्वक हमें अपने घर ले गया। उसका तीन मंजीलवाला मकान राजमहल के समान सजाया हुआ था। उसने हमें आदरपूर्वक बिठाया। पंखा शुरू किया और बडे दो गिलासों में से मसाले का दूध सामने रख दिया। फिर उसने कहा, " आप थोडा आराम कीजिए आज मेरे लडके का मुण्डन है। अतः आपके साथ भोजन करने का अवसर हमें मिले तो हमारे भाग ही खुल गए। शाम के वक्त मेरा ड्राइवर आपको वृद्धेश्वर ले जाएगा। रातके समय वहीं मुकाम कर लीजिए। सवेरे आराम से शहर की ओर जा सकते हैं। " डेढ़ बजे भोजन परोसा गया। ऊँचे पक्वानों से थालियाँ सजी हुई थीं। थालियों के चारों ओर रांगोलियाँ निकाली गई थीं और अगरबत्तियाँ जल रही थीं। भगवान की इस लीला को देख कर हमारे हृदय श्रद्धा से भर आए। आँखें डबडबा आईं। शाम के वक्त उनकी गाडी में बैठ हम श्रीवृद्धेश्वर मंदिर चले गए। भगवान की कृपा से वहाँ एक योगिनी माता का वास था। हमने उसके पैर छुए। रात के भोजन के

लिए उस माता ने खिचडी और दही का प्रबंध किया। उसका स्वाद अमृत से भी बढ कर था। भोजनोत्तर वेदान्त, धर्म, नीति, मुक्ति आदि गंभीर बातों को ले कर चर्चा हो गई। मन प्रसन्न हुआ। सत्संग का मौका हमेशा नहीं मिल सकता। सवेरे उस माता के फिर एक बार दर्शन किए। कबीर कहते ही हैं कि " जाको राखे साइयाँ, मार न सके कोय ! "

उस समय मैं पूनामें अकेले रहा करता था। उस समय मुझे बंबई में नौकरी मिली। अतः बम्बई जाना आवश्यक था। पूना–एक्सप्रैस दोपहर के तीन बज कर बीस मिनट पर छुटनेवाली थी। आवश्यक सामान बांध कर टाँगा ढूंढ़ने के लिए बाहर निकला। दोपहर के दो बज चुके थे। टाँगे के लिए दर दर घूम आया। लेकिन एक भी टांगा नहीं मिला। उस सामान को अकेले नहीं ढो सकता था। फिर टिकट खरीदना था। इस गाडी से बम्बई जाना नितांत आवश्यक था। अन्यथा नौकरी चली जाने का ड़र था। परेशान होने से कुछ भी लाभ नहीं था। कुर्सी पर बैठ गया। मन को शांत और एकाग्र किया। तो अचानक याद हो आई कि नई नई नौकरी मिल रही है और ऐसे मौके पर भगवान को नमस्कार करना भी मैं भूल गया। तुरन्त अंदर जा कर भगवान के सामने झूक गया। भगवान से प्रार्थना की " हे भगवान, बड़ा कठिन समय है। तुम्हीं बचाओ। " और इसके बाद बरामदे में आ कर खड़ा हो गया। तो क्या आश्चर्य ! एक टाँगा हमारी घर की ओर आ रहा था। टाँगेवाला बूढ़ा आदमी था। उसके माथे पर चन्दन का टीका था। इस टाँगेवाले को देख कर मेरी हिम्मत बढ़ गई। मैंने उसे रोक कर पूछ लिया, " चाचाजी, स्टेशन छोड़ोगे ?" उस वृद्ध ने कहा, " बेटा, मेरा टाँगा तो उसीके लिए ही है। जल्दी करो नहीं तो गाड़ी चली जाएगी। " और उसने खुद ही कर मेरा सामान टाँगे पर चढ़ाया। आमतौर पर पूना के टाँगेवाले इतने नम्र नहीं होते। स्टेशन पर पहूँचने के बाद मैंने तीन रुपए उस के हाथ पर रख दिए। लेकिन उसने केवल एक रुपए का स्वीकार कर बाकी दो रुपए मुझे लौटा दिए और कहा, " बेटा अब गाड़ी का समय हो रहा है; जल्दी टिकट ले लो। " बड़ी दौड़-धूप कर टिकट लिया और गाड़ी में बैठ गया। यहाँ भी उस टाँगेवाले ने मेरा सामान रेलगाड़ी पर लगा दिया था और बैठने के लिए अच्छी जगह का प्रबंध किया था। मैं गाडी में बैठ गया और गाड़ी खुल गई। मैं सोचने लगा, "यह तिलकधारी बूढ़ा कौन था ? उसने मेरा सामान खुद क्यों उठाया ? मैं तीन रुपए दे रहा था फिर भी उसने एक ही रुपया क्यों लिया ? " ऐसी अनेकों घटनाओं के बाद मेरी यह श्रद्धा बन गई है कि पूर्णरूपेण भगवान की शरण में जाने पर वह अन्य व्यक्ति के मन में अपने भक्त की कठिनाइयों को दूर करने की प्रेरणा निर्माण करता है। मेरी मदद करने की बुद्धि जब तक उस टाँगेवाले के मन में वास करती थी तब तक वह मेरी नजरों में ईश्वर का अवतार ही था।

सन १९६६ इ. में मैं बैंक की नौकरी से रिटायर हो गया। शेयर के धन्धे की मुझे अच्छी मालुमात थी और दीर्घ अनुभव भी मेरे पीछे था। रिटायर होने पर भविष्यनिर्वाह निधि (प्राविडैंट फण्ड) तथा निवृत्ति-वेतन (ग्रैच्युइटी) की रकम मेरे पास थी। अतः शेयर के धन्धे में पैर जमा कर उसमें होनेवाले मुनाफे के सहारे उर्वरित जीवन बिताने की योजना मैंने बनाई। साल भर मेरा धन्धा ठीक चला। लेकिन १९६७ के अप्रैल महीने में एक मामले में मुझे बड़ी हानी उठानी पड़ी। कुल मिला कर पंधरह हजार रुपयोंका नुकसान हुआ। और वह भी केवल एक हप्ते में। मैं पूर्णरूपेण निष्कांचन ही नहीं तो भिखारी बन गया। कानी कौड़ी भी नहीं बची। नई नौकरी मिलना असंभव था। घर में शादी के लायक लड़की थी। चारों ओर अंधेरे का साम्राज्य था। कहीं से भी रोशनी आने की संभावना नहीं थी। मन ऐसा बेचैन कि भोजन के समय दो कौर निगलना मुष्किल हो गया। मन पूछता था : क्या करेगा ? कहाँ जाएगा ? मित्र तथा रिश्तेदारों की नजरों में मैं सटोड़िया या जुआरी था। हताश इतना हुआ कि अन्त में मन आत्महत्त्या के विचारों से भर गया। मन कोसने लगा, " देख, मामुली क्लर्क भी तुझसे अधिक सुखी है।" और क्लर्क बाबू ही क्यों, चपरासी के प्रति भी जलन पैदा हुई। फिर भी मैंने खुद को बचा लिया। इस संकट से बचने का एक ही रास्ता था—भगवान की शरण में जाना। मैं मेरे गुरुदेव स्वामी चैतन्यानंदजी से मिला। स्वामीजी ने धीरज बँधाया और कहा, " डरो मत, यह संकट-काल शीघ्र ही समाप्त होनेवाला है। जीवन की बहारें फिर आनेवाली हैं। " मेरी हिम्मत बढ़ गई। मैं लोगों से मिलने लगा। और क्या बताऊँ ? जो भी मेरी परिस्थितियों से ज्ञात हो जाता वह मेरी मदद करने के लिए आगे दौड़ आता। मित्रों तथा रिश्तेदारों की उदारता को बाढ़-सी आ गई। चारों ओर से लोग हाथ बटाने लगे ! ! मेरे छोटे भाई ने मेरी सहायता की। उन्होंने कहा, "आप चूप रहिए। मैं सब कुछ निभा लूँगा।" मेरे मकान मालिक ने कहा, "आप मेरे लिए पिताजी के समान हैं। जब तक आप संकट में से बाहर नहीं आएंगे, मैं किराए की पाई भी नहीं लूँगा। " और इतना ही नहीं तो उसने चावल और गेहूँ का एक एक बोरा भेज दिया। भगवान की दया की सीमा हो गई। सुखी जीवन के लिए और किस बात की आवश्यकता है ? नसीब के चक्कर ने मुझे दरिद्रता की खाई में फेंक दिया। लेकिन भगवान वहाँ भी उपस्थित थे। दरिद्रता की खाई में से भगवान ने मेरा उद्धार किया। इसके बाद एक बड़ी कंपनी में मुझे ऑडिटर का पद मिला। वेतन भी अच्छा था। लेकिन भगवान की लीला का चमत्कार तो आगे ही था। बीस साल की लंबी सेवा के बाद जिस बैंक से मैं रिटायर हो गया था, उसी बैंक ने मुझे मॅनेजर का पद ग्रहण करने के लिए वापिस बुला लिया ! बैंक के ज्येष्ठ पदाधिकारियों के मन की विशालता का अनुभव कर मेरा मन गद्‌गद् हो गया। मैंने मैनेजर के पद को ग्रहण कर लिया।

साल डेढ़ साल के पहले उस पद से मैं रिटायर हो चुका हूँ।

सन १९४९ इ. में मैंने Read Your Own Plan ("हस्तरेखादर्पण") नाम का एक ग्रंथ लिखा था। अब तक उसकी सभी प्रतियाँ बीक चुकी थीं और ग्रंथ अप्राप्य था। इस उपयुक्त ग्रंथ के नए संस्करण के बारे में मैं सोच रहा था। इतने में मेरे बंधुतुल्य मित्र श्री रघुवंशीजी का खत आया। इस ग्रंथ के अँग्रेजी के साथ साथ हिन्दी और मराठी संस्करण प्रसिद्ध करने की इच्छा उन्होंने व्यक्त की थी। और चन्द दिनों में अँग्रेजी-मराठी संस्करण छप गए! फिर एक बार मेरे मन में वह सन्त–वाणी गुंजने लगी, "जाको राखै साइयाँ, मार न सकै कोय!"

मेरी लड़की बी. ए. पास कर चुकी थी। अब उसकी शादी कराके मुझे अपनी जिम्मेदारी से मुक्त होना था। मेरी माली हालत को मैं पहचानता था। और लड़की भी कोई खास खुबसूरत नहीं थी। उसे ले कर मैं बंबई चला गया। मेरे एक सज्जन मित्र के द्वारा पाँच-छः परिवारों से बातचीत हो गई। और क्या बताऊँ? सभी जगहें लड़की पसन्द आई! आम तौर पर ऐसा नहीं होता। लड़की की अनुमति से एक अच्छे वर को पसन्द कर उस मंगल-विधि को संपन्न कर दिया। बहुत सारे खर्च की जिम्मेदारी मेरे अनुज ने ही उठाई। भगवान किस रूप में आ कर मिलेंगे कोई बता नहीं सकता।

हमेशा की तरह बैंक के कार्यालय में काम कर रहा था। ऊपर बिजली का पंखा घुम रहा था। एकाएक मन में आया कि वहाँ से उठ जाऊँ। और मैं दूसरे कमरे में चला गया। और इतने में "धड़ाम" ऐसी आवाज़ हो गई। सभी कर्मचारी और ग्राहक ड़र गए। देखा तो मेरे कमरे में छत से टाँगा हुआ पंखा नीचे गीर गया था। टेबुल पर रखी काँच के टुकड़े चारों ओर बिखरे पड़े थे। मेरी कुर्सी छोड़ने में मुझे मिनट भर देर होती तो...? लेकिन भगवान सब कुछ निभा लेते हैं।

मैं और मेरे श्वसूर एक ही बड़े मकान में अलग अलग खण्डों में (blocks) रहा करते थे। दशहरे का त्योहार था। श्वसूरजी ने हमें दावत दी थी। दस बजे के समय मेरा मन बेचैन होने लगा। मुझे लगा कि जो मिठाइयाँ बन रही हैं उन में कुछ दोष है। वे खाने लायक नहीं हैं। बैठक छोड़ कर मैं रसोईघर में चला गया। गुलाब जामून बन चुके थे और जलेबी बन रही थी। "इन में रंग कौनसा डाला गया है?" मेरी साली ने एक बोतल दिखाई जिस में पीले रंग का रसायन था। मैंने लेबुल पढ़ लिया। तो,वह स्याही बनाने के काम आनेवाला रसायन था। अलमारी में बोतलों की भीड़ में यह भी एक बोतल थी। और द्रव केशर की बोतल जैसी दिखाई देती थी। कितना बड़ा अनर्थ होनेवाला था। गुलाब जामून तथा जलेबियाँ पिछवाड़े में गाड़ दी गईं ताकि कोई जानवर उन्हें न खा सके। सभी

बर्तनों को ठीक साफ किया गया। बाज़ार से श्रीखंड मँगवाकर दशहरा और संकट टलने की खुशियाँ मनाई गईं। केवल भगवान की प्रेरणा से मैं बच गया।

ऐसी बीसों घटनाओं का वर्णन मैं कर सकूँगा जिन में भगवान की कृपा से मैं बच गया। लेकिन भगवान ने कुछ संकट के दिन भी दिखाएँ हैं। क्योंकि "अति सर्वत्र वर्जयेत्" इस न्याय से अति सुख के कारण भी आदमी ऊब जाता है, अतः थोड़ीसी अड़चनों से जिंदगी के मजे और भी बढ़ जाते हैं।

फिर भी सुख और दुःख दोनों का स्वागत मैं समभाव से करता हूँ। क्योंकि दोनों भगवान की लीलाएँ हैं ऐसा मान कर मैं शांत रहता हूँ। और इस मानसिक सन्तुलन के पीछे "जाको राखै साइयाँ, मार न सकै कोय।" यह भाव हमेशा रहता है।

□ □ □

. १७ .

अणोरणीयान्

हम कहा करते हैं " काल अनन्त है। " अथवा " अणू अत्यन्त सूक्ष्म है। " " अनन्त ", " अणू " आदि शब्दों को हम जानते हैं। क्योंकि इन शब्दों को हम सुनते हैं, पढ़ते हैं और लिखते हैं। अतः शब्दों से हमारा परिचय हैं। लेकिन अर्थ के बारे में क्या ? मनुष्य के मन को " अनन्तत्व " अथवा " अणूत्व " का साक्षात् ज्ञान होना असंभव है। " कालतत्त्व " का उदाहरण लीजिए। चार या पाँच हजार साल के समय-विस्तार के बारे में हम सोच सकते हैं। उसी प्रकार छोटे धूलीकण के समान सूक्ष्म वस्तु के बारे में भी हम सोच सकते हैं। " अनन्तत्व " को सीमित करने से अथवा सूक्ष्माति-सूक्ष्म वस्तु को अनुभव करने की क्षमता रखने से मनुष्य का मन त्रि-परिमाणात्मक (Three dimensional) नहीं रहेगा। वह चतुर्परिमाणात्मक (Four dimensional) बन जाएगा। यहीं मनुष्य कीं तूर्यावस्था (Super Conscious or Divine Mind) है। इस तरह का अति-मानवी मन स्थल-काल के बन्धनों को पार कर भूत-वर्तमान-भविष्य में प्रवेश कर सभी घटनाओं और वस्तुओं का यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर सकता है। हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों ने अद्‌भूत नाडी-ग्रंथों की रचना की है। इन नाडीग्रंथों में इन दिव्यदृष्टिवाले भविष्यवेत्ताओं ने चार-पाँच हजार साल के बाद पैदा होनेवाली प्रजा का समूचा भविष्य लिपीबद्ध किया है। इन ग्रंथों में व्यक्ति विशेष, उसका नाम, जन्मदाताओं के नाम, धन्दा, जीवन में आनेवाले संकट, सफलताएँ, सन्तान आदि आदि बातों का समूचा वर्णन उपलब्ध है। प्राचीन ऋषियों की इस अद्‌भुत शक्ति का आज भी अनुभव किया जा सकता है। भारत के भूतपूर्व प्रधान मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्रीजी के जन्म से लेकर ताश्कंद में उनका देहान्त होने तक की उनकी जीवनी नाडी-ग्रंथ में हजारों वर्ष पहले लिपीबद्ध हो चुकी थी। इसके पीछे क्या रहस्य है ? हमारे प्राचीन ऋषियों के पास ऐसी कौनसी अद्‌भुत शक्ति थी कि जिसके आधार पर वे सुदूर भविष्यत् में देख सकते थे ?

(१) स्थल-काल के संदर्भ में मनुष्य का मन विशाल या सूक्ष्म रूप धारण कर सकता है। नाडी-ग्रंथों के बारे में मैंने दीर्घकाल चिंतन किया है। ज्योतिष तथा हस्तसामुद्रिक शास्त्रों के जाने-माने ज्ञाताओं से चर्चा की है। लेकिन कोई भी मेरी शंका का समाधान नहीं कर पाया। उनकी दृष्टि में नाडी-ग्रंथों की रचना अंतर्मन की लीला थी। मेरी जिज्ञासा ज्यों के त्यों बनी रही। अन्त में मैं पाटणा (महाराष्ट्र) स्थित मेरे गुरू की शरणमें गया। मेरे इसी सद्‌गुरु की कृपा से मुझे त्राटक-विद्या का लाभ हुआ था। मेरे सवाल को सुन कर बावाजी ने मेरी ओर जरा अलग ढंग से देखा। एकाएक गंभीरता का भाव उनके चेहरे पर प्रकट हो गया। जब कभी सन्त-महात्मा अपने शिष्यों के सामने किसी रहस्य का उद्‌घाटन करते हैं तब वे बडे ही गंभीर हो जाते हैं। बावाजी ने कहा, "यह एक महान् सिद्धि है। समय का ज्ञान होने के लिए मनुष्य का मन चरम सीमा तक उत्क्रांत हो जाना चाहिए। काल संबंधी सम्यक् ज्ञान पाने के लिए हमारे प्राचीन ऋषियों ने बीसों बार जन्म लेकर तपस्या की होगी।" मैंने तुरन्त पूछ लिया, "गुरुदेव! इस साधना के बारे में आप मेरा मार्गदर्शन कीजिए।" गुरुदेव हँस पडे। उन्होंने कहा, "ईश्वर के पूजा-पाठ में समय बिताने के बजाय यह तुम क्या कर रहे हो?' देखो, तुम इसके पीछे न पडो।" मुझे टालने का यह बहाना था। मैंने भी जिद नहीं छोडी। मेरी लगन को पहचान कर मेरे सद्‌गुरु ने मन को स्थल-काल (Time & Space) के पार (beyond) ले जाने की अद्‌भुत साधना के रहस्य को बता दिया। मन को स्थल-कालातीत करने की साधना निम्न प्रकार है:

बच्चे रबड़ के गुब्बारे में हवा भरते हैं। इस गुब्बारे के विस्तार की सीमा निश्चित होती है। उसके आगे वह फट जाता है। जब मनुष्य का मन 'काल' संबंधी सोचने लगता है तब बहुत ही मामुली कालक्षेत्र (Span of time) के बारे में सोच सकता है। कालसंबंधी सोचने का अन्तिम बिंदु आ जाने के बाद मन वहीं रुक जाता है। आगे नहीं सोच सकता। या वह सबकुच भूल जाता है। अब काल के अनन्त विस्तार में मन को विस्तारित करने की साधना को सूनो: जब मौका मिलेगा, तब शांति से लेट जाओ। पास में अन्य कोई न हो। बाहर का शोरगुल तुम्हारे कानों तक न आने पाए। वैसा प्रबन्ध पहले से ही कर के रखो। अब आँखें मूँद लो। अपनी कल्पना-शक्ति को क्रियाशील बनाओ। कल्पना करो कि एक करोड मील लंबा, और उतना ही चौड़ा और गहरा गड्‌हा है। यह गड्‌हा खसखस या राजगिरे जैसे सूक्ष्म दानों से ऊपर तक भर चुका है। अब अपनी कल्पना की उड़ान को और ऊँचाई तक ले जाओ। कल्पना करो कि एक करोड़ वर्षों के बाद उस में से केवल एक कण को बाहर निकालना है। जब उस गड्‌हे में से सभी दाने निकाले जाएंगे तब कभी विश्व रचियता ब्रह्मा का एक क्षण पूर्ण होगा। अब कल्पना करो कि, ब्रह्मा की आयु एक करोड़ वर्ष है। अब

हिसाब लगाओ कि ब्रह्मा का जीवन-काल कितना विशाल है। इस साधना का प्रारंभ होने के पहले अनन्तत्व के बारे में तुम्हारे मन में अज्ञान के सिवाय अन्य कुछ भी नहीं था। लेकिन अब स्थिति पलट गई है। अर्थात् कुछ हदतक। अब तुम अनन्तत्व का अन्दाजा लगा सकते हो। यही है काल की अति दूर की सीमा तक मनुष्य के मन का विस्तार। धीरे धीरे काल-परिमाण के बारे में तुम्हारा मन पूर्ण जानकार हो जाएगा। इसका मतलव यह है कि मनुष्य-मन वहाँ तक फैलता जाएगा जहाँ तक "काल" फैलता जाता है।"

मेरे गुरु ने जो कुछ वताया उसे मन में दोहराता हुआ मैं पांच-छः महीने उस साधना का अभ्यास करता रहा। मेरा यह अनुभव रहा कि कुछ समय के बाद मन बिलकुल निर्विचार हो जाता है और ज्ञानेंद्रियों का कार्य रुक जाने के कारण विचार-शृंखला पूर्णरूपेण खंडित हो जाती है। इस प्रकार साधना का रास्ता अपना कर त्रि-काल का ज्ञान पाना जनसाधारण के लिए बहुत ही कठिन है। फिर भी इस साधना के अन्य फलों का उन्हें अवश्यमेव लाभ होगा। इस साधना के लिए खास कमरा, नियत समय आदि औपचारिक बातों की आवश्यकता नहीं है। एकांत और शोरगुल-रहित जगह ये दो आवश्यक चीजें हैं। मेरा खयाल है कि इस साधना का वीज जैन-ग्रंथों में होगा। जैन-ग्रंथों में अनाज के दाने की जगह सूक्ष्म वालों की कल्पना रखी गई है।

(२) द्रष्टा और दृश्य जब एक ही सतह पर होते हैं तब द्रष्टा को उस दृश्य का ज्ञान होता है। सूक्ष्म-वस्तु के दर्शन स्थूल-दृष्टि के वस की वात नहीं है। अगर द्रष्टा सूक्ष्म होगा तो उसे स्थूल-दृश्य का ज्ञान होना असंभव है। चिंटी सूक्ष्म-द्रष्टा है और हाथी स्थूल-दृश्य है। अतः हाथी के शरीर का जो अंश चिंटी के सामने होगा, उसी का ज्ञान उसे होगा। साधारण द्रष्टत्व को विकसित कर मनुष्य अपने मन (द्रष्टा) को अति सूक्ष्म दशा तक ले जा सकता है। इसके लिए निम्न साधना उपयुक्त है।

शांति से लेट जाइए। आँखें मूंद लीजिए। सोचिए कि, किसी प्राणी विशेष को एक सेंटिमिटर का अन्तर पार करने के लिए एक करोड़ वर्ष लगते हैं, तो एक सेकेंड में वह कितना अन्तर काटेगा? जैसे जैसे आपका मन इस साधना में आगे बढता रहेगा, वैसे वैसे उसे "अणुत्व" की स्थिति प्राप्त हो जाएगी। और केवल यही "अणु-मन" साधारण बुद्धि के बस में न होनेवाली सूक्ष्म बातों के बारे में सम्यक् ज्ञान हासिल करेगा।

मन को अति विशाल (Vast) बनानेकी साधना है धरती से करोड़ प्रकाश वर्ष (Light Years) की दूरी पर होनेवाले तारों के दूरत्व के बारे में सोचना।

इन दो विचार-धाराओं से मन प्रसन्न भी होता है और मनको अपने लघुत्व का भी ज्ञान होता है। समय के अनंतत्त्व को सोचने पर पता लग जाता है कि

मनुष्य का जीवन सागर में पैदा होनेवाली एक लहर है। क्षण भर दिखाई देती है और दूसरे क्षण उसी महासागर में मिल जाती है। और इस अनुभव के कारण गर्व, ईर्ष्या, वासना, आदि आदि भाव घटने लगते हैं।

मनुष्य जिस दायरे में जीवन व्यतीत करता है, वह विशाल सृष्टि और अनंत-काल की तुलना में, कितना क्षुद्र प्रतीत होता है !

मनुष्य के मन को उत्क्रान्त कर अतींद्रिय स्थिति तक ले जाने के लिए उपयुक्त साधनाएँ बता चुका हूँ। इनके अभ्यास से सफलता पाना मेरे पाठकों के लिए कठिन नहीं है। सर्वोच्च सफलता मिले न मिले, हर दिन के जीवन में सतानेवाली समस्याओं का सामना करने के लिए पाठक अवश्यमेव समर्थ बन जाएंगे। मेरे पूज्य गुरुदेव ने जो साधनाएँ बताई हैं वे मेरे पाठकों के लिए भी उतनी ही उपयक्त होंगी ऐसी मेरी श्रद्धा है।

◻ ◻ ◻

.१८.

ॐ पूर्णमिदम्

उपनिषद् भारतीय दर्शन का चरम विकास है।

ईशावास्योपनिषद् एक महत्त्वपूर्ण उपनिषद् है जिसका प्रारंभ 'ॐ पूर्णमिदम्' इस शांतिपाठ से हुआ है। 'ॐ पूर्णमिदम्' केवल दो शब्द हैं। लेकिन उनके पीछे कितना विशाल, कितना गहरा अर्थ छिपा हुआ है! यह विश्व पूर्ण है। उपनिषद् के त्रिकालदर्शी ऋषि हमें विश्वास दे रहे हैं। 'ॐ पूर्णमिदम्' संकेत कर रहा है कि अतीत की सृष्टि नष्ट नहीं हुई है; वर्तमान तो है ही और भविष्यत् में मनुष्य जिनके दर्शन करने जा रहा है वह सृष्टि भी आज मौजूद है। अभिप्राय यह है कि भूत, वर्तमान और भविष्य वास्तव में एक है।

इस सिद्धांत को ठीक समझ लेना चाहिए। कल्पना कीजिए : एक सूक्ष्म जीव है जो केवल सामने की वस्तु को देख सकता है। उस वस्तु के दाएँ, बाएँ, ऊपर, नीचे भी वस्तुएँ फैली हुई हैं। लेकिन वह उन्हें नहीं देख पाता। उनके बारे में वह पूर्णरूपेण अज्ञ है। इस प्राणी को हम एक परिमाणात्मक (Unidimensional) जीव कहेंगे। अब कल्पना कीजिए : उस प्राणी के सम्मुख एक चित्र रखा गया है। इस चित्र में से केवल एक ऐसे बिंदु का ज्ञान उस प्राणी को होगा, जो बिलकुल उसके सम्मुख होगा। उसकी दृष्टि में दाएँ–बाएँ तथा ऊपर–नीचे की सृष्टि न के बराबर है। लेकिन मनुष्य का मन त्रि–परिमाणात्मक (Three dimensional) होने के कारण मनुष्य को उस चित्र का सम्यक् अथवा यथार्थ ज्ञान हो जाता है। अब इस चित्र को उस एकपरिमाणीय प्राणी के सामने दाएँ से बाएँ सरकाएंगे। अब उसकी नजरों के सामने का दृश्य बदलता जाएगा। जो दृश्य उसकी दृष्टि से हट गया वह भूतकाल याने अतीत है; और जो नया दृश्य उसके सामने उपस्थित हो गया है वह भविष्यत् में से आ गया है। लेकिन मनुष्य की दृष्टि से देखा जाए तो वह दृश्य या वस्तु मनुष्य के लिए हमेशा के लिए दृश्यमान् है। अतः मनुष्य की दृष्टि में वह वस्तु शुद्ध वर्तमानकालीन घटना है। अब मनुष्य जिस घटना का अनु-

भव कर रहा है, उसके पीछे उसका त्रि-परिमाणात्मक (Three dimensional) मन है। वही मन वर्तमान, भूत, भविष्यत् का अनुभव करता है। त्रि-परिमाणात्मक मन वस्तु की लंबाई, चौड़ाई तथा गहराई (या ऊँचाई) को केवल दर्शनमात्र से जान सकता है। एक–परिमाणीय, द्वि–परिमाणीय और त्रि-परिमाणीय प्राणियों का अस्तित्व में होना संभवनीय बात है। उसी प्रकार चतुर्परिमाणात्मक (Four-dimensional) मनवाले प्राणियों का भी होना असंभव नहीं है। इतना ही नहीं तो त्रिपरिमाणीय मानवीय मन को किसी साधना विशेष के द्वारा चतुर्परिमाणीय स्थिति में ले जाना मुमकिन है। ऐसा मन किसी भी वस्तु की लंबाई, चौड़ाई, गहराई (या ऊँचाई) के साथ साथ उस वस्तु की भूत, भविष्य, वर्तमान की स्थिति को जान सकता है। त्रि-परिमाणात्मक मन जिस वस्तु का सीमित अनुभव करता है, उसी वस्तु को चतुर्परिमाणात्मक मन अलग ढंग से और सम्यक् या यथार्थ दृष्टि से देख पाता है।

कल्पना कीजिए : आप दिल्ली से कलकत्ते जा चुके हैं। अब ऐसी स्थिति में आपके मन को कलकत्ता का ज्ञान होगा। दिल्ली का नहीं। फिर भी हम ऐसा नहीं कह पाएंगे कि दिल्ली शहर का अस्तित्व ही मीट गया है अथवा कलकत्ते पहुँचने के पहले वह शहर था ही नहीं। अतः इसमें सत्य यही है कि मनुष्य की प्रज्ञा अपनी किरणें जहाँ तक भेज सकती हैं, वहाँ तक की सृष्टि का ज्ञान मनुष्य के मन को हो जाता है।

कल्पना कीजिए: अंतरिक्ष में एक तारा है जो पृथ्वीसे एक हज़ार प्रकाश-वर्ष (Light-years) की दूरी पर है। उसपर किसी तरह की मानवजाती का अस्तित्व है। अब बात ऐसी है कि हमारी इस सृष्टि में एक हजार वर्ष पहले घटी हुई घटनाओं का ज्ञान उस सुदूर तारे पर बसे हुए मनुष्य को आज होगा ! ऐसे हज़ारों हज़ार तारे हज़ारों हज़ार प्रकाश-वर्ष की दूरी पर हैं। लेकिन जो मन चतुर्परिमाणात्मक (Four dimensional) होगा, उसे सुदूर स्थानों पर तथा सुदूर भविष्यत् में घटनेवाली घटनाओं का ज्ञान आज ही होगा।

तिब्बत में ऐसे लामा हैं जो अपनी प्रज्ञा को अतीत में ले जाने की साधना का अभ्यास करते हैं। वे अपनी प्रज्ञा को बिते हुए कल (Yesterday), बिते हुए परसों (Day before yesterday) इस क्रम से पीछे पीछे दौड़ाते हैं। बरसों की साधना के बाद वे अतीत के दृश्यों तथा बचपन के इन दृश्यों को देखनेवाली अपनी देह के दर्शन कर लेते हैं। वर्तमानकाल का ज्ञान दिलानेवाली उनकी प्रज्ञा नष्ट हो कर वह भूतकाल में उड़ान भरने लगती है। इसी तरह भविष्यकालीन दृश्यों तथा उनको देखनेवाली भविष्यकालीन देह को इस साधना के जरिए अस्तित्व में लाना असंभव नहीं है।

यह भी हो सकता है कि हमारे प्राचीन ऋषियों ने प्राणायाम, ध्यान आदि साधनाओं के द्वारा अपने त्रि-परिमाणात्मक मानवी मन का उदात्तीकरण (Sublimation) कर उसे चतुर्परिमाणात्मक मन का स्वरूप दिया होगा, जिसके परिणाम-स्वरूप उन्हें इस सृष्टि का सम्यक् या यथार्थ ज्ञान हुआ होगा। इतना ही नहीं तो इस सृष्टि में आगे पैदा होनेवाले त्रि-परिमाणात्मक मनवाले मनुष्य-समाज का भी ज्ञान उन्हें हुआ होगा। भृगु-संहितादि नाडी-ग्रंथों की रचना के पीछे यही एक रहस्य हो सकता है।

हमें लगता है कि हमारा बचपन, बचपन की घटनाएँ तथा हमारे माता-पिता सबकुछ नष्ट हो चुके हैं। लेकिन सच बात तो यही है कि बचपन में मनुष्य जिनको अनुभव करता है उनमें से एक भी वस्तु, दृश्य तथा व्यक्ति नष्ट नहीं हुआ है। इतना ही नहीं तो जो भविष्यत् में होने जा रहा है वह भी आज है। न कुछ नष्ट हुआ है, न कुछ होने जा रहा है! सब कुछ केवल है। त्रि-परिमाणात्मक (Three dimensional) मन को चतुर्परिमाणात्मक (Fourth dimensional) मन में पारिवर्तित करने से मनुष्य इस समूची सृष्टि को पूर्णरूपेण देख सकता है। आज मनुष्य विश्व की हर वस्तु को कुछ हिस्सों में देख सकता है। क्योंकि मनुष्य का आज का मन त्रि-परिमाणों से मर्यादित है। पाँच सौ वर्षों के बाद की दिल्ली की स्थिति आज भी है। लेकिन मनुष्य की प्रज्ञा कालातीत (काल के परे) न होने के कारण मनुष्य का मन आज उसे नहीं देख पाता।

'पूर्णम् इदम्' अपने आप में एक जटिल विषय है। मेरी जितनी क्षमता रही, मैं उसे समझा देनें की कोशिश की है। मेरे बुद्धिमान् पाठक इस विषय में और भी आगे जाएंगे।

◻ ◻ ◻

.१९.

अज्ञात की झाँकी

पूर्व जन्म-वर्तमान जीवन–मृत्यु–पुनर्जन्म यह एक ऐसा चक्र है जिस की गति से मनुष्य मुक्त होना चाहता है। लेकिन उसके भाग में जो कुछ लिखा गया है उसे भोगना ही पडता है। पूर्व-जन्म में मनुष्य ने जो कुछ किया होगा उसका फल उसे वर्तमान जीवन में भोगना पड़ता है। इसे ही नसीव या प्रारब्ध या कर्म कहते हैं। इस हिसाव के पूर्ण होते ही, मनुष्य की आत्मा को यमदूत अपने कब्जे में लेते हैं। लौकिक अर्थ में वह मनुष्य मर जाता है। लेकिन उसके कर्म उसके साथ चले जाते हैं। जो जनमते हैं वे एक दिन मृत्य के आधीन हो जाते हैं, यह प्रकृति का जड़ नियम है। मृत्यु एक अटल घटना है। राजा–रंक, विद्वान्–अविद्वान्, पापी–पुण्यशील, स्त्री–पुरुष कोई भी मृत्यू के पंजे से नहीं छुटता। मृत्यु और मनुष्य की पुरानी पहचान है। ऐसा होते हुए भी मनुष्य सबसे अधिक मृत्यु से डरता है। शेक्सपियर ने कहा है, " Most strange it seems to me that men should fear, seeing that death, a necessary end will come when it will come. "

अ-लौकिक अथवा आध्यात्मिक जीवन के वारे में चर्चा करनेवाले ग्रंथों में मृत्यु की पहेली के वारे में अवश्यमेव चर्चा की जाती है। मृत्यु के समय मुक्ति की अभिलाषा करनेवाले निवृत्तिवादी व्यक्ति की क्या स्थिति हो जाती है ? और उसे पुनर्जन्म का लाभ क्यों और कैसे होता है आदि समस्याओं पर प्रकाश डाले बिना ऐसे ग्रंथ सार्थक नहीं होते। इस विषय में मेरे पाठकों का कुछ मार्गदर्शन करना मेरा कर्तव्य है।

अतींद्रिय स्थिति का ज्ञान मनुष्य की पंच ज्ञानेंद्रियों के द्वारा नहीं हो सकता। क्योंकि जिसे हम बुद्धि कहते हैं वह हमारी इंद्रियों का एक अंग है। अर्थात् इंद्रिय-रहित या इंद्रियों के पार की स्थिति का ज्ञान मनुष्य की सीमित बुद्धि के द्वारा होना असंभव है। इस समस्या को ठीक ढंग से समझ लेने के लिए उपनिषद् की शरण

में जाना चाहिए। उपनिषद् में ग्रथीत ज्ञान साधारण बुद्धि का फल नहीं है। उपनिषद् ज्ञान ऋषि-मुनियों के मन की तूर्यावस्था का सृजन है। तूर्यावस्था में इंद्रियका गम्य ज्ञान नष्ट हो कर केवल " मैं " यह शुद्ध ज्ञान रह जाता है। यही " आत्मबोध " है। सामान्य बुद्धिरहित " आत्मबोध " सर्वज्ञ होता है। " आत्मबोध " का वर्णन " सर्वधी साक्षिभूतम् " इन शब्दों में किया गया है। अतः जो " आत्मबोध" सामान्य इंद्रियजन्य बुद्धि के पार होता है वह मृत्यु के समय की तथा मृत्यु के बाद की स्थिति का सम्यक् ज्ञान करा देने में समर्थ है। तर्क यहाँ काम नहीं देता। तर्क की आधारशिला पर रचे हुए ग्रंथ अतींद्रिय स्थिति पर प्रकाश नहीं डाल सकते हैं। ऐसा प्रयत्न बिलकुल हास्यास्पद है।

मृत्यु के समय की तथा मृत्यु के बाद की स्थिति का वड़ा रोचक वर्णन बृहद् आरण्यकोपनिषद् में पाया जाता है। पथरीले रास्ते पर से गुजरनेवाले रथ के पहिये जिस प्रकार भद्दी आवाज़ करते हैं, उसी प्रकार मृत्युशय्या पर पडे आदमी की साँस की घरघराहट प्रतीत होती है। मृत्यु के आधीन होनेवाले उस व्यक्ति को चारों ओर से उसके मित्र तथा रिश्तेदार घेर लेते हैं। वे पूछते हैं, " तुम क्या चाहते हो ? तुम इसे नहीं पहचानते ? ये देखो, तुम्हारा बेटा तुम्हारे पैर दबा रहा है।" इत्यादि इत्यादि। लेकिन वह किसीको भी नहीं पहचान पाता। क्योंकि उसकी देह और ज्ञानेंद्रियों का संबंध कभी का टूटा हुआ होता है। पूर्वजन्म के कर्मों का हिसाब पूरा होते ही वह मनुष्य उस स्थिति को प्राप्त होता है जिसे हम मृत्यु कहते हैं। याज्ञवल्क्य महर्षिने कहा है, " न प्रेत्य संज्ञास्ति अलं अरे इति विज्ञमनाय ! "

मृत्यु के बाद ' मैं अमुक का लड़का, यही मेरी देह, यह मेरा परिवार, ये मेरे रिश्तेदार ' आदि लौकिक ज्ञान से जीव मुक्त हो जाता है। ऊपर के श्रुतिवाक्य का यही अर्थ है। इसी उपनिषद् में आगे भी बताया गया है कि जिस प्रकार कीड़ा नए पत्ते पर अपने आगे के पैरों को जमा लेने के बाद ही पीछे के पैरों के द्वारा पकडे हुए पत्ते को छोड देता है, उसी प्रकार जीवात्मा नई देह में प्रवेश करने के बाद तुरंत पुरानी देह का त्याग कर लेता है। अब पाठकों के मन में कुछ सन्देह पैदा हो सकता है। वे पूछेंगे, " अगर आत्मा तुरन्त अन्य देह में जगह पा लेती है, तो भूत अथवा पिशाच योनि कैसे पैदा होती है ? " लेकिन उसका उत्तर बहुत आसान है। वासना, कर्म और ज्ञान के समुच्चय का नाम है जीवदशा। इन तीनों का स्थान पंचतत्त्वों के अंतर्गत सूक्ष्म जल में होता है। अतः स्थूल देह को त्याग ने पर 'जीव' में जल का आधिक्य रहता है। ब्रह्मसूत्र में " आपः " यह बहुत संक्षिप्त सूत्र इसको स्पष्ट करता है। देहस्थिति का पुनर्निर्माण कर्म, वासना और ज्ञान इन तीनों के ऊपर निर्भर है। इन तीनों की आधारशिला पर आनेवाले जन्म के लिए जीवात्मा लिंग देह को धारण करता है। इसे ही जीवात्मा का देहान्तर कहते हैं। इसी तरह कर्म, वासना और ज्ञान रूप जीव सृष्टि में विचरता रहता है। वह

वातावरण में आ जाता है। बाद में वह मेघों में होनेवाले जल के किसी बिंदु में बस जाता है और वर्षाकाल में पर्जन्य के रूप में भूमि पर आ जाता है। जिस जल-बिंदु में जीव का अस्तित्व होता है, वह जलबिंदु अगर किसी खेत में या अन्य वनस्पति से भरी जमीन पर गिरे, तो वह जीव उस अनाज या फल विशेष में जगह पा लेता है। किसी बंजर भूमि पर या शहर की भूमि पर प्रकट होने पर उस बिंदु की फिर एक बार भाप बन जाती है और वह फिर सृष्टि में विचरने लगता है। "जीव" युक्त अनाज या फल को भक्षण करने से शरीर में वीर्य बनता है। पति-पत्नी समागम से गर्भधारणा होती है और "जीव" का पुनर्जन्म हो जाता है। मनुष्यदेह का फिर एक बार लाभ होना कितनी कठिन बात है इसका पता इससे लग जाता है। जीव के जलबिंदु में आश्रय लेने से काम नहीं चलता। उस जलबिंदु का अवतरण उपजाऊ जमीन पर होना नितान्त आवश्यक है। फिर फसल को धोका नहीं पहुँचना चाहिए। सूखा या अतिवर्षा या टिड्डीदल से फिसल की रक्षा हो चाहिए। फिर जानवरों से फसल की रक्षा करना जरूरी है। नहीं तो वह "जीव" जानवर का जन्म पाएगा। ऐसी सैकडों कठिनाइयों को पार करने पर मनुष्य देह फिर एक बार मिल जाती है।

स्वर्ग-नरकादि कल्पनाओं पर भी उपनिषदों में काफी प्रकाश डाला गया है। स्थूल-देह का त्याग करने पर पुनर्देह-प्राप्ति के लिए जीवात्मा सूक्ष्म लिंगदेह के रूप में वातावरण में विचारता रहता है। इस दशा में जीवात्मा अपने कर्मों, अपनी वासनाओं तथा अपने ज्ञान के अनुसार सपने देखा करता है। पूर्व-जन्म के शुद्ध कर्मों तथा शुद्ध वासनाओं के अनुसार उसके सपनं सुखद होने की संभावना रहती है और कुकर्मों तथा बुरी वासनाओं के अनुसार जीवात्मा दुःखद सपनों में खो जाता है। ये दो स्थितियाँ जीवात्मा के लिए स्वर्ग और नर्क की स्थितियाँ हैं। स्वर्ग और नर्क नामक कोई स्थान हैं और वहाँ पूर्वकर्मों के अनुसार स्वर्गसुख या नारकीय यातनाओं को भोगना पडता है यह एक कल्पनामात्र है। वह वस्तुस्थिति नहीं है।

महाराष्ट्र के महान् संत श्री ज्ञानेश्वरजी ने मृत्यु की घडी का बड़ा रोचक वर्णन किया है जिसके पढ़ने से मन को शांति तथा दिलासा का लाभ होता है। जब मृत्यु समीप आ जाती है तब मनुष्य की यातनाओं को टालने के लिए ईश्वर मनुष्य के मन पर विस्मृति का परदा डाल देता है। अतः मनुष्यमन मृत्यु की यातनायों से बच जाता है। मृत्यु के समय मनुष्य तड़फड़ाता हुआ दिखाई देता है। फिर भी यातनाएँ उसके मन को स्पर्श नहीं कर सकती। भगवान कहते हैं, "जीवन भर मुझे भूल कर जो आसक्ति के महासागर में डुबकियाँ लेते रहे ऐसे अभक्तों को भी मैं मृत्यु-समय की यातनाओं से बचा लेता हूँ। जो मेरे भक्त है, जीवन भर जो मेरा स्मरण करते रहे, मृत्यु के समय उनक मन को संभल

लेना मेरा काम है। ऐसे सद्-भक्तों का मन ईश्वरमय हो जाने के कारण उनकी मृत्यु के पश्चात् उनका मन मुझसे एकरूपता पाता है और मैं भी उन्हें जन्म-मृत्यु के चक्र से पूर्णरूपेण मुक्त करता हूँ। " अतः मृत्यु के समय मन में जिन विचारों का प्राधान्य होगा, उनके अनुसार नया जन्म मिल जाता है। एक पौराणिक कथा के अनुसार भरत को पुनर्जन्म में हिरन बनना पड़ा; क्योंकि मृत्यु की घडी में वह हिरन के संबंध में सोच रहा था। अब प्रश्न निर्माण होता है कि भगवद्भक्त अपनी मृत्यु के समय भी भगवान के सिवाय अन्य किसी विचार को मन में स्थान नहीं देंगे; लेकिन मृत्यु-शय्या पर पड़े किसी साधारण आदमी के मन में राजा बनने की इच्छा पैदा हो गई हो तो क्या वह अगले जनम में सचमुच राजा बनेगा ? इसका उत्तर यह हैं कि मृत्यु के समय मुक्ति की इच्छा करनेवाले मनुष्य के मन में ऐसी लौकिक बातों के बारे में कोई विचार पैदा नहीं होंगे। जब तक देह-बोध की स्थिति में मनुष्य होता है तब तक परिवार, घर-बार, अपना-पराया आदि के बारे में उसका मन सोचता रहता है । और भी एक बात है। जिसके विचार जीवन भर में अत्यन्त निम्न कोटि के रहे हैं, वह मृत्यु के समय भी राजा होनें की बात नहीं सोचेगा।

अब पिशाच-सृष्टि के बारे में (जो इंद्रियों के परे है।) सोचेंगे । वेदांत का सिद्धांत है कि जो वस्तु अस्तित्व में नहीं है, उसके बारे में मानवी मन का सोच-विचार करना असंभव है। कल्पवृक्ष, पारस आदि अद्भुत वस्तुओं के बारे में हम सोचते हैं; उनके बारे में चर्चा करते हैं। मतलब है कि हम मानसिक स्तर पर उनका अनुभव करते हैं। अतः कभी न कभी किसी न किसी व्यक्ति ने प्रत्यक्ष रूप में इन अद्भुत वस्तुओं का अनुभव लिया होगा। इसी तर्क के आधार पर हम कह सकते हैं कि च्यूँकि भूत, पिशाच आदि कल्पनाएँ और उनके नाम हम सुनते हैं, इसीलिए उनकी सृष्टि भी सत्य घटना हो सकती है।

मृत्यु के समय कोई तीव्र इच्छा अतृप्त रहने पर उस मनुष्य की आत्मा इस संसार में अटकी रहती है और भूत या पिशाच बन जाती है। आम तौर पर यह श्रद्धा दुनिया भर में प्रचलित है। अमीर लेकिन कंजुष आदमी मृत्यु की घडी नजदीक आने पर भी धनलालसा से अपने मन को मुक्त नहीं करता। ऐसे आदमी की मृत्यु हो जाने पर उसकी आत्मा उसकी धनराशी के पास पिशाच के रूप में पहरा देती है। अभी अभी शादीशुदा औरत का देहांत हो जाता हैं। घर-गृहस्थी संबंधी उसके सारे सपने अधुरे रह जाते हैं। उसका पति दूसरी शादी कर लेता है। लेकिन उसकी पहली पत्नी की आत्मा अपनी अतृप्त इच्छाओं के कारण पिशाच रूप धारण कर लेती है और अपनी सौत को परेशान करती है। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मृत्यु के समय जो इच्छा तीव्र होती है, उसीके अनुसार आत्मा की गति होती है। अतः ऐसी परिस्थितियों में जिस मनुष्य की इच्छाएँ अपूर्ण रह जाती हैं वह

शरीर को धारण करने में असफल रह जाता है और केवल लिंग देह के रूप में संसार में विचरने लगता है। इसे ही पिशाच कहते हैं। पिशाच संबंधी लोगों की मान्यता है कि उसकी अपूर्ण इच्छा की पूर्ति होते ही संसार में अटकी हुई आत्मा को मुक्ति मिल जाती है। अतृप्त वासनाओं से युक्त लिंग देह किसी अन्व व्यक्ति के जाग्रत मन को नष्ट कर उसकी देह तथा उसके अंतर्मन पर कावू कर लेती हैं। जिसके शरीर में पिशाच प्रवेश कर उस पर कावू कर लेता है उसे भूतग्रस्त कहते हैं। ऐसी स्थिति में देह उस व्यक्ति विशेष की होती है और मन अतृप्त भटकती हुई आत्मा का होता है। इसे ही पिशाच बाधा या उस व्यक्ति पर पिशाच का साया होना कहते हैं। जिसके शरीर तथा अन्तर्मन पर किसी पिशाच ने कावू कर रखा हो, वह आदमी उसका खुदका नाम पूछने पर उस पिशाच का नाम कह देता है। क्योंकि उस समय जो कोई वोलनेवाला होता है वह लौकिक आदमी नहीं होता; पिशाच होता है। एक वडे कालिज के प्रिन्सिपल मेरे मित्रों में से रहे हैं संयोगवश उनकी पत्नी के शरीर में किसी पिशाच ने प्रवेश कर लिया। भूत-पिशाच बाधा पर इलाज़ करना मेरा पेशा नहीं है। उस कला का मैं ज्ञाता भी नहीं हूँ। लेकिन मेरे कुछ अनुभवों के बारे में प्रिन्सिपल महोदय जानते थे। अतः उन्होंने मुझे बुला लिया। जब मैं वहाँ पहुँचा तव देखा कि मेरे मित्र की पत्नी एक पीढे पर बैठ कुछ विचित्र हावभाव कर रही हैं। उसे आँचल तक का खयाल नहीं है। मैंने पहचान लिया कि उसका अन्तर्मन उस पिशाच के पूर्ण आधीन हो चुका है। मैंने पूछा, "तुम कौन हो?" मेरे मित्र की पत्नी के मुँह से जवाब आया, "मेरा नाम गऊबाई है।" मैंने फिर सवाल किया, "तुम यहाँ क्यों आई हो?" फिर जवाब आया, "मुझे घी-शक्कर के चावल खाने की इच्छा हुई है।" मैंने कहा, "कवूल करो कि ये चीजें मिलने पर तुम यहाँ नहीं आओगी।" उससे हाँ जवाब मिलने पर, उसी दिन रात को एक पत्तल पर घी-शक्कर, चावल, अचार आदि चीजों को रखकर उन्हें दूर एक पेड़ के नीचे छोड़ा गया। इस विधि के वाद मेरे मित्र की पत्नी को इसप्रकार की कोई तकलीफ नहीं हुई। इस सूत्र को पकड़ कर मैंने पूछताछ शुरू की तब पता चला कि मेरे प्रिन्सिपल् मित्र के घर गऊवाई नामक एक गरीब नौकरानी काम करती थी। प्रसूत होने के वाद प्रिन्सिपल् साहब की पत्नी घी-शक्कर आदि का आहार करती थी। वेचारी गरीब नौकरानी इसे देखा करती थी। लेकिन यह महँगा खाना उसे नसीव नहीं था। उसकी मृत्यु के वाद इस अपूर्ण इच्छा के कारण उसकी आत्मा इस संसार में पिशाच के रूप में अटकी रही। मौका पाते ही उसने अपनी पुरानी मालकीन को पकड़ लिया।

केवल भूतप्रेत या पिशाच संबंधी विचारों तथा सूचनाओं से भी पिशाच दर्शन होते हैं। गपशप करते समय हम कहते हैं कि किसी वृक्ष विशेष या कुएँ के पास पिशाचों का निवास है जो रात के समय वहाँ नाचते हुए दिखाई देते हैं। यह

बात किसी भीरू व्यक्ति के बहिर्मन को पार कर उसके अन्तर्मन की गहराई तक जा पहुँचती है। और संयोगवश जब कभी वह आदमी उस पेड या कुएँ के पास रात के समय जाता है तब, अन्तर्मन में पैठा वह पिशाच संबंधी विचार अत्यंत तीव्र गति से बहिर्मन की सतह पर प्रकट होता है और उसकी दृष्टि के सामने भूत नाचते हुए दिखाई देते हैं। इसे अंग्रेजी में Hallucination कहते हैं। हिंदी में उसे भ्रम, या मायाजाल या इन्द्रजाल भी कह सकते हैं। वास्तव में वहाँ भूतप्रेत नहीं होते, केवल मनोनिर्मित दृश्य दिखाई देता है।

कभी कभी हम सुनते हैं अथवा अखबारों में पढ़ते हैं कि किसी व्यक्ति के घर में चीजें चारोंओर फेंक दी जाती हैं, वर्तन हवा में तैरने लगते हैं, खाने में गंदी चीजें आ गिरती हैं, घर के छप्पर पर कहीं से पत्थर आ गिरते हैं। आदि। हमारे देश में ही ऐसी बातें होती हैं ऐसी बात नहीं, पश्चिमी देशों में भी जादू-टोने की ऐसी बातें हुआ करती हैं। ये घटनाएँ तर्क के परे हैं। इनके पीछे होनेवाला रहस्य प्रकट करने के लिए (Society for Psychical Research) नाम की जानी-मानी संस्था ने बहुत कुछ शोध-कार्य किया है। उनके शोधकार्य का सार यह है : हर चीज के दो अंग होते हैं।–एक स्थूल (या मोटा) और दूसरा सूक्ष्म (Subtle)। वस्तु के स्थूल रूप के दर्शन स्थूल दृष्टि कर सकती है। जिस प्रकार वस्तु के दो अंग होते हैं, उसी प्रकार मानवी देह, तथा लिंग देह के भी दो अंग होते हैं–सूक्ष्म और स्थूल। सूक्ष्मांग वजन-रहित होता है। लिंग-देह का मनुष्य-देह से होनेवाला संबंध मृत्यु के बाद खंडित हो जाता है। लिंगदेह पाँचों ज्ञानेंद्रियों के साथ सूक्ष्मदशा में होती है। और ऐसी स्थिति में उस सूक्ष्म लिंग-देह का संबंध वस्तुओं के सूक्ष्मांग से आ जाता है। ऐसा होने पर सूक्ष्मलिंग देह उस जड़ वस्तु के अन्तर्गत होनेवाले सूक्ष्मांग को बडी आसानी से सचेत (या जाग्रत, या गतिशील) बना देती है। क्योंकि वस्तु के जड़ होने पर भी उसका सूक्ष्मांग वजन-रहित होता है। वस्तु के सूक्ष्मांग के हिलने पर वह समूची वस्तु हिलने लगती है। इस तरह भूत-सृष्टि के पिशाच कभी कभी दिखाई देते हैं। जिन अद्‌भुत बातों का उल्लेख मैंने ऊपर किया है, उनके पीछे क्या कारण हो सकता है उसे देखेंगे। भानामती या जादूटोने के कारण खाने की चीजों में मानवी विष्ठा तक आ गिरने की बातें सुनने को मिलती हैं। स्थूल और सूक्ष्मांग के तत्त्व को समझने पर इसका भी रहस्य खुल जाएगा। राख, विष्ठा आदि वस्तुओं के भी स्थूल और सूक्ष्स अंग होते हैं। पिशाचयोनि में विचरनेवाली लिंगदेह इनके सूक्ष्मांग को गतिशील कर सकती है। और सूक्ष्मांग को गतिशील करने पर उस वस्तु का स्थूल अंग भी गतीशील हो जाता है। और ऐसी वस्तुएँ भोजन की थाली में आ गिरती हैं और लोग त्राहि! त्राहि! पुकारने लगते हैं। कुछ योगी हवा में से फूल, फल, मिठाइयाँ, राख, अंगूठियाँ आदि वस्तुओं को निकालने की अद्‌भुत बातें कर के बताते हैं। इसका

वैज्ञानिक स्पष्टीकरण ऊपर बताए तरीके से किया जा सकता है। इस अद्‌भूत चमत्कार का अँग्रेजी नाम Materialization है। हिन्दी में उसे प्रत्यक्षीकृत करना कहेंगे। स्वामी विवेकानंद ऐसी घटनाओं को अपनी आँखों से देख चुके थे। उन्होंने ऐसी घटनाओं का उल्लेख अपने ग्रंथों में किया है। ऐसी अद्‌भूत बातों में विश्वास करने का कारण यह रहा है कि मैंने मी धूलिया में इस तरह का एक प्रयोग देखा है। इस सिद्धि को हासील करने के लिए बहिर्मन का पूर्ण विलय तथा योगी का सूक्ष्म देह से संबंध प्रस्थापित हो जाना चाहिए। हवा में से निकलनेवाली चीजें नए सिरे से पैदा नहीं होती। उन्हें कोई भी पैदा नहीं करता। वे चीजें एक स्थान से दूसरे स्थान पर चली जाती है। उन चीजों का सूक्ष्मांग ईश्वर के समान होने के कारण उनके आने-जाने में दीवारों जैसी वस्तुएँ रुकावट नहीं डाल सकती। इसके बारे में अधिक जानकारी पाने की इच्छा करनेवाले मेरे जिज्ञासु पाठक C. W. Leadbeater के 'Life Beyond Death' नामक ग्रंथ को पढ़ें। लेकिन इन अद्‌भूत बातों के बारे में जो मीमांसा दी गई है उसकी आधारशिला तर्कबुद्धि होने के कारण कुछ पाठक उसके बारे में सन्देह ज़रूर प्रकट कर सकते हैं। लेकिन इसके संबंध में और कोई वैज्ञानिक मीमांसा उपलब्ध न होने के कारण इसे ही स्वीकारना पड़ता है।

पिशाचों की वासनामय लिंग-देह किसी व्यक्ति की जड़ देह में प्रवेश कर, उसके मन तथा शरीर के द्वारा अपनी अपूरी इच्छाओं को तृप्त करती होंगी। यह असंभव नहीं है। कामवासना से युक्त आत्मा, अथवा मीठे पक्वानों का स्वाद लेने की इच्छा अतृप्त हो, तो ऐसी आत्मा मनुष्य के शरीर में प्रवेश कर, उसके जागृत मन को नष्ट कर, उस शरीर पर काबू पाकर, अपनी अतृप्त इच्छाओं की पूर्ति कर देती है। जिसे पिशाचबाधा हो गई है ऐसा व्यक्ति आवश्यकता से अधिक भोजन करता हुआ दिखाई देता है। जिस व्यक्ति का शरीर पिशाच के काबू में चला गया है, उसके साथ संभोग लेने पर दूसरे व्यक्ति को पता चलता है की वह अपने पति (या अपनी पत्नी) से मिथून करने के बजाय किसी पराये व्यक्ति से मिथून कर रहा हो। क्योंकि सामनेवाली व्यक्ति के शरीर में किसी अन्य व्यक्ति की आत्मा वास करती है।

अब एक ऐसी अद्‌भूत बात को बता रहा हूँ जिसकी ओर बहुत कम लोगों का ध्यान आकर्षित होता है। एकाद स्थान अथवा व्यक्ति को देखने से हम ऐसा महसूस करने लगते हैं कि इसे हम पहले कभी न कभी देख चुके हैं। इसका कारण यहाँ है कि सृष्टि के अंतर्गत सभी घटनाओं और वस्तुओं की विचाराकृतियाँ (Thought forms) होती हैं। ये विचाराकृतियाँ वातावरण में संचार करती रहती हैं। कभी कभी ये विचाराकृतियाँ मनुष्य के मन में प्रवेश कर लेती हैं और मनुष्य मन उन स्थानों अथवा घटनाओं को अनुभव कर लेता है। और जब मनुष्य उस घटना तथा

स्थान का वास्तव में दर्शन करने लगता है तब उसे महसूस होने लगता है उस स्थान अथवा घटना को वह पहले भी कभी देख चुका है। इस अद्‌भूत चमत्कार पर अधिक प्रकाश ड़ालनेवाली लवण राजा और एक सज्जन विष्णुभक्त ब्राह्मण की कथा ' योगवासिष्ठ ' में उपलब्ध है। मेरे जिज्ञासु पाठक उसे पढें। किसी जादुगर लवण राजा को संमोहित कर देता है। उसे भूख लगती है। शादी करने की शर्त पर एक चांडालकन्या उसे भोजन देती है। राजा चांडाल बस्ती में आ जाता है। बाद में अकाल पड़ जाता है और उसमें राजा की चांडाल पत्नी तथा बेटे का देहान्त हो जाता है। फिर वह राजा किसी राजधानी में आ जाता है। जब हाथी उसे देखता है तब उसे माला पहना देता है। लोग उसे राजा बना देते हैं। फिर अग्निप्रवेश करने से वह सावधान हो जाता है और अपनी मूल स्थिति को प्राप्त होता है। अनुसंधान करने पर पता चल जाता है कि ऐसी घटनाएँ किसी दूर देश में घट चुकी हैं। इतना ही नहीं तो वह राजा चांडाल बस्ती आदि स्थानों को खुद अपनी आँखों से देख आता है। दृश्य सृष्टी की अपेक्षा अदृष्ट और बुद्धि के पर जो सृष्टी है वह अधिक अद्‌भूत है।

कुछ पिछड़ी जातियों के जादुगर मनुष्य को कुत्ता या बिल्ली बना देते हैं, ऐसा आम तौर पर माना जाता है। लेकिन किसी भी महान सिद्धि को प्राप्त करने से भी यह असंभव है। क्योंकि सृष्टि की हर वस्तु ईश्वरी संकल्प है। अतः उसमें परिवर्तन करने की क्षमता किसी भी मनुष्य में नहीं है। पानी का घी बना देना, पत्थरों के फूल बना देना आदि बातें केवल अफवाएँ हैं। अपने तथाकथित गुरु का महत्त्व बढ़ा कर अज्ञ, अपढ जनता को फँसाने की वह एक युक्ति मात्र है। अगर ऐसी बातें कहीं दिखाई पड़ी हों तो उन्हें हाथचालाकी या मोहिनी-विद्या का खेल समझना चाहिए।

मनुष्य को कुत्ता बनाने का मतलब यही हो सकता है कि किसी व्यक्ति को संमोहित कर उसे " तुम कुत्ते हो। " या " तुम बिल्ली हो। " इस प्रकार सूचना देना। कुछ समय मोहनिद्रा के प्रभाव में वह उस जानवर जैसा बर्ताव करता है। लेकिन उस सूचना का प्रभाव वापिस लेने पर वह पूर्वस्थिति में आ जाता है।

मृत्यु के बाद ज्ञानी व्यक्ति की लिंग-देह की क्या स्थिति होती है, इसके बारे में कुछ विचारों को व्यक्त कर इस अध्याय को समाप्त करूँगा। अज्ञानी व्यक्ति को संचित, प्रारब्ध और भावी ऐसे तीन कर्मों का बोझ ढोना पडता है। संचित कर्म का अर्थ है आज तक उसने जो कुछ किया है उन कर्मों का फल; प्रारब्ध कर्म है संचित कर्म का एक अंश जिसे इस जन्म में कर्मफल के रूप में भोगना पड़ता है; और भावी कर्म का अर्थ है अज्ञानवश अहंकार के कारण किए कर्म। ये कर्म आगे चल कर संचित कर्म में इकट्ठे हो जाते है। ज्ञानी व्यक्ति को ज्ञान प्राप्त होते हि उसकी जीवदशा समाप्त हो जाती है और इन तीनों फलों के

भोग से वह मुक्त हो जाता है। ज्ञान के कारण भोग और भोक्ता के अभाव से संचित कर्म निष्फल हो जाता है। ज्ञानी व्यक्ति प्रारब्ध-कर्म को भोग कर उसको नष्ट कर देता है और उसमें जीवदशा का अभाव होने के कारण, अहंकार का अभाव रहता है और इसके परिणामस्वरूप कोई भी कर्म उसे बन्धन में नहीं डाल सकता। एक बार एक जिज्ञासु ने भगवान श्री रमण महर्षी से प्रश्न पूछा कि, "ज्ञानी व्यक्ति को प्रारब्ध-कर्म कहाँ तक भोगना अनिवार्य है ?" महाज्ञानी महर्षि ने एक बोधकथा के सहारे इसे स्पष्ट किया। उन्होंने कहा, "जो तीन स्त्रियों का पति है, उसकी मृत्यु होने पर, वे तीनों स्त्रियाँ विधवा हो जाती हैं। उसी प्रकार आत्मज्ञान की प्राप्ति के बाद जीवदशा परमात्मस्वरूप के साथ एकरूप हो जाने से जीव नामक वस्तु का अलग अस्तित्व नष्ट हो जाता है। फिर संचित, प्रारब्ध और क्रियमाण कर्म का अनुभव कौन करेगा ? प्रारब्ध के अनुसार सुखदुःखो का अनुभव करनेवाले ज्ञानी व्यक्ति को अन्य लोग देखते हैं। लेकिन उस ज्ञानी में जीवदशा (Ego) का अभाव होने के कारण कर्मभोग के बारे में वह कुछ नहीं जानता। वह अलिप्त होता है।"

प्रारब्ध कर्मों को अनुभव कर समाप्त करने-पर और भावी कर्मों में अहंकार का अभाव होने पर ज्ञानी व्यक्ति का उससे कोई भी संबंध प्रस्थापित नहीं होता। अब ऐसी दशा में संचित कर्मों का क्या स्थान होता है इसके बारे में ब्रह्मसूत्र में बड़ी रोचक बात बताई गई है।

ब्रह्मसूत्र कहता है कि देहत्याग के बाद ज्ञानी पुरुष के लिंगदेह में वास करनेवाले सूक्ष्म पंचतत्त्व सृष्टि में होनेवाले पंचतत्त्वों में विलीन हो जाते हैं। सूक्ष्म पंचतत्त्व, कर्म, वासना और विशेप ज्ञान के अभाव में मनुष्यो के लिंग-देह का नाश हो जाता है और वह शुद्ध आत्मज्ञानस्वरूप बन जाता है। उसके संचित कर्मो में से शुभकर्मों के फल उस ज्ञानी व्यक्ति की स्तुति गानेवाले व्यक्ती को मिलते हैं और अपवित्र कर्मों के फलों को स्वामी उसका निंदक बन जाता है। अतः ज्ञानी का आदर करना हमारा परम कर्तव्य है। इसीलिए मेरी सलाह है कि ज्ञानी की स्तुति भले न की जाय, लेकिन उसकी निंदा करने से अपनी वाणी को बचाना चाहिए। प्रारब्ध कर्म के अनुसार ज्ञानी अब किसी अवस्था में होगा इसे जानना साधारण बुद्धि के लोगों के लिए कठिन है। एकाद ज्ञानी पुरुष पिचाचवत् बर्ताव करेगा तो दूसरा ज्ञानी महात्मा परिवार में मग्न रहेगा। एकाद ज्ञानी अद्भुत चमत्कारों को कर दिखाएगा। तो दूसरा कोई ज्ञानी व्यक्ति ऐसी अद्भुत बातों से दूर रहेगा। भगवान श्री रमण महर्षि ने एक भी अदभूत चमत्कार करके नहीं बताया। उस प्रकार मेरे सद्गुरु भगवान श्री चैतन्यानंद स्वामीजी भी ऐसी बातों से दूर रहे। लेकिन उनके ज्ञान तथा अधिकार के प्रति मेरा मन श्रद्धा से युक्त होने के कारण आज भी मैं अत्यंत सुखी हूँ।

□ □ □

.२०.

सप्तचक्र

मनुष्य देह में इडा, पिंगला और सुषुम्ना नाम की तीन नाडियों का अस्तित्व है। इनमें से सर्वसाधारण तौर पर इडा और पिंगला ये दो नाडियाँ चलितावस्था में (Active क्रियाशील) होती हैं। मनुष्य की सभी देह-विधियाँ इनके द्वारा होती हैं। तीसरी नाडी सुषुम्ना सामान्य तौर पर सुप्तावस्था में (Dorment) होती है। सुषुम्ना नाडी के अन्त में गुदास्थि के पास कुंडलिनी (Serpent power) नामक एक वर्तुलाकार अलौकिक शक्ति का अधोमुखावस्था में निवास होता है। उसके साढ़े तीन फेरे होते हैं। इस सुषुम्ना नाडी में सात चक्रों का निवास होता है। इन सप्तचक्रों के नाम हैं: मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा और सहस्त्रार। इन सप्तचक्रों में से पहले तीन चक्र मूलाधार, स्वाधिष्ठान, और मणिपुर हमेशा चलित अवस्था में होते हैं। कामवासना, जिव्हालौल्य और कीर्ति की अभिलाषा इन तीन चक्रों की चलितावस्था का गुण है। जनसाधारण में इन तीन इच्छाओं का अस्तित्व स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। कुछ यौगिक कृतियों से अथवा ईश्वरी कृपा से इन तीन चक्रों का कार्य रुक जाता है और अनाहत चक्र क्रियाशील बन जाता है। अनाहत के क्रियाशील होने पर कामवासना, जिव्हालौल्य और लौकिक कीर्ति की अभिलाषा ये तीन वासनाएँ समूल नष्ट हो जाती हैं और "यह विश्व क्या है? मैं कोन हूँ? इस संसार के गोरखधंधे में मेरा कार्य क्या है? ईश्वर है या नहीं?" आदि आदि विचार मन में पैदा होते हैं। सही परमार्थ मार्ग (पारलौकिक, आध्यात्मिक मार्ग) यहाँ से शुरू हो जाता है। लेकिन यह प्रारंभिक दशा होने के कारण साधक का फिसल जाना असंभव नहीं है। वह कुछ प्रलोभनों के पीछे पड़ जाने का डर रहता है। कभी कभी साधक द्वितीय या तृतीय श्रेणी की सिद्धियों के पीछे पड़ जाता है। कभी कभी वह लौकिक प्रतिष्ठा, आदरसत्कार के मायाजाल में खुद को खो बैठता है। तो कभी कभी वह स्त्री के मोहपाश में फँस जाता।

□ □ □

अनाहत चक्र में जब साधक की प्रज्ञा बहुत दीर्घ काल तक स्थिर होने लग जाती है तब वह योगी विशुद्ध चक्र की ओर खींचा जाता है। जब योगी विशुद्ध चक्र का निवासी बनता है तब परिवार से उसका मन विरक्त हो जाता है। किसी भी लौकिक वस्तु के प्रति उसके मन में कोई भी मोह या आकर्षण पैदा नहीं होता और ईश्वर के सिवाय अन्य किसी बात में उसका मन दिलचस्पी नहीं लेता। विशुद्ध चक्र में स्थिर होने के बाद साधक का पतन नहीं हो सकता। विशुद्ध चक्र की ऊँची दशा में (परिपक्व स्थिति में) साधक उसके आगे होनेवाले आज्ञाचक्र की ओर बढ़ने के लिए उत्सुक हो जाता है। जब साधक की प्रज्ञा आज्ञाचक्र में स्थिर हो जाती है तब साधक को ईश्वर और केवल ईश्वर के ही दर्शन होते हैं। फिर भी जीव और ईश्वर इनके बीच माया का एक परदा होता है। लेकिन ऐसी स्थिति में योगी ईश्वर के दर्शन कर सकता है। ईश्वर के जिस रूप का साधक ध्यान करता है, उसी के दर्शन इस चक्र में होते हैं। इसके बाद योगी सहस्त्रार नामक चक्र में प्रवेश करता है। अब जीव और ईश्वर में होनेवाला वह माया का परदा भी नष्ट हो जाता है और जीव और शिव की एकता हो जाती है। यह स्थिति अनुभव के परे लेकिन ज्ञानमय होती है। क्योंकि इस समय अनुभव को ग्रहण करनेवाला ही चैतन्य से एकरूप हो जाता है। नमक का पुतला महासागर की गहराई को नापने के लिए उसके पानी में डूब जाता है और, उस क्षण में सागरमय हो जाता है। सागर की गहराई नापनेवाला ही अपना अस्तित्व खो बैठता है। मूँह में खाने की चीज़ होने पर जीभ उसके स्वाद को अनुभव कर सकती है। लेकिन मुँह खाली होने पर जीभ की जों स्थिति होती है, वैसी ही स्थिति ज्ञानी की होती है। मुंह में वस्तु हो या न हो, जीभ की स्वाद लेने की शक्ति नष्ट नहीं होती; उसी प्रकार अनुभव करने के लिए कोई स्वतंत्र वस्तु रहे या न रहे, ज्ञानी मनुष्य की शक्ति क्यों के त्यों बनी रहती है।

सुषुम्ना नाडी में जन्मजन्मांतर के अनुभव तथा ज्ञान का कोष होता है। सुषुम्ना के जाग्रत होने के बाद मनुष्य की प्रज्ञा के प्रकाश का स्पर्श सुषुम्ना में संचित अनुभवों को हो जाने से उसका ज्ञान मनुष्य को हो जाता है।

मोहिनी विद्या में क्ष के जाग्रत मन को स्थिर करने की विधियाँ बताई गई हैं। इसका मतलब यही है कि इडा और पिंगला के कार्य को रोककर क्ष की अन्तर्मन रूपी 'सुषुम्ना' नाडी को क्रियाशील बनाना। लेकिन योगशास्त्र के द्वारा जाग्रत होनेवाली सुषुम्ना और संमोहन विद्या में जाग्रत होनेवाली सुषुम्ना इन में बहुत फर्क है। योगसाधना की जागृति शाश्वत होती है और संमोंहन विद्या की जागृति क्षणिक होती है। पहिली जागृति स्वप्रयत्नों का फल है; तो दूसरी जागृति में किसी अन्य व्यक्ति (प्र) की अपेक्षा होती है। पहिली जागृति में योगी को अ-लौकिक सिद्धियों का लाभ होता है। तो दूसरी में संमोहन की स्थिति में क्ष

के द्वारा कुछ अद्भुत बातें कराई जाती हैं। पहिली जागृति में योगी ज्ञानावस्था में होता है, तो दूसरी में संमोहन के प्रभाव को पीछे लेने पर क्ष फिरसे अपनी हमेशा की अज्ञानावस्था में प्रवेश करता है।

कुंडलिनी शक्ति सुप्तावस्था में (Dorment) होती हैं। उसे जाग्रत कर सुषुम्ना नाडी में होनेवाले हर चक्रस्थान पर ले जाने के लिए विशिष्ट योगिक क्रिया की नितान्त आवश्यकता है। और कुंडलिनी जागृति के लिए प्राणायाम विधि अत्यन्त प्रभावशाली है। प्राणायाम के कारण इडा और पिंगला इन दो नाडियों का कार्य रुक जाता है। क्योंकि मनुष्य की श्वसनक्रिया इडा और पिंगला के द्वारा होती है। प्राणायाम साधना में कुंभक क्रिया के समय मनुष्य श्वासोच्छ्वास क्रिया को बंद रखता है। इसके परिणामस्वरूप इडा और पिंगला का कार्य भी रुक जाता है। धीरे धीरे सुषुम्ना नाड़ी जाग्रत हो जाती है और उसके साथ कुंडलिनी शक्ति चलित (Active) होकर एक के बाद एक सप्तचक्रों में प्रवेश करती है। ध्यान या चिंतन के कारण मन एकचित्त हो जाने से शारीरिक क्रियाएँ रुक जाती हैं ओर इडा और पिंगला इन नाडियों का कार्य भी उसके साथ रुक जाता है और इसके फलस्वरूप सुषुम्ना नाडी जाग्रत हो जाती है। असह्य दुःख अथवा अत्यानंद के कारण भी मनुष्य अपने शरीर को पूर्णरूपेण भूल जाता है और फलतः सुषुम्ना नाडी जाग्रत होती है, ऐसे भी कही उदाहरण देखे गए हैं।

कुछ लोगों का यह कहना है कि कुंडलिनी शक्ति के मूलाधार चक्रपर (गुदास्थि के पास) उँगली रख कर और धानावस्था में प्रवेश कर अनुभवी गुरु शिष्य की कुंडलिनी शक्ति को जाग्रत कर देते हैं। इसी प्रकार का अनुभव कथन करनेवाले साधक बड़ी संख्या में मिलते हैं।

लेकिन कुंडलिनी जाग्रत होने के बाद की दैहिक तथा मानसिक स्थिति में जो परिवर्तन आ जाता है उसका प्रमाण इन साधकों में नहीं दिखाई देता। ये तथा-कथित साधक पूर्णरूपेण अज्ञान के अंधेरे में भटकते रहते हैं और भ्रम तथा वृथा अभिमान के कारण कुंडलिनी जागृति का दावा करते हैं। जब तक मनुष्य का मन अनंत वासनाओं का निवासस्थान बना रहता है, तब तक ऊपर वर्णित प्रक्रिया के द्वारा उसकी कुंडलिनी जाग्रत होना बिलकुल असंभव है। गीली लकड़ी जल नहीं सकती। उसी प्रकार वासनारूपी मानसिक गीलापन नष्ट हुए बिना सद्गुरु किसी भी शिष्य की कुंडलिनी को जाग्रत नहीं कर सकते। 'कुंडलिनी 'का जाग्रत होना साधक के अपने प्रयत्नों का फल है। भगवान श्री रामकृष्ण परमहंस अथवा भगवान श्री रमण महर्षि के जीवन काल में कितने साधकों की कुंडलिनी जाग्रत हो कर उन्हें ज्ञान का लाभ हुआ? केवल स्वामी विवेकानंद जैसे महान शिष्य को छोडकर स्वामी रामकृष्ण के अन्य सभी शिष्य अज्ञानावस्था में ही रहे। क्योंकि उनका व्यक्तित्व "ग़ीली" लकडी का था। कुछ वर्ष पहले थाना में (बम्बई

के पास यह शहर है।) एक संन्यासी रहते थे। इक्कावन रुपये फीस ले कर वे किसी की भी कुंडलिनी को जाग्रत करते थे। अपनी जिज्ञासापूर्ति के लिए मैं भी उनके पास गया। लेकिन कुंडलिनी जागृती के कारण जिस उच्च कोटि के आनंद का लाभ होता है, उसका लाभ मेरे मन को बिलकुल नहीं हुआ। कुंडलिनी जागृति के बारे में और एक व्यक्तिगत अनुभव बताना चाहता हूँ : उस समय मेरी उम्र तेइस-चौबीस साल की थी। पूना के एक प्रसिद्ध योगिराज के दर्शन करने गया। उन्होने मुझे अपने सम्मुख बिठा कर हाथ फैलाने को कहा। उन्होंने अपनी तर्जनी से मेरी तर्जनी को स्पर्श कर अपने मन को शांत और एकाग्र किया। अपनी आँखों को मूँद भी लिया। दो-तीन मिनट के बाद उन्होंने मुझसे पूछा, "कुछ प्रवाह (Currents)) उँगली में से बहने लगा है ?" उनकी कीर्ति, कमरेकी सजावट आदि बाहरी जगमगाहट से मैं पहले ही इतना प्रभावित हो चूका था कि मेरे मन से अनायास ही "हाँ" शब्द निकल पडा। वास्तव में मैं झूठ बोल रहा था। अपनी आँखें खोल कर उन्होंने कहा, "देखो, अब तुम्हारी कुंडलिनी जाग्रत हो गई है। इस जाग्रतावस्था को हमेशा के लिए टिकाने के लिए तुम्हें नारी-सुख बहुत मात्रा में लेना पडेगा। अगर तुम्हारी शादी नहीं हुई हो, तो बिना किसी हिचकिचाहट के वेश्यागमन करो। हर दिन पान-तमाखू खाते जाओ।" इन बातों से मेरे मन में घृणा पैदा हो गई। मैं वहाँ से तुरंत निकल पड़ा। यह शुद्ध ढोंग था। मनुष्य की स्वाभाविक कामवासना को प्रोत्साहन दे कर उसे धर्म तथा योगादि नाम से फँसाने की यह एक युक्ति थी। केवल हाथ लगाने से कुंडलिनी जाग्रत हो जाती तो पारमार्थिक दृष्टि से कोई भी व्यक्ति अज्ञ न रहता। हर व्यक्ति सत् चित् आनंदरूप बन जाता।

कुंडलिनी जाग्रत करने का प्राणायाम और ध्यान इनके अतिरिक्त और भी एक सुलभ मार्ग है। मैं पहली बार इस ग्रंथ में उसको स्पष्ट कर रहा हूँ।

सप्तचक्रों में से मूलाधार, स्वाधिष्ठान और मणिपुर इन चक्रों से संबंधित गुणों पर काबू पाने से और बचे हुए चार चक्रों के गुणानुसार जीवन बिताने की कोशिश करने पर भी कुंडलिका जाग्रत होना संभव है। जो साधक प्राणायामादि क्रियाओं में कठिनता का अनुभव करते हैं, वे इस सुलभ मार्ग को बिना किसी आपत्ति के अपना सकते हैं। कामवासना, खानेपीने के बारे में दिलचस्पी और कीर्ति की अभिलाषा, इन तीन बातों को अपने जीवन से हटाकर इस साधना का प्रारंभ किया जा सकता है। ये तीन गुण तीन निम्न चक्रस्थानों (Lower centres) के गुण हैं। अपने मन को अच्छे विचारों में मग्न रखने से और अपने व्यक्तिगत काम-जीवन पर मर्यादा डालने से कामवासना घटती जाती है। कामवासना या सेक्स पर पूरी तरह विजय पाना अत्यंत कठिन बात है। शरीर के रहते मनुष्य भोजन का पूर्ण त्याग नहीं कर सकता। उसी प्रकार शरीर के रहने पर कामवासना की तृप्ति आवश्यक बात होती है। और मनुष्य की इंद्रियाँ अपने विषय को भोगने

के लिए बडी उत्सुक रहती हैं। इसके बारे में कलवन गाँव के श्री नरसिंह बाबा का उपदेश मेरे लिए मार्गदर्शक सिद्ध हुआ है। उनका कहना है कि, मनुष्य की इंद्रियाँ कुत्ते के समान होती हैं। रोटी का एकाद टुकडा फेंकने पर कुत्ता शांत हो जाता है, भुंकना बंद कर देता है; उसी तरह मनुष्य की इंद्रियों को उनसे संबंधित विषयों का भोग अल्प मात्रा में देना चाहिए। वरना ये इंद्रियाँ बेचैन रहती हैं और साधना के मार्ग में रुकावट डालती है। साधक को आगे बढ़ने ही नहीं देती। साधक के द्वारा आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन एक कठिन बात है। भगवान श्री रामकृष्ण परमहंस तथा उनके सत्‌शिष्य स्वामी विवेकानंद के मन को भी कामवासना से बडी पीड़ा पहुँची। जनसाधारण की बात ही अलग है। अतः मनुष्य की इंद्रियों को अल्प मात्रा में भोग दे कर संतुष्ट रखना योग्य है।

हर व्यक्ति चटोर नहीं होता। फिर भी पहले तीन चक्रों का प्रभाव मनुष्य जीवन में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। तली हुई चीजें, मिठाइयाँ, खट्टी चीजें आदि देखकर भी मुँह में पानी आ जाता है! इस जिव्हा-लौल्य को दबाना चाहिए। अतः साधक सोचता रहे कि खाने की चीजों का सुख जीभ के लिए, है आत्मा के लिए नहीं। एकाद कौर को निगलने के बाद सूखी रोटी और जलेबी एक समान बन जाती है! जिस अन्न को हम ग्रहण करते हैं उसमें से स्थूल अंश से विष्ठा बनती है; मध्यमांग से मांस, हड्डियाँ, खून आदि चीजें बनती हैं; और सूक्ष्मांग से मन बनता है। मतलब है मन का पोषण हो जाता है। छांदोग्योपनिषद में इसकी स्पष्ट चर्चा की गई है। साधा तथा सत्त्वयुक्त भोजन मन को सात्त्विक (पवित्र) बनाता है। क्योंकि अन्न यही मन का उपादान है। जैसा अन्न वैसा मन। और मन जितना अधिक सात्त्विक उतना अधिक शक्तिशाली। सात्त्विक भोजन वह है जिसमें चावल, रोटी, ताजी सब्जियाँ, दूध, घी, दाल, फल आदि का अंतर्भाव होता है। अतः तमोगुण और जिव्हालौल्य को बढ़ानेवाले आहार को वर्ज्य करना चाहिए। ऐसा करने पर ऊपर बताए तीन चक्रों से संबंधित गुणों में अवश्यमेव परिवर्तन आ जाता है।

तीसरा गुण है कीर्ति की अभिलाषा। इसका त्याग करने की रीति का स्पष्टीकरण अब करूँगा। साधक अपने मन को समझावे कि कीर्ति तथा सन्मान क्षणभंगुर चीजें हैं। मनुष्य की मृत्यु होने के बाद कीर्ति से क्या लाभ होता है? "Fame is a food that dead men eat; I have no stomach for such meat." यह कविउक्ति कितनी अर्थपूर्ण है!

प्राचीन इजिप्त का सम्राट ओज़मैंड्स के पुतले के चबूतरे पर उसके बड़प्पन का वर्णन लिखा गया था। जब कवि महोदय वहाँ पहुँचे तो वहाँ से पुतला गायब था और चारों ओर रेगिस्तान का साम्राज्य था। वह सम्राट, उसकी कीर्ति का गान करनेवाली उसकी प्रजा और उसका साम्राज्य सब सारी बातें कालचक्र में

पीस कर चूर चूर हो गई थीं। अनंतकोटी ब्रह्मांडों में पृथ्वी एक रजःकण के समान है। और इस पृथ्वी पर चरने विचरनेवाले प्राणी-मात्र केवल क्षुद्र जीवजंतू हैं! मनुष्यने ऐसा कौनसा महान कृत्य किया है कि वह कीर्ति की अभिलाषा रखता है? सभ्यता के उषाकाल से आजतक अनेकानेक सम्राट, कवि, लेखक, कलाकार, सेनानी, अन्वेषक आदि आदि हो गए। लेकिन उनमें से कितने स्मृति-शेष हैं? मनुष्य में जो भी कुछ महानता का लक्षण होगा, उसे ईश्वर की कृपा समझकर जीवन विताने से कीर्ति की अभिलाषा से मनुष्य का मन बच जाता है।

जिन साधनाओं की चर्चा मैंने ऊपर की है, उनके कारण निम्न तीन चक्रों का कार्य रुक जाएगा और चौथा अनाहत चक्र जाग्रत होने लगेगा। इस चौथे चक्र के जाग्रत होने से साधक सच्चे परमार्थ मार्ग का पथिक बन जाता है। इस चक्र के गुणानुसार साधक के मन में उच्च कोटि के विचार जाग्रत होते हैं और उसकी प्रज्ञा धीरे धीरे आगे के चक्रों में स्थिर हो कर वे चक्र भी धीरे धीरे जाग्रत होने लगते हैं। अन्त में सहस्त्रार चक्र में मनुष्य की प्रज्ञा या बुद्धि का लोप हो जाता है और "यतो वाचो निवर्तन्ते" इस उपनिषद् वचन के अनुसार बुद्धि के अभाव में उस सर्वोच्च ब्राह्मीस्थिति का वर्णन शब्दों में करना असंभव है।

दैहिक कृतियों द्वारा कुंडलिनी जाग्रत करने के बजाय पहिले तीन चक्रों के गुणों का लोप कर, उनके आगे जो तीन चक्र होते हैं उनके गुणधर्मानुसार बर्ताव करना, यही इस साधना की मुख्य प्रक्रिया है।

इडा, पिंगलादि नाडियाँ, सप्तचक्र, कुंडलिनी आदि की सत्यता के बारे में कुछ पाठक जरूर सन्देह प्रकट कर सकते हैं। क्या यह सब कविकल्पना ही है? यह सच है कि ये नाडियाँ, ये सप्तचक्र तथा कुंडलिनी इनके दर्शन अपने चर्मचक्षु के द्वारा अभितक किसी भी मनुष्य ने नहीं किए हैं। अतः इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि ये सभी बातें योगशास्त्रांतर्गत संकेत हैं। ये नाडियाँ, चक्र और कुंडलिनी स्थूल रूप नहीं हैं। वे अतिवाहिक (Made up of subtle elements) तत्त्वों से बने हैं। पहिले तीन चक्र तथा उसके बाद के तीन चक्र मन की अवस्थाएँ हैं। मनुष्य की प्रज्ञा का प्रवेश जब विशिष्ट चक्र में होता है तब मन तत्रूप बन जाता है और साधक उसके गुण के अनुसार बर्ताव करने लगता है। ज्ञान-दृष्टि से सोचा जाय तो पता लग जाएगा कि आत्मस्वरूप केवल सत्य है और देह उसके स्थान पर पैदा हुआ कल्पना का एक खेल है। अतः जिसका अस्तित्व न के बराबर है उस देह में वास करनेवाली नाडियाँ, सप्तचक्र और कुंडलिनी के बारे में सोचना, रज्जु के स्थान पर दिखाई देनेवाले साँप की हड्डियों को गिनती करने के समान हास्यास्पद है!

□ □ □

.२१.

श्रद्धा ही सिद्धि है

किसी देवता, साधु, विचार अथवा वस्तु के प्रति दृढ़ श्रद्धा रखने से मनुष्य की कामनाएँ सफल हो जाती हैं ऐसी लोगों की मान्यता है। और विज्ञान भी इसका समर्थन करता है। फ्रान्स में लार्डस नाम का एक स्थान है जहाँ एक संत स्त्री का मंदिर है। इस मंदिर की बगल में एक तालाब है। लोगों की यह श्रद्धा है कि इस तलाब के पानी में स्नान करने से असाध्य से असाध्य व्याधियाँ नष्ट होती हैं और मनुष्य व्याधिमुक्त हो जाता है। कैन्सर, रक्तपित्त आदि बीमारियों से जर्जर रुग्ण भी तालाब सें डुबकियाँ लगाने से व्याधिमुक्त हो जाते हैं। लकवा अथवा पोलिओ से पीड़ित प्रौढ तथा बालक यहाँ स्नान करने से रोगमुक्त होते हैं। और यह सिद्ध बात है। बडे बडे डॉक्टरों के द्वारा ऐसे व्याधिमुक्त लोगों की जाँच भी कराई गई है, और उन्होंने भी इसे प्रमाणित किया है। उस जल की अद्‌भुत शक्ति का अनुभव कर ये डाक्टर भी दंग रह गये। लकवे से पीड़ित एक बुढ़िया को स्ट्रेचर पर से यहाँ लाया गया। कड़ाके की ठंडी थी। फिर भी उस संत स्त्री की प्रार्थना कर, लोगों ने उस बुढ़िया को उस पानी में डुबो दिया। और श्रद्धा का ऐसा प्रभाव कि वह बुढ़िया अपने पैरों के बल घर चली गई ! और ऐसी अद्‌भुत बातों का सिलसिला अभी भी जारी है।

पंढरपुर में ईंट पर खडे विठ्ठल-रुक्मिणी के दर्शन करने से अथवा काशी-विश्वेश्वर के चरण स्पर्श करने से गार्हस्थ जीवन सुखी हो जाता है और अंत में मुक्ति मिलती है यह श्रद्धा हज़ारों हज़ार लोगों के हृदय में वास करती है। हिन्दुओं के पवित्र स्थानों में काशी का बड़ा महत्त्व है। काशी पुण्यनगरी की यात्रा करने के लिए बूढे लोगों का मन तड़ाफड़ता है। हर साल आषाढ तथा कार्तिक महीने की एकादशी के पर्व पर पंढरपुर जा कर भगवान विठोबा के दर्शन करने-वाले सैकडों भागवत् धर्मीय महाराष्ट्र में पाए जाते हैं। इन दो पर्वों पर नियमित रूप से पंढरपुर जानेवाले इन भगवत्‌भक्तों को वारकरी नाम से पहचानते हैं। मराठी में वारी का अर्थ है नियमित तीर्थाटन और उससे बने वारकरी शब्द का

अर्थ है अपने इष्ट के दर्शन के लिए पर्वकाल में तीर्थाटन करनेवाला भक्त। वारकरी आजीवन अपने नियम का पालन करते हैं। उनकी दृष्टि में पंढरपुर का विठोबा (इसे विट्ठल या पांडुरंग भी कहते हैं।) परब्रह्मस्वरूप है और उसके दर्शन करना ब्रह्मस्वरूप से एकरूप होना है। इसी श्रद्धा को हृदय में जताते हुए ये वारकरी सैकडों मील के फासले को पैदल ही पार कर पंढरपुर आते हैं। काशी जानेवाले हर भक्त के मन में यह दृढ़ श्रद्धा वास करती है कि काशी पुण्यनगरी में मृत्यु होने से जन्ममृत्यु के चक्र से मनृष्य मुक्त हो जाता है। अत: जिन भक्तों का मन इस श्रद्धा से पूर्ण रूपेण भरा हुआ है, उन्हें उसके अनुसार अवश्यमेव फल मिल जाता है, इसमें कुछ भी संदेह नहीं है।

महाराष्ट्र के अहमदनगर ज़िले के शिर्डी नामक गाँव का नाम भारत भर ही नहीं तो दुनिया भर में मशहूर हो चुका है। साईबाबा जैसे महान साक्षात्कारी संत के निवास से शिर्डी की भूमि पूनित हो चुकी है। इतना ही नहीं तो श्री साईबाबा भगवान के अवतार थे। आज श्री साईबाबा देहरूप में इस शिर्डी में नहीं हैं। फिर भी अतिवाहिक देह के रूप में वे शिर्डी में वास करते ही हैं और अपने भक्तों की मनोकामनाएँ पूर्ण कर देते हैं। साईभक्तों के मन में इस श्रद्धा का वास है। अत: व्याधिग्रस्त, ऋण में डुबे लोग, दरिद्री, संतानहीन आदि भक्त शिर्डी आकर साईबाबा की मूर्ति के दर्शन करते हैं। उनमें से ज्यादातर भक्तों की मनोकामनाएँ सच्ची श्रद्धा के कारण जरूर सफल होती हैं। मेरे एक परिचित की लड़की की शादी की बात पक्की हो चुकी थी। उनकी माली हालत कुछ खास अच्छी नहीं थी। हज़ार-देढ हज़ार की रकम की कमी महसूस होने लगी। मेरे मित्र ने सीधे शिर्डी को प्रस्थान किया और आर्त स्वर में भगवान श्री साईबाबा से माँग की। घर आने के बाद लाटरी टीकटों के एक विक्रेता ने जबरन एक लाटरी टीकट उनके गले में बाँध दिया और आश्चर्य की बात ऐसी है कि उस टीकट को इनाम मिला जिससे उनकी आर्थिक अड़चन टल गई! मेरे व्यक्तिगत जीवन में घटी एक घटना का वर्णन मैं आपके सामने रखना चाहता हूँ : सन १९५० इ. की बात है। मैं सिर्फ कुंभक क्रिया का अभ्यास कर रहा था। एक दिन मेरी अपनी बुद्धि से मैंने इस क्रिया में कुछ परिवर्तन कर दिया और लघु श्वास्-उच्छ्वास का आरंभ किया। प्राणायाम क्रिया को समाप्त करते ही मैं बेचैन हो गया। मेरी आँखों के सामने अँधेरा-सा छा गया। मेरे सिर में कोई हतौडे से प्रहार कर रहा था। मेरी स्थिति किसी पागल के समान हो गई। मेरी नींद बीच में ही खुलने लगी। साँस भारी सी हो गई। दो-तीन महीने यह जारी रहा। डॉक्टर से सलाह-मशविरा की। किसी ने बताया यह ब्लड-प्रेशर का नतीजा है। तो किसीने कुछ और बताया। काम करना भी मुश्किल हो गया। मनस्वास्थ्य पार नष्ट हो गया। मन में सोचने लगा कि अब चार दिन का मेहमान हूँ; अत: वसीहतनामा करने की तैयारी की। मेरी पत्नी की हिंमत नष्ट हो

गई। मैंने सोचा अब जीवन की शाम तो नजदीक आ ही चुकी है तो भगवान श्री साईबाबा के दर्शन क्यों न किए जाय ? अतः हम पति-पत्नी शिर्डी चले गए और श्री-साईबाबा की अन्योन्य मन से प्रार्थना की और उनका प्रसाद लेकर घर लौटे। घर आने पर मैंने एक स्वप्न देखा जिसमें एक द्रोण लेकर साक्षात् साईबाबा दिखाई देने लगे। उस द्रोण में कुछ द्रव था। उसे पीने की आज्ञा देकर श्री बाबा मुझे डाँटने लगे। उन्होंने कहा, " पागल, ऐसा खिलवाड फिर न कर ।" और जब मेरी नींद खुली तो देखा कि मेरी वह मानसिक व्याधि का कहीं भी पता नहीं है! इस घटना के बाद मैं उस व्याधि से पूर्ण रूपेण मुक्त हो गया।

" Faith can move mountains ! " अर्थात् श्रद्धा हो तो मनुष्य पहाड़ों को भी हिला सकता है । किसी वस्तु विशेष के बारे में विशिष्ट श्रद्धा को मन में रखने से उसका अपेक्षित फल मिल ही जाता है। यह सत्य है। इस में कोई भी अतिशयोक्ति नहीं है। अमरिका के एक प्रसिद्ध डाक्टर अपनी पत्नी के साथ चलचित्र देखने गए। कुछ समय के बाद उनकी पत्नी सिरदर्द को महसूस करने लगी। मन बहलाव के लिए थिएटर आए डॉक्टर के पास दवा कहाँ से आएगी ? लेकिन डाक्टर हार माननेवाले नहीं थे। उन्होंने अपने कोट से एक बटन को तोड लिया और उसे पत्नी के हवाले करते हुए चबाने को कहा। और आश्चर्य यह है कि उस बटन को चबाते ही उनकी पत्नी का सिरदर्द तुरन्त गायब ! वास्तव में उस बटन में सिरदर्द को दूर करने की कोई भी दवा नहीं थी। फिर यह चमत्कार कैसे हुआ ? " मेरे पति डॉक्टर हैं और उन्होंने सिरदर्द की टिकिया दी हैं।" इस दृढ़ श्रद्धा के कारण उस औरत का सिरदर्द मीट गया। डोरा, तावीज, आदि मंत्राभिभारित चीजें देकर लोगों को व्याधिमुक्त करनेवाले फकीर तथा साधु हमेशा दिखाई देते हैं। मंतरा हुआ डोरा देकर भूत-प्रेत की बाधा से छुड़ानेवाले लोग हर गाँव में होते हैं। सन्तान-लाभ, धन-लाभ आदि के लिए मंत्र का प्रभाव डाले हुए ताइतों के बारे में कई विज्ञापन पढ़ने को मिलते हैं। इन में से बहुत बातें तो लफंगों के कारनामे हो सकते हैं। लेकिन उनके पीछे जो श्रद्धा होती है, वह सत्य होती है। " विश्वासः फलदायकः " यह तत्त्व हमेशा सच निकलता है ।

ऐसा होते हुए भी मनुष्य की कामनाएँ कभी कभी सफल होती हैं और आम तौर पर असफल रहती हैं, इस के बारे में तर्क की आधारशिला पर सोचना आवश्यक है। इसके लिए लार्डस के ही उदाहरण को लीजिए। वहाँ जानेवाला रुग्ण व्याधिविशेष से जर्जर होता है। लेकिन वह पहले से ही जानता है कि वहाँ के तालाब में स्नान करने से कइयों की व्याधियाँ पूर्ण रूपेण नष्ट हो गई। उसके बहिर्मन में उद्भावित यह विचार उसके अन्तर्मन की गहराई में जाकर पैठ जाता है। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि अन्तर्मन को जो सूचना दी जाती है, उसे वह अमल में लाता है। लार्डस के तालाब में स्नान करने से मैं भी अन्य रुग्णों के समान

व्याधिमुक्त हो जाऊँगा, यह श्रद्धापूर्ण विचार अन्तर्मन में स्थिर होने के कारण अन्तर्मन भी उस दिशा में क्रियाशील हो जाता है। लेकिन रोगी के मन में किंचित् भी सन्देह निर्माण होने पर वह विचार-धारा अन्तर्मन तक पहुँच ही नहीं सकती। विचार + सन्देह, इस मिलावट के कारण श्रद्धा का वीज नष्ट हो जाता है और अन्तर्मन क्रियाशून्य रह जाता है। अब और एक सवाल खड़ा हो जाता है कि छोटे वच्चे, जो इस तालाव में स्नान करने की क्रिया के परिणाम के वारे में कुछ भी नहीं सोच सकते, कैसे व्याधिमुक्त होते हैं? इस का जवाव यही है कि वालक की विचारशक्ति अविकसित होते हुए भी जो प्रौढ़ लोग उसे वहाँ ले जाते हैं उनका मन श्रद्धायुक्त होने के कारण उनकी वह श्रद्धा वालक के अन्तर्मन में प्रवेश करती है और रोगमुक्ति की दिशा में उसका अन्तर्मन अपने आप क्रियाशील हो जाता है। और फलस्वरूप वह वालक व्याधिमुक्त हो जाता है। भगवान श्री रामकृष्ण परमहंस का जन्मकाल नीतिभ्रष्टता का काल था। धर्मश्रद्धा डाँवाडोल हो रही थी। समाज में अनीति का साम्राज्य था। नास्तिकता का वड़ा वोलवाला हो रहा था। ऐसी संकट की स्थिति में कोई महात्मा पैदा हो जाए और समाज को भलाई के रास्ते पर ले आए, ऐसी तीव्र इच्छा समाज के सज्जनों के मन में उद्भावित हो गई। यह इच्छा हरेक के अन्तर्मन में जाकर स्थिर हो गई। अब अन्तर्मन एक ही होता है। अतः उसकी इच्छा के परिणामस्वरूप भगवान श्री रामकृष्ण परमहंस जैसे महात्मा का अवतार हो गया। "तुम्हारा कल्याण हो!" इस तरह के बूढों तथा सज्जनों के आशीर्वाद सच निकलने के पीछे यही वैज्ञानिक कारण होता है। अगर कोई नीच व्यक्ति आपका अहित करे तो आप आवेश में आकर शाप देते हैं। यह विचार इतना बलशाली होता है कि तुरन्त अन्तर्मन में प्रवेश कर कार्यान्वित हो जाता है।

यहाँ एक वात को अवश्यमेव ध्यान में रखना है। और वह यही है कि वहिर्मन में उद्भावित कोई भी विचार अंतर्मन में आसानी से नहीं प्रवेश कर सकता। नहीं तो हर अच्छे विचार के साथ दुनिया में सुख वढ़ता रहना चाहिए था। इसके लिए शांत, एकाग्र तथा संदेहरहित मन की नितान्त आवश्यकता रहती है।

शांत, एकाग्र तथा सन्देहरहित मन मनुष्य जीवन को सफलता के रास्ते पर ले जाता है। क्योंकि दृढ श्रद्धायुक्त विचार अन्तर्मन में जाकर मनुष्यजीवन में परिवर्तन लाते हैं। मनुष्यजीवन की कक्षा में जो भी वातें हैं उनके संबंधी मनोकामनाएँ इस उपाय से अवश्यमेव सफल हो जाती हैं। छांदोग्योपनिषद में "श्रद्धस्व सौम्य" ऐसा वचन है। गीता में भी भगवान ने कहा है, "श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्।" अतः मेरे पाठकों! निराशा, सन्देह, वैफल्य आदि अभावात्मक विचारों का त्याग कर अन्तर्मनरूपी कल्पवृक्ष की छाँह में खडे हो इस तरह की श्रद्धा को मन में जताते हुए आगे बढो। सफलता तुम्हारी ही राह देख रही है।

◻ ◻ ◻

.२२.

संकटमुक्ति

जीवन की राह काँटों से भरी है। कदम कदम पर संकटों का सामना करना पडता है। दुःखों से जिसकी पहचान नहीं ऐसा व्यक्ति विरला। रोम के एक सम्राट ने लिख रखा है : मेरे समस्त जीवन में से केवल आठ दिन ऐसे विते जो दुःखों से मुक्त थे। सुख-दुःखों की तुलना करते हुए सन्त भी इसी निर्णय पर पहुँचे हैं। उनकी दृष्टि में जीवन वह घटना है जिसमें दुःखों के पहाड़ होते हैं लेकिन सुख राई जैसा होता हैं। जीवन में विरोध है। द्वंद्व है। द्वैत है। छाया-प्रकाश, शीत-उष्ण, मिठास–कडुवाहट, सुख-दुःख आदि द्वंद्व भावों से कौन अपरिचित है ? संसार यदि सुख से और केवल सुख मात्र से ही भरा होता तो उसके वारे में अलग सोचने का समय ही नहीं आता। हमारे शास्त्र कहते हैं कि सुखःदुख प्रारब्ध कर्मों का फल है। लेकिन इस अध्याय में मैं दुःखों की कारण मीमांसा नहीं करूँगा। यहाँ मेरा हेतु है संकटों तथा दुःखों का सामना करने के उपाय बताना ताकि मेरे पाठक उन दुःखों तथा संकटों पर मात करें।

दुःख की अनुभूति के बारे में पहला सिद्धांत यह है कि साक्षात् दुःख भोग की अपेक्षा मनुष्य दुःख की कल्पना मात्र से ही अधिक दुःखी होता है। इस सिद्धांत को समझाने के लिए दाँत की पीडा का उदाहरण आपके सामने रखूँगा। दंतशूल के कारण मैं बड़ा परेशान हूँ। उस सडे हुए दाँत को निकालना नितान्त आवश्यक है। उसके लिए दंतचिकित्सक (Dentist) के पास जाना है। लेकिन दंतचिकित्सक के पास जाने से पहले ही मेरे मन पर वह ड़र हावी हो जाता है जिसे दाँत के निकालते समय मैं महसूस करनेवाला हूँ। बस ! मेरा मन भयग्रस्त हो जाता है। ओर ऐसी परिस्थिति में दन्तचिकित्सक के पास जाने के वाद अगर यह पता चले कि चिकित्सक महोदय बाहर गाँव चले गए हैं तो मेरा मन फूला नहीं समाता। वह उस कल्पित दुःख से क्षणभर के लिए छुटकारा पा जाता है। लेकिन यह समस्या को पीठ देखाने जैसी बात है। वास्तव में बात ऐसी है कि दन्तोत्पाटन के लिए जब

हम अपना मुंह खोल देते हैं तब उस क्षण को " Zero Hour " (ज़िरो अवर) कहते हैं और उस क्षण में जो भी कुछ हो जाता है उसके बारे में हमारी बुद्धि कुछ भी नहीं जान सकती क्योंकि दु:ख भोगने का वह क्षण ज्यों ज्यों नज़दीक आ जाता है त्यों त्यों हमारा मन उस दु:ख के भय से मुक्त हो जाता है। और उस विशिष्ट क्षण को (उदा० दाँत को खींच निकालने का क्षण) मन पूर्णरूपेण भयमुक्त स्थिति में पहुँच जाता है।

वास्तविक संकटों की अपेक्षा कल्पित संकटों से ही हमें नानी याद आ जाती है। मैं और एक उदाहरण देना चाहता हूँ। शादीव्याह का मौसम है। मुझे देश जाना है। ऐसे वक्त " टीकट कैसे मिलेगा? गाडी में जगह कैसे मिलेगी? " आदि आदि आशंकाओं से मेरा मन पहले से ही परेशान होने लगता है। स्टेशन पहुँचते तक यह आशंका तथा ड़र मन को दबाए रखते हैं। लेकिन स्टेशन पर टीकट खरीदनेवालों की कतार में मेरा एक मित्र दिखाई देता है। वह मेरे लिए एक ज्यादह टीकट खरीद लेता है। सब काम बन जाता है। मन कहता है " अभी तक बेकार परेशान रहा। "

कल्पित दु:खों से भी मनुष्य उतना ही परेशान रहता है जितना वास्तविक दु:खोंसे। इसका मनोवैज्ञानिक कारण क्या है? मैं पहले भी बता चुका हूँ कि मन में हर विचार की एक आकृति बन जाती है। उसे विचाराकृति (या Thought form) कहते हैं। कल्पित भय की भी एक विचाराकृति बन जाती है। अब इस भयरूप विचाराकृति को विरोध करनेवाली दूसरी विचाराकृति मन में पैदा न होने के कारण जिस प्रकार काँटा पैर में चूभता रहता है उसी प्रकार वह भयाकृति मनुष्य के मन को चूभती रहती हैं। जब यह विचाराकृति मूर्तस्वरूप धारण कर लेती है तब मनुष्य वास्तव प़ीड़ा को महसूस करने लगता हैं। अतः इस कल्पित दु:खों से मुक्ति पाने का एक ही उपाय है। और वह हैं इस कल्पित भय के बीज को ही नष्ट कर देना। बीज के नष्ट होने पर कल्पना का दु:खवृक्ष कैसे फूलेगा? कैसे फलेगा? दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि भविष्य काल में जिस पीड़ा को भोगना है उसके बारे में आज सोच सोच कर, मन को भयग्रस्त कर, दु:ख की उस घड़ी के आने तक के अपने समय को दु:खपूर्ण बनाने में कौनसी बुद्धिमानी है? चिंता से दु:ख बढ़ता है। चिंता वह शस्त्र नहीं जिससे दु:खों की जड़ों को काटा जा सकता है। आलस आलस का जन्मदाता हैं। हिंसा हिंसा की जन्मदात्री है। पाप पाप को ही बढ़ावा देता है। उसी प्रकार दु:ख की कल्पना साक्षात् दु:खों की जननी है।

कल्पना के द्वारा जिन दु:खों का निर्माण मनुष्य करता है उनमें से एक प्रति शत दु:ख भी वास्तव में मनुष्य को नहीं सताते। अतः इस सत्य को नहीं भूलना चाहिए कि मनुष्य के जाग्रत मन में निर्माण होनेवाले ड़र तथा चिंतायुक्त बलिष्ठ

विचार उसके अंतर्मन की गहराई में पैठ जाते हैं और जो भी विचाराकृति अंतर्मन की गहराई में पैठ जाती हैं वह मूर्तरूप धारण कर लेती है। "मुझे कुछ हो रहा है।" इस प्रकार सोचने की आदत कतिपय लोगों में, खास करके महिलाओं में पाई जाती है। उन्हें लगता है कि तबीयत दिन व दिन गिरती जाती है। कुछ व्याधि उनके शरीर को कुतर रही है। इन विचारों को बार बार मन में लाने से वे विचार मूर्त स्वरूप धारण कर लेते हैं और मनुष्यमें उस व्याधि विशेष के वास्तव लक्षण प्रकट होते हैं। अतः मन पवित्र विचारों से भर देना चाहिए। सोचते रहना चाहिए कि भगवान की कृपा से मेरा स्वास्थ्य उत्तम होता जा रहा है। और यह विचार परिपक्व अवस्था में अन्तर्मन में पैठ कर शरीर में जरूर असर डाल देता है और सोचनेवाले को अच्छे स्वास्थ्य का लाभ होता है।

संकटों की संभावना से मानसिक सन्तुलन खो बैठने से खुद को बचा लेना चाहिए। संकट को चुनौती देना मनुष्य-धर्म है। संकट की आहट लेते ही कहना चाहिए कि आखिर यह संकट करेगा तो भी क्या करेगा? संकट के आमने सामने ही जाने पर उसकी तीव्रता झट कम हो जाती है। यह बात साँप के जहरीले दाँतों को उखाड़ने जैसी है। संकट से भाग जाइए, वह पीछा करेगा, उसका सामना करने के लिए उसके सम्मुख खड़े हो जाइए, संकट खुद भाग जाएगा।

रोजमर्रा अड़चनों तथा दुःखों से भी कही गुना अधिक तीव्र दुःखों को भोगने की नौवत कुछ लोगों पर आ जाती है। जिंदगी भर की कमाई एक क्षण में खोने से कतिपय लोग कंगाल हो जाते हैं। कोई अपने एकलौते वेटे से हमेशा के लिए बिछुड़ जाता है। किसी असाध्य बीमारी के कारण कुछ लोगों का जीवन-रस सूख जाता है। किसी और की गलती के कारण कइयों को हथकडियाँ पहननी पड़ती हैं। अब इन दुःखों का सामना कैसे किया जा सकता है? कुछ दुःख ऐसे होते हैं कि उनके भोग को टाला नहीं जा सकता। भाग में जो लिखा गया है उस दुःख को न तो टाला जा सकता है न अन्य व्यक्ति हमारे लिए उसको भोग सकता है। "प्रारब्धकर्मणां भोगादेव क्षयः" इस प्रकार शास्त्रवचन ही है। भगवान की मर्जी समझ कर ऐसे दुःखों को भोगना अनिवार्य हैं। और कोई चारा नहीं। व्याधि, जरा तथा मृत्यु मानवी जीवन की अटल घटनाएँ हैं। अतः उनका सामना करना यही एक मार्ग उपलब्ध है। संकटों का सामना करते समय तथा दुःखो को सहते समय मन में सोचते रहना चाहिए कि जो दुःख हम सहन करते हैं, वैसे ही दुःखों से अन्य सभी लोगों का जीवन भी भरा हुआ है। और दुःख शाश्वत स्थिति नहीं है। जो दुःख जीवन में आया है, सो निश्चित समय पर चला जाएगा। "Every cloud has silver lining." इस उक्ति को कभी भी नहीं भूलना चाहिए। और भी एक वात है। हमेशा सुख पाने की ही इच्छा क्यों? संसार में सुखदुःख की मात्रा समान हो, तो भी मेरे जीवन में सुख अधिक हो जाने से किसी

अन्य व्यक्ति के जीवन में सुख की मात्रा उतनी ही घट जाती है, इस सत्य को मुझे नहीं भूलना है।

मेरा अनुभव रहा है कि असहय दुःखों को सहन करने की शक्ति पाने के लिए भगवान का स्मरण एक सीधासाधा और निश्चित रास्ता है। "अनन्याश्चितयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते" इस गीता-वचन के अनुसार ईश्वर के नामस्मरण के कारण मनुष्य का मन ईश्वरसंबंधी विचारों से युक्त रहता है और अपने दुःखों के बारे में सोचने के लिए मन को फुर्सत ही नहीं मिलती है। शस्त्रक्रिया (आपरेशन) के समय रुग्ण को बेहोश करने की दवा डाक्टर देते हैं ताकि रुग्ण को शस्त्रक्रिया से उद्भावित वेदनाओं का ज्ञान न हो सके। उसी प्रकार नामस्मरण एक ऐसी दवा है जिस के कारण मनुष्य का मन व्यथाओं से मुक्त होता है। जो भक्त अन्यान्य-भाव से ईश्वर की शरण में जाता है, खुद ईश्वर उसकी सहायता करने की प्रेरणा अन्य सज्जनों के मन में पैदा कर देता है। मनुष्य के संकट–काल में उसके रिश्ते-दार, मित्र तथा पड़ोसी आर्थिक तथा अन्य तरह से मद्द पहुँचाते हैं। यह असंभव हो तो दिलासा देते हैं। डूबनेवाले को तिनके का भी सहारा काफी होता है। सुहृदों की सदिच्छा से भी संकट में फँसे मनुष्य की हिम्मत बढ़ जाती है।

विश्व की महान् हस्तियाँ संकटों में पलती हैं। अतः इन महानुभावों की जीवनगाथाओं का पठन करने से भी मनुष्य के दुःखों की तीव्रता घट जाती है। फ्रान्स के सम्राट जगज्जेता नेपोलियन को जीवन का अन्त काल सेंट हेलेना जैसे द्वीप पर एकान्त में बिताना पड़ा। प्रभु रामचंद्र को चौदह वरस वनवास में रहना पड़ा। राजा हरिश्चंद्र को डोम का चाकर बनना पड़ा। समाज को नई दिशा दिखाने-वाले सन्त, महात्मा, सुधारक तथा नेताओं को पुरानी विचारधारावालों से सामना करना पड़ा। लेकिन विश्व की इन विभूतियों ने हार नहीं मानी। इनके आदर्शों पर चलने से अपने सीमित दायरे में भी मनुष्य सफलतापूर्वक संकटों का सामना कर सकता है।

कुछ लोग कहते हैं, संपत्ति में सुख है। मैं पूछता हूँ, फिर करोड़पति भी कभी कभी खुदकुशी क्यों कर डालते हैं? सुख संपत्ति में नहीं है। सुख समाधान में है। संतोष में है। अपने जीवन में संतुष्ट रहने में सुख है। सुख इसी मनप्रवृत्ति का फल है। लौकिक जीवन के प्रति आसक्ति जितनी अधिक, जीवन में दुःख उतनी ही मात्रा में अधिक। तो फिर सुखी होने का उपाय क्या है। भगवान श्री रामकृष्ण परमहंस बताते हैं कि मनुष्य के सुखी होने का एकमात्र उपाय "त्याग" है। त्याग का अर्थ यह नहीं है कि प्रारब्धकर्मानुसार प्राप्त भोग का त्याग करने का प्रयत्न। त्याग से अभिप्राय है आसक्ति का त्याग। अनासक्ति। मन आसक्त है; भोगी है। उसको अनासक्त, त्यागी बनाना है। मनुष्य का जीवन ईश्वर के आधीन है। उसके

संकल्प के अनुसार मनुष्य जीवन बनता जाता है। इसे स्वीकार कर जीवन विताने पर मन प्रसन्न हो जाता है। यही अनासक्ति है। "मैं यह करूँगा। वह नहीं करूँगा।" इस प्रकार के अहंभाव से मनको मुक्त कर, भगवान जो दिखावेंगे उसका स्वागत करते रहने में शांति की परिसीमा है।

"ज्ञान" प्राप्त होने पर योगी पहचान लेता है कि "मैं देह नहीं हूँ।" देहजीवन ज्ञानस्वरूप के ऊपर पैदा हुई तक कल्पनामात्र है। सुख-दुःख कल्पित देह की स्थितियाँ है। आत्मस्वरूप "मैं" इनसे परे है। यह योगी की भाववृत्ति है। मृगजल भूमि को गीला नहीं वना सकता। अथवा चलचित्र के परदे पर प्रकट होनेवाली सुखःदुःखयुक्त घटनाएँ परदे पर असर डालने में वांझ सिद्ध होती हैं। उसी तरह संसार के गोरखधंदे का कुछ भी असर आत्मस्वरूप के ऊपर नहीं हो सकता। इस उच्चतम अनुभूति के कारण योगी हमेशा प्रसन्न रहता है। सत्–चित्-आनंद यही उसकी स्थिति होती है। "**तरति शोकं आत्मविद्**" इस तत्त्व को पहचानकर मेरे पाठक भी इस उच्चतम स्थिति तक पहुँच सकते हैं।

□ □ □

.२३.

सुखी जीवन

संसार में पैदा हुआ हर मनुष्य सुख की अभिलाषा करता है और दुःखों से मुक्त होना चाहता है। सुख उस के लिए सत् है अतः दुःख असत् है। "**असतो मा सत् गमय**" की प्रक्रिया का यह एक अंग है। क्योंकि हर मनुष्य सत्-चित्-आनंद-घनस्वरूप है। देह नाम की वस्तु इस आत्मरूप के ऊपर पैदा होनेवाला भ्रम है। वह माया है। भास मात्र है। चमकती हुई सिप के स्थान पर चाँदी भासमान होती है। मध्दिम रोशनी में धुंधलके से रज्जु में सर्प दीखाई देता है। उसी प्रकार ब्रह्म में दीखनेवाला यह संपूर्ण जगत् भ्रममात्र है–उपाधिमात्र है। वास्तव में यह सृष्टसंसार परमात्मा स्वरूप से अलग कोई वस्तु नहीं है। उसकी कोई भिन्न सत्ता है ही नहीं। "**सर्वं खलु इदम् ब्रह्म**" "नेह नानास्ति किंचन" ऐसे श्रुतिवचन प्रसिद्ध हैं। "मैं परमात्मा ही हूँ। उससे भिन्न और कुछ भी नही हूँ।" इस एकत्व की स्थिति को अनुभव करने पर वह ज्ञानी पुरुष सांसारिक सुख–दुःखों के प्रति पूर्णरूपेण उदासीन हो जाता है। वह स्थितप्रज्ञ हो जाता है। मृगजल की बाढ़ से वह व्यक्ति नहीं ड़र सकता जो मृगजल की असत्यता को जान चुका है। रज्जु में दिखाई देनेवाले साँप का ड़र तब तक होता है, जब तक उसकी सत्यता का पता नहीं लगता। इस भासमय साँप की आधारशिला रज्जु का पता लगते ही साँप का ड़र क्षणमात्र में नष्ट हो जाता है।

ऐसी महान अनुभूति का लाभ होना अपने आप में एक दुर्लभ वस्तु है। ईश्वर का संकल्प एवम् सद्गुरु की कृपा के सिवाय ज्ञानप्राप्ति की अनुभूति केवल एक असंभव बात है। अगर परिस्थितियाँ ऐसी हैं तो संसार में व्यस्त जनसाधारण को सुख कैसे प्राप्त होगा ? और दुःखों से भी वे छुटकारा कैसे पाएंगे ? अतः इस संसार को मृगजल माननेवाली विचारधारा को ज़रा दूर रखकर, इस संसार को ही सत्य मानकर, पारिवारिक जीवन में रुचि लेनेवाले जनसाधारण को सुख कैसे मिलेगा इसके बारे में कुछ विचार प्रस्तुत करना मैं उचित समझता हूँ।

मनुष्य के सुखी होने का पहला और सर्वश्रेष्ठ मार्ग है अपने मन को संकल्प विकल्प रहित बना देना। मनुष्य-मन पर अपने ही सुख की कल्पना का साया हमेशा रहता है। मन सोचता रहता है—"मैं अमुक करूँगा। कल उस जमीन को खरीद लूंगा। परसो नया व्यवसाय शुरू करूँगा। मोटर लूँगा। बंगला बाँधूँगा।" आदि आदि। मनुष्य का मन दिनरात ऐसे संकल्प करने में मग्न रहता है। लेकिन कितने संकल्प सफलता की सीढी तक पहुँच पाते हैं? हर मनुष्य के जीवन का नाप–तौल भगवान के संकल्प का फल है, इस को मनुष्य भूल जाता है। सफलता के मंदिर की ओर जानेवाले पथ का निर्माता अथवा स्वामी मनुष्य नहीं है। वर्ना वह कभी का उस मंदिर तक पहुँच जाता! अपनी दरिद्रता को मिटाता! पूर्णरूपेण सुखी बन जाता! भगवान की लीला भी कितनी विचित्र है! कुछ व्यक्ति जमीन आसमान एक कर देते हैं लेकिन सफलता उनसे कोसों दूर रहती है। लेकिन कुछ ऐसे भी भागवान होते हैं, जिनके सम्मुख सफलता हाथ जोड़कर उपस्थित रहती है! लाटरी में पहला इनाम पानेवाला व्यक्ति किस पहाड़ को तोड़ने का काम करता है! आजकल देश की राजकीय तथा सामाजिक स्थिति ही ऐसी विचित्र बन चुकी है कि पहली श्रेणी में उत्तीर्ण होनेवाले उपाधि-धर को मामुली शिक्षा-दीक्षा प्राप्त साधारण बुद्धिवाले अफसर के अधिकार में काम करना पड़ता है। मेरा मतलब यह नहीं है कि मनुष्य कुछ भी संकल्प न करे। अपने जीवन की सीमा-रेखाओं का अन्दाजा लगाकर संकल्प करना बेहतर है। आसमान के तारे तोड़ लाने की योजना बनानेवाले आदमी की अपेक्षा वह आदमी अधिक बुद्धिमान् है। जो आम का पेड़ लगाकर उसे सींचता रहता है। जिन परिस्थितियों में हम पैदा हुए हैं, पले हैं और जीवन बिता रहे हैं, वे परिस्थितियाँ हमारे अनुकूल हैं, इस भाव को मन में जताते हुए संकल्पों को करना चाहिए। One man's food is another man's bane. (जो एक के लिए अमृत है, वह दूसरे के लिए विष।) वाली कहावत को नहीं भूलना चाहिए। संसार में वट-वृक्ष के समान आसमान से बातें करनेवाले वृक्ष होते हैं, और उनकी ही बगल में बित्ते भर ऊँचाईवाले पौंधे भी हवामें लहराते दीखाई देते हैं। क्या वह पौधा कभी शिकायत करता है कि में भी उस वट-वृक्ष के समान ऊँचा क्यों नहीं हुआ? खरगोश जैसे नन्हे जीव हाथी की विशालता की अभिलाषा नहीं करते। सत्ताधारी कौन बनेगा, धनवान् कौन बनेगा, विद्वान् कौन बनेगा, कीर्तिमान् कौन बनेगा आदि आदि योजनाएँ भगवान के संकल्प में पहले बनी रहती हैं। एक ही समय दो शिशु पैदा होते हैं। एक कंगाल के घर। दूसरा अमीर के घर। इसमें मनुष्य का बस नहीं चलता। पेड़ का पत्ता भी ईश्वर की इच्छा के बिना हिल नहीं सकता। लाख कोशिशें करने पर भी बाढ़, भूचाल, ज्वालामुखी का विस्फोट तथा मृत्यु आदि बातों पर मनुष्य अपना नियंत्रण नहीं प्रस्थापित कर सकता। योग वासिष्ठ में काकभृशुडी नामक एक ज्ञानी पक्षी की बोधकथा मिलती है। वह पक्षी

वड़ा सुखी था। इसके रहस्य के बारे में पूछने पर उसने बताया, "मेरे मन को कोई संकल्प-विकल्प छूता तक नहीं। मेरे भाग्य के अनुसार मेरे जीवन में जो भी घटनाएँ घटती हैं, मैं उनका साक्षी हूँ।" अत: संकल्प-विकल्प के परे, जीवनरस का जो भी प्याला सामने आएगा उसे खुशी के साथ प्राशन करना सुखी जीवन की पहली सीढी है !

सुखी जीवन की दूसरी सीढी है वर्तमान में ही अपने जीवन को जीना। अभिप्राय है कि वर्तमान को सत्य मानकर जीवन बिताना। मनुष्य का मन दिन-रात भूत-भविष्य के बारे में सोचकर परेशान रहता है। "काश ! ऐसा हो जाता तो, आज मैं कितना सुखी हो जाता ! " इस तरह जो होने की संभावना भी नहीं थी उसके बारे में ठंडी आहें भरना मनुष्य का स्वभावसा बन गया है। उसी प्रकार मनुष्य मृत व्यक्तिकी याद में फूट फूटकर रोता रहता हैं। जो हुआ सो हुआ। गतम् न शोच्यम्। होनहार होकर ही टलती है। भूतकाल के अंधकूप में झाँकने से क्या लाभ ? मेरे सद्गुरु मुझे हमेशा उपदेश दिया करते थे कि, "पीछे छोड़, आगे बढ ! " अतीत के नापदंड से भविष्यत् को नापने की आदत में हमारा मन उलझा रहता है। उज्ज्वल भविष्य के रंग-विरंगे सपनों की दुनिया में खो जानेकी उसकी आदत-सी बन जाती हैं। और जब ये सपने टूट जाते हैं तब उसका मन विफलता की आग में झुलसता जाता है। किसी लेखक ने ठीक ही कहा है कि भविष्य के बारे में जो भी कल्पनाएँ हम करते हैं, उनमें से अधिकतर बाँझ ठहरती हैं।

मनुष्य अपने सिर पर से तीन तरह के बोझ ढोता रहता है। एक-भूतकाल संबंधी याद। दो-वर्तमान जीवन का प्रवाह। तीन-भविष्य के बारे में चिंता। और इस बोझ के नीचे वह ऐसा दब जाता है कि अन्त में घोर निराशा के अन्धकार में लड़खड़ाने के सिवाय अन्य कोई चारा नहीं रह जाता। तो फिर आप पूछेंगे कि सुखी जीवन की कुँजी क्या है ? वर्तमान क्षण को अपना मानकर, घोडे के समान उसपर सवार होकर सफलता के मार्ग पर उसे सरपट दौड़ाना यही सुखी जीवन की कुँजी है। भूत और भविष्य का गुलाम बननेवाला व्यक्ति वर्तमान का स्वामी कैसे बन सकता है ? मनुष्य सोचता है– "रिटायर होने पर खुदका मकान बँधवाऊँगा।", "लड़के को आगे की पढाई के लिए विदेश भेजूँगा।" आदि आदि। लेकिन नसीब का चक्कर ऐसा होता है कि इन संकल्पों के सफल होने से पहले अथवा उनके सफल होने पर भी उनसे प्राप्त सुख का भोग लेने से पहले उस मनुष्य को परलोक का रास्ता सिधारना पड़ता है ! अतः वर्तमान क्षण को अपना सर्वस्व मानकर उसका पूर्णरूपेण लाभ उठाना इसीमें ही सांसरिक जीवन की सार्थकता है।

सुखी जीवन की तीसरी सीढी है सादगी। पश्चिमी देशों में, खास कर के यूनान (ग्रीस) में स्टोइक नामक संप्रदाय का बड़ा बोलबाला था। उस संप्रदाय

का पहला तत्त्व सादगी तथा गरीबी से पूर्ण जीवन था। "घटती आवश्यकताएँ-बढ़ता सुख।" यह उनकी विचारधारा का व्यवहार-सूत्र था। घटती आवश्कताओं के कारण मनुष्य अधिकाधिक आत्मनिर्भर बन जाता है। स्टोइक विचारधारा के अनुसार जो व्यक्ति चावल खाना छोड़ देता है वह दुनियाभर के चावल के खेतों का स्वामी बन जाता है। अपने आहार में आम्रफल वर्ज्य करनेवाला समस्त आमराइयों का मालिक बन चाता है। लाक्षणिक अर्थ में यह विचारधारा तर्कसंमत है। स्टोईक संप्रदाय में डायोजिनस नामक एक श्रेष्ठ दार्शनिक पैदा हुआ जिसे हम सादगी का सर्वश्रेष्ठ आदर्श मान सकते हैं। वह केवल एकमात्र वस्त्र पहनता था। वह एक पीपे में रहता था। पानी पीने के लिए उसके पास केवल एक प्याला था। नदी किनारे घूमते समय उसने एक मनुष्य को देखा जो अपने हाथों की अंजुली से पानी पी रहा था। बस ! डायोजिनस महोदय ने अपने हाथ में रखे प्याले को तुरन्त नदी के पानी में फेंक दिया और उस बेकार के बोझ से अपने को मुक्त कर दिया। सिकंदर महान (Alexander The Great) ने उससे मिलने की इच्छा प्रदर्शित कर उसे बुलाया। लेकिन डायोजिनस ने उस निमंत्रण को अस्वीकार कर दिया। फिर सम्राट खुद होकर उससे मिलने गया। उस समय ये महोदय सवेरे की सुखद धूप के मजे ले रहे थे। सम्राट ने कहा, "I am Alex–ander The Great" "मैं सिकंदर महान् हूँ।" (इस पर जवाब आया, "I am Digenous the Dog." "मैं डायोजिनस कुत्ता हूँ।" सम्राट ने कहा, "जो भी कुछ चाहते हैं, मूझसे माँग लीजिए।" कल्पना कीजिए की उसने क्या माँग लिया होगा ? धन-दौलत, घर-बार ? डायोजिनस ने जो कुछ माँगा वह इस प्रकार है, "तुम्हारे मेरे सम्मुख खड़े रहने से धूप अड़ रहीं है। अतः कृपया दूर हो जाओ।" बस ! इतनाही उसने माँग लिया। "निःस्पृहस्य तृणं जगत्" यह वचन सार्थ है। इस्लाम धर्म के भीतर सुफी नामक एक संप्रदाय है। उनकी विचारधारा और स्टोईक विचारधारा में वडी समानता है। जिस दिन सूफी साधु अन्न ग्रहण नहीं करता, उस दिन वह एक कंकड़ अपनी अंटी में रख देता। जब बहुतसे साधु इकट्ठे हो जाते, तब इन कंकडों की गिनती हो जाती; और जिसके पास सर्वाधिक कंकड़ पाए जाते थे, वह सर्वाधिक सुखी माना जाता था। भगवान श्री ईसा मसीह से उनके एक शिष्य ने पूछा, "भगवान्! परलोक में स्थान पाने के लिए मुझे क्या करना चाहिए?" ईसा ने कहा, "देख ! परलोक के बारे में तेरे मन में यदि सचमुच दिलचस्पी हो तो अपनी सारी संपत्ति, घर-बार, खेतीवारी आदि को दान में देकर, बीवी-बच्चों के मोहपाश को तोड़ कर, बिलकुल कंगाल अवस्था में मेरे पास आ जा।" भगवान् ईसा स्पष्ट रूप से बताते थे कि सुझी के सुराख से ऊंट निकल जा सकता है लेकिन धनी आदमी को स्वर्ग में स्थान मिलना बिलकुल असंभव है ! धन पाना सभी के बस की वात नहीं है। लेकिन सादगी को तो सभी अपना सकते हैं।

आजकल अनुपयुक्त लेकिन महँगी चीजों को खरीदने की होड़ सी लगी है। उसी प्रकार नए नए विचित्र फैशनों का प्रभाव भी बढ़ता जा रहा है। यह गंभीर समस्या है। जिनकी आर्थिक क्षमता नहीं है वे लोग भी टैरिलिन के वस्त्र पहनते हैं। अपनी गृहिणी के हाथो बनी चीजों का आस्वाद लेने के बजाय होटल की सस्ती बाजारू चीजों के लिए पागल लोगों की संख्या दिन ब दिन बढ़ती जा रही है। क्लर्की करनेवाले की पत्नी सौ-डेढ़ सौ की साडी पहनने के लिए जिद करती है। पेट काटकर इतना ही नहीं तो कर्ज लेकर भी सिनेमा, नाटक देखनेवालों की कमी नहीं है। यह रही निम्न तथा मध्य श्रेणी के लोगों की हकिकत। धनी-मानी उच्च स्तर के लोग तो और भी आगे बढ़ चुके हैं। उनके गद्देदार पलंग, अलमारियाँ, महंगे रेडियो-सेट, टी. व्ही. सेट, महँगे वस्त्राभूषण तथा ऊँचा भोजन आदि को देखकर लगता है कि अरेरे ! बेचारे कितने दुःखी हैं। भोगरूपी पिशाच का साया जिन के ऊपर हैं वे कब और कैसे सुखी हो सकते हैं? उनका घमंड, दूसरों के प्रति प्रकट होनेवाला हीनता का भाव, क्रोध तथा बेजिम्मेदारी को देखकर सोच-समझने-वाले व्यक्ति के मन में उनके प्रति घृणा का भाव पैदा होता है। ये धनी लोग आलसी होते हैं। व्यायाम से मुँह मोड़ लेते हैं। फलस्वरूप अग्निमांद्य आदि व्याधियों का शिकार बन जाते हैं। हर दिन मीठी चीजें खाने से सुस्ती भी बढ़ जाती है। फुर्संत का समय व्यतीत करने के लिए सज्जनोचित मार्ग से दूर होने के कारण अनाचार में फँस जाते हैं। यहाँ तक की स्त्रियाँ भी अपनी मर्यादा को छोड़ देती हैं। अपने स्वार्थ के लिए ये धनी लोग बड़े बड़े अफसरों तथा मंत्रियों को आलीशान होटलों में पार्टियाँ देते हैं। लेकिन कोई विद्वान् उनसे मिलने आए तो दुत्कार देते हैं। मेरी बंबई यात्रा के दरमियान एक सिंधी धनी व्यक्ति ने मुझे दावत दी। वे मुझसे अपनी जन्मपत्रिका पढ़ा लेना चाहते थे। भोजन के लिए पच्चीस-तीस खास खास चीजें बनवाई गई थीं। लेकिन उस सज्जन पर क्या सनक सवार हो गई मालूम नहीं। उन्होंने आलु की भजियाँ बनवाने का हुक्म दे दिया ! इतने ऊँचे व्यंजन सामने परोसे जाने के बाद भी उन्हें भजियाँ याद आईं ! जिव्हा-लौल्य, तेरी जय हो !

भोग, विलासिता, ऐशोआराम दुःखों की जड़ है। सादगी और बचत सुखी जीवन की आधारशिला है। समाज के इनेगिने बड़ी आमदनीवालों को छोड़ दीजिए। बाकी सारे लोग तो घर-गृहस्थी की चक्की पीसते पीसते और जोड़ गाँठ करते करते त्राहि त्राहि पुकारते हैं। आय और व्यय गृहस्थीरूपी रथ के दो पहिये हैं। लेकिन व्यय के पहिये की गति इतनी अधिक होती है कि रथ में बैठे मुसाफिरों की हड्डियाँ नरम हो जाती हैं। नौकरी अथवा मुख्य धंधे के साथ कुछ जोड़ धंदा करने के लिए भी समय नहीं मिलता। अब गृहस्थी चलाने के लिए किसी का पेट तो नहीं काट सकते हैं। ऐसी परिस्थितियों में जो वाजिब है उस खर्च को रखकर

फालतू बातों पर होनेवाले खर्च को तुरन्त रोक देना चाहिए। सीमित आय में भी परिवार को सुखी करने की कुँजी है बचत ! ऐशोआराम के जीवन की नकल करना परेशानी का भंडार बन जाता है। नए नए फैशनों, आभूषणों, तथा चलचित्र देखने जैसी बातों की नकल करने में स्त्रियाँ अग्रसर होती हैं। शादी-व्याह के समारोह में अमीरों की औरतों के महंगे वस्त्राभूषणों को देखकर खेद करनेवाली गरीब अथवा मध्य श्रेणी की महिलाएँ बडी संख्या में दिखाई देती है। चाँद-सूरज की चमक से भी चाँदी के रुपये की चमक मन को अधिक लुभाती है। विद्वत्ता, चरित्र आदि गुणों का मूल्य घटता जा रहा है। फिर भी महलों के ऊँचे पक्वान्नों की अपेक्षा मुझे गरीब लेकिन ईमानदार मजदूर या खेतिहर की झोपड़ी में बनी रोटी ही अच्छी लगती है।

घर-गृहस्थी चलाने के लिए बहुत अधिक रुपये-पैसों की आवश्यकता होती है ऐसी बात नहीं। बहुत साल से अपनी आय–व्यय का लेखा–जोखा रखने की मेरी आदत है। इसके आधार पर मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि किसी की भी व्यय में से पच्चीस प्रतिशत व्यय केवल फिजूलखर्ची है। यह पच्चीस प्रति शत खर्च केवल प्रतिष्ठा दिखाने के लिए बेकार की चीजें खरीदने के लिए होता है। सीमित आमदनीवाले लोगों को चाहिए कि वे जीवनावश्यक चीजों को ही खरीदें। पति-पत्नी और दो बच्चेवाला परिवार करीब तीन सौ में गुजर कर सकता है। घर-गृहस्थी चलाते समय बचत का महत्त्व स्पष्ट करनेवाली " Money saved is money gained ! " कहावत को हमेशा याद रखना चाहिए।

कभी कभी पति–पत्नी के रिश्ते में एक दरार-सी पड़ जाती है। इसके कई कारण हो सकते हैं। कभी कभी दो व्यक्तियों के स्वभाव में बहुत फर्क होता है। अथवा पति के स्वभाव में औध्दत्य बहुत अधिक मात्रा में होता है और वह हमेशा अपनी पत्नी का अपमान करते रहता है। पत्नी अर्धांगिनी है। वह जीवनसाथी है। उसकी प्रतिष्ठा का खयाल करना पति का परम कर्तव्य है। अपनी आर्थिक सीमा-मर्यादा को जानकर उसे खुश रखना, उसके दिल को बहलाना भी पति का कर्तव्य है। क्षुद्र बातों को लेकर अपनी धर्मपत्नी का त्याग करनेवाले भी बड़ी संख्या में पाए जाते हैं। ऐसे बेजिम्मेवरों से पूछना चाहिए कि, " तुम्हारी बहिन अथवा लड़की का त्याग किसने किया होता तो तुम्हें कैसे लगता ? " पत्नी से प्यार और आदर-युक्त वर्ताव करना, संकटकाल में उसकी सलाह लेना, बच्चों से प्यार का वर्ताव करना आदि ऐसे तरिके हैं जिनके कारण घर की चहार दीवारियों में स्वर्ग उतर आता है !

ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धा तथा सत् चरित्र सुखी जीवन के स्रोत हैं। परधन और परस्त्री के बारें में पूर्ण अनासक्ति सत् चरित्र के लक्ष्मण हैं। घूसखोरी तथा कालाबाजार से धन कमानेवाला मनुष्य सुखी नहीं हो सकता। वह दिनरात

बेचैन रहता है। चिंता उसे चिता से भी अधिक जलाती है। वह बीसों निम्न श्रेणी के लोगों का गुलाम बन जाता है। स्वादिष्ट भोजन भी उसे अरुचिपूर्ण लगता हैं। वह न सोता है, न जागता है। अपनी बनाई उलझनों में फँसा रहता है। इस दशा का नाम सुखी जीवन नहीं है। परस्त्री-अभिलाषा के बारे में और कुछ कहने की आवश्यकता ही नहीं। परस्त्री की आसक्ति रखनेवाला मनुष्य अपने व्यक्तिगत जीवन के साथ न केवल अपनी घर-गृहस्थी को तबाह कर देता है, उस स्त्री के जीवन को भी मिट्टी में मिला देता है। अन्त में वह न घाट का रह जाता है, न घर का। इस बुराई में फँसने के पहले वह यह नहीं सोचता कि अगर उसकी पत्नी को भी कोई पराया पुरुष बुराई की राह दिखाए तो? पतिभक्ति और एक-पत्नीत्व दांपत्यजीवन के महान भूषण हैं। काम-वासना को पूर्ण रूपेण जीत लेना जनसाधारण के लिए असंभव है। महानतम् ऋषि भी कामदेव की बाधा से कुछ का कुछ कर बैठे। फिर भी सन्त कबीर की "मन जावे तो जाने दो, मत जाने दो शरीर!" इस उक्ति को हमेशा याद कर अपने जीवन को सदा पवित्र रखने की कोशिश करते रहना चाहिए। इस उपाय से चरित्र बनता है।

ईश्वर के अस्तित्व को न माननेवाला मनुष्य आँखों के रहते हुए भी अंधा है। अंधा मनुष्य सूर्य के दर्शन नहीं कर सकता। अतः सूर्य के बारे में वह अज्ञ ठहरता है। नास्तिक भी ईश्वर के अस्तित्व के बारे में अज्ञ है। आस्तिक और नास्तिक का भेद ईश्वर के संकल्प का फल है। नास्तिक की अपेक्षा, भगवान् पर श्रद्धा रखनेवाला आस्तिक अधिक सुखी हो जाता है। नास्तिक की हर कृति के पीछे अहंभाव रहता है। अत: भगवान के आशीर्वाद के अभाव में उनके संकल्प असफल रह जाते हैं। सुंदर प्राणहीन शरीर के समान नास्तिक के ईश्वरी आशीर्वादरहीत संकल्प बेकार हो जाते हैं। सच्चे विद्वान्, योद्धागण, राजा तथा संत-महात्मा अपनी महानता का श्रेय ईश्वर की कृपा को दे डालते हैं। छत्रपती शिवाजी महाराज देवी भवानी माता के आदेश के बगैर एक कदम भी आगे नहीं बढ़ाते थे। जगज्जेता सम्राट नेपोलियन पूर्ण आस्तिक था और अपने जीवन की हर घटना को ईश्वर की इच्छा मानता था। अपने अहंकार को नष्ट कर भगवान श्री रामकृष्ण परमहंस जैसी विभूति ने भी अपने जीवन के सूत्र "माँ" के हाथों में सौंप दिए थे। जहाँ दिव्यत्व के दर्शन होते हैं वहाँ ईश्वर है, इस सिद्धान्त को पहचान कर उस दिव्यत्व के आगे नम्र होने में मनुष्य का हित है।

ईशकृपा का आविष्कार कैसे होता है? ईशकृपा को प्राप्त करने के क्या उपाय हैं? भगवान जो भी कुछ दिखाएंगे उसी का स्वागत करना, यही सच्चा भगवद्भाव है। यही भक्ति है। ईश्वर की कड़ी आराधना करने के बाद भी भक्तों पर संकटों के पहाड़ गिर पड़ते दिखाई देते हैं। ऐसी परिस्थितियों में उनकी श्रद्धा का डाँवाडोल हो जाना स्वाभाविक है। लेकिन इन संकटों को भी भगवान्

की लीला, अथवा भक्त की श्रद्धा की कसौटी मानकर अपने मन को सन्तुलित रखना है। जो संकट की आँधियाँ आई हैं, वे चली जाएंगीं, इस श्रद्धा को नहीं छोड़ना है। संसार में जो सुखदुःख है वह भगवान का सृजन है। अतः स्थितप्रज्ञ की भाँति दोनों का स्वागत करते रहना चाहिए। संकटों में भी जो भगवान् को याद करता है, दोष नहीं देता, वही सच्चा भक्त है। " Those also serve him best who only stand and wait." इस पंक्ति को नहीं भूलना है।

फिर भी एक प्रश्न शेष रह जाता है। वह यह है कि व्यावहारिक स्तर पर ईश्वर को कैसे प्राप्त किया जा सकता है ? मैं जो कुछ बता रहा हूँ वह सब श्रद्धावान् आस्तिकों के लिए उपयुक्त है। अपने कमरे में अथवा रसोई-घर में अपने इष्ट देवता की तस्वीर उत्तराभिमुख स्थिति में दीवार पर लगाइए। गीले कपडे से उसकी काँच को हर दिन पोंछते रहिए। सुवह-शाम उसपर फूल चढ़ाकर धूपबत्ती जलाइए। इससे आगे पूजाविधि को न बढाइए। अब मैं अत्यन्त महत्वपूर्ण बात बता रहा हूँ। उस देवता को अपने परिवार का पालनहार मानकर आप सभी लोग उसकी कृपा के सहारे जीवन बितानेवाले बालक हैं ऐसी श्रद्धा मन में जगाइए। किसी कामकाज के लिए घर छोडते समय उसी इष्ट देवता को प्रणाम कर सफलता के लिए प्रार्थना कीजिए। भोंजन के समय थाली को स्पर्श कर उस देवता को निमंत्रित कर, अपने भोजन को उसीका ही प्रसाद मानकर ग्रहण कीजिए। त्योहार अथवा पर्व विशेष पर इस इष्ट का जरा और अच्छे ढंस से पूजन कीजिए। दिनरात मन में सोचते रहिए कि यह घर-गृहस्थी, खेतीवाडी, नौकरी–चाकरी सबकुछ इसी इष्ट देवता का है। सभी सूत्र इसके हाथों में हैं। यह भाव जितना अधिक दृढ़ बनता जाएगा, उतनी अधिक मात्रा में उसके अद्भुत फल मिलते जाएंगे।

एक और भी उपाय है: गुरुवार अथवा पूनम के दिन बरगद, पीपल और उदुंबर (गूलर) की वित्तेभर लंबी लकडियाँ लाइए। ये लकडियाँ उत्तर दिशा की ओर की हों। उनको हाथों से तोड़िए। चाकू आदि शस्त्रों का प्रयोग न करिए। घर आने पर एक चौकी पर थोड़ीसी भस्मी फैलाकर उसके ऊपर उन लकडियों को रख दीजिए। इन लकडियों को मच्छिद्रनाथ, गोरखनाथ और कानिफनाथ ऐसे तीन नाथसाधुओं के प्रतीक मान लीजिए। हमेशा की तरह इन लकडियों का भी पूजन कर, एक पीले रंग के डोरे में उनको लपेट लीजिए। नीले रंग की रेशम के कपडे की एक छोटी थैली वनवाकर उसमें इन लकड़ियों को रख दीजिए। थैली का मुँह बन्द करा दीजिए। उस दिन मूँग की खिचडी, बड़े, सेम की सब्जी, दही आदि का भोग लगा कर परिवार के साथ भोजन कीजिए। इस भोजन में से कुछ भी किसी और को न दीजिए। उसी तरह कुछ भी बचाकर न रखिए। उस दिन रात के समय भोजन न कीजिए। शाम के समय

उस थैली को उठाकर किसी पवित्र स्थान पर रख दीजिए। रजोदर्शन के दर-मियान स्त्री की छाया भी उस पर न पडे। गृहपति अथवा घर की मालकिन स्नान के बाद "ॐ चैतन्य मच्छिद्रनाथाय नम:" "ॐ चैतन्य गोरक्षनाथाय नम:" और "ॐ चैतन्य कानिफनाथाय नम:" इन तीन मंत्रों का (हर मंत्र का सात बार) जप करे। गुरुवार (बृहस्पति–वार) के दिन वह उपवास भी करे। वरुथिनी एकादशी के दिन, जिस घर में यह पूजा-पाठ चलता है, वहाँ इन तीन नाथसाधुओं का वास होता है, ऐसी श्रद्धा लोगों में प्रंचलित है। वरुथिनी एकादशी के दिन घर को साफ सुथरा रखिए। हो सके तो ताजे गोबर से लीपिए। गोमूत्र को छिडकाइए और उस थैली की मन:पूर्वक पूजा कीजिए। अगरवत्ती, लोहबान, धूपवत्ती, इत्र, फूल आदि सुगंधित चीजों के प्रयोग से वातावरण को सुगंधित बनाइए। इस दिन भी ऊपर बताए ढंग से भोजन पकाइए। मन में हमेशा इस श्रद्धा को जगाते रहिए कि आपके घर में तीन महान् साधु-महात्माओं का निवास है। और वे ही आपकी घर-गृहस्थी को चलाते हैं। ज्यों ज्यों यह श्रद्धा दृढ़ बनती जाएगी, त्यों-ही-त्यों आप अद्भुत बातों को अनुभव करने लगेंगे। इस साधना का रहस्योद्घाटन् मेरे गुरुदेव पूज्य बावाजीने पहली बार मेरे पास किया था। आज मैं भी पहली बार मेरे प्रिय पाठकों के लिए इस साधना को इस ग्रंथ के माध्यम से प्रकट कर रहा हूँ। इस साधना से बालबच्चों की छोटी-मोटी बीमारियाँ, भूतप्रेत की बाधा, दारिद्रय नष्ट हो कर गृहस्थ का घर मंगलधाम बन जाता है। उसमें एक दिव्य शक्ति वास करती है। यह मेरा अनुभव रहा है। जो व्यक्ति (खास कर के महिलाएँ) भयानक सपनों से मानसिक स्वास्थ्य खो बैठे हैं, वे इस थैली को सोते समय अपने सिरहाने रखें। बुरे सपने रुक जाते हैं। ड़र नष्ट होता हैं। लेकिन रजोदर्शन के समय स्त्रियाँ इस थैली को स्पर्श न करें।

जीवन की तीसरी अवस्था वृद्धावस्था है। इसको सुखपूर्ण बनाने के उपाय को बताना चाहता हूँ। वृद्धत्व कभी कभी शाप बन जाता है। उस वृद्ध को भी और वह जिस परिवार का सदस्य है उसको भी। वृद्धावस्था में आते तक जीवन भर के मित्रों, रिश्तेदारों, पड़ोसियों में से एक एक बिछुड़ जाता है। कभी कभी पत्नी का भी हमेशा के लिए वियोग हो जाता है। कुछ खास कामकाज न होने से समय काटना एक बड़ी समस्या बन जाता है। अधिकार समाप्त होने के कारण पहले खुशामद करनेवाले लोग भूलकर भी वृद्ध मनुष्य की पूछताछ नहीं करते। भूतकाल की यादों के कारण मन और भी बेचैन हो जाता है। परिस्थितियाँ बड़ी विचित्र बन जाती हैं। कैसे जिया जाय? जो भी मेरे पाठक वृद्ध हैं, उनसे मेरा निवेदन है कि मैं खुद बूढ़ा हो चुका हूँ। अत: जो आपकी समस्याएँ हैं वे ही मेरी समस्याएँ हैं। अत: मैं आपका मार्गदर्शन करने के लिए थोड़ासा अधिक योग्य हूँ। लेकिन यह मेरा दावा नहीं है। एक नम्र निवेदन है।

मेरी पहली सलाह यह है कि आप अपनी देह को सम्हालिए। बुढ़ापे में मनुष्य बड़ा चटोर बनता है। उसका जिव्हालौल्य बढ़ जाता है। लेकिन खाने-पीने की इस इच्छा पर रोक लगा देना चाहिए। क्योंकि बुढ़ापे में अग्नि (पाचन क्रिया) मंद हो जाती है। रात का भोजन होने के बाद गरम पानी के साथ त्रिफला चूर्ण अवश्य लेते रहिए। सोने के पहले भगवत् नामस्मरण करने के नियम को कभी भी खंडित न कीजिए।

वृद्ध और युवा पीढी में दरार-सी पड़ जाती है। अँग्रेजी में इसे जनरेशन गैप (Generation Gap) कहते हैं। हर पीढी में यह पायी जाती है। आपके लडके-लडकियाँ, इतना ही नहीं तो समस्त युवावर्ग जो कुछ करता है, आप उसे पसन्द नहीं कर पाते। आपको पसंद रहे या न रहे, युवावर्ग के प्रति घृणा के भाव को प्रदर्शित न करें। मेरे अनुभव के आधार पर कहूँगा कि आप हमउम्र या उम्र में आपसे बढ़े लोगों से मेलजोल रखिए। इससे अनावश्यक वैचारिक संघर्ष टल जाता है। हर दिन किसी धार्मिक या उपयुक्त ग्रंथ का पठन करते रहिए। गीता, भागवत्, रामचरितमानस बुढ़ापे का सहारा है। मृत्यु एक स्वाभाविक और अटल घटना होनें के कारण उसके बारे में कुछ भी न सोचिए। ऐसा करने से मृत्यु का ड़र चला जाता है।

अपने बुढ़ापे में आप जिस व्यक्ति के आधार पर दिन काटते हैं, उसकी बातों में कभी भी दखल न दीजिए। उसे उपदेश देने के मोह से बचे रहिए। आपका बर्ताव ऐसा न हो कि जिससे और लोगों की परेशानी बढ़ जाए। समय बेसमय चाय बनवाने का हुक्म देना, खाने-पीने में अपनी पसंद-नापसंद को अधिक महत्त्व देता, आदि बातों से और लोगों के मन में आपके प्रति होनेवाली सहानुभूति घटने लगती है। आपके युवा लड़के जब अपने हमउम्र साथियों से गपशप करते हैं तब आप वहाँ ज्यादा समय न बैठिए। कोई बीमारी सही मतलब में महसूस करने पर डाक्टर के पास ज़रूर जाइए। लेकिन हर दिन दवा की बोतल उठाकर डाक्टर के पास जाने से कुछ भी फायदा नहीं होता। कुछ मामुली पीड़ाओं को सहते जाने से कुछ भी नुकसान नहीं होता। आप बहुत ही थोडे समय के मेहमान हैं, इस सत्य को पहचान कर इस बात का खयाल करते रहे कि आपका अस्तित्व किसी को न चूभे। परिस्थितियों को पहचान कर, तीर्थाटन, ग्रंथपठन, ईशचिंतन आदि में समय बिताने से बुढ़ापे में भी मनुष्य सुखी हो जाता है। बुढ़ापा याने मृत्यु ऐसा सोचकर अपनी और अन्य लोगों की परेशानियों को न बढाइए। बुढ़ापे में शरीर और मन थक जाता जाता है। बुद्धि सोच नहीं सकती। लेकिन याद रखिए कि शरीर, मन और बुद्धि साधनमात्र हैं। जो आत्मा है वह व्याधिरहित है। अतः मैं सत्-चित्-आनंद-घनस्वरूप हूँ (अहम् ब्रह्मास्मि) इस भाव को मन में रखते रहिए। इससे बुढापे में परम शांति का लाभ होगा।

□ □ □

. २४ .

जीवन्मुक्ति

यह दृश्य-जगत् और द्रष्टा मनुष्य दोनों भी वास्तव हैं, इस दृष्टिकोन को अपना कर मैंने इस ग्रंथ की रचना की है। अतः मन को शक्तिशाली बनाना, व्यावहारिक कामनाओं को सफल बनाना, समाज में प्रभाव जमाना आदि आदि के बारे में मैं दीर्घ चर्चा कर चुका हूँ।

लेकिन ऐसे भी व्यक्ति समाज में होते हैं जो इस सृष्टि की जड़ में होनेवाले अनादि अनंत शाश्वत सत्तत्त्व को जानने के लिए उत्कंठित हैं। ऐसे जिज्ञासु साधकों के लिए सर्वसाधारण चार तरीकों का पूरा विवेचन यहाँ देने का मेरा इरादा है। अपनी समज और शक्ति के अनुसार उन साधनाओं में से एकाद साधना को अपनाने से जीवन्मुक्ति का सुख मिल सकता है। यह विषय कुछ हद तक समझने के लिए कठिन मालूम पडेगा। फिर इसे गौर से पढ़ने के बाद इसकी कठिनता दूर हो जाएगी। और इस साधना को अपनाने से अवश्यमेव लाभ होगा।

सुखप्राप्ति और दुःखमुक्ति के हेतु मनुष्य आजीवन दौड-धूप करता रहता है। और इसका कारण भी उसकी जगत् सत्यत्वबुद्धि है। धर्मशास्त्र अथवा-दर्शन कुछ भी कहे, यह संसार ही जनसाधारण के लिए सत्य है। यह जगत् झूठ है, उसमें विचरनेवाला जीवरूप " तू " भी झूठ है, और जीव-जगत् जैसे झूठ का निर्माता " ईश्वर " भी झूठ है, इस प्रकार उसे समझाने पर भी वह नहीं मानेगा। उसकी नजरों में ऐसी बातें करनेवाला पागल सिद्ध होगा। वह प्रतिप्रश्न करेगा– "देखो भई, सूर्यचंद्रादि ग्रह, यह संसार, धरातल पर चरनेविचरनेवाले जीवजंतु, रम्य वन-उपवन, आसमान से बातें करनेवाले पहाड़, नदियाँ, महासागर आदि आदि बातें और उनको देखनेवाला " मैं " अनुभवसिद्ध होने पर भी तुम उसे असत्य साबित करने जा रहे हो ? आश्चर्य है। "

यह सृष्टि परिवर्तनशील है। आज हम जिसे देख रहे है, वह वस्तु कुछ

समय के बाद नष्ट हो जाती है। पैदा होना, कुछ समय टिकना और अन्त में नष्ट होना यह सृष्टि का जड़ नियम है। उत्पत्ति, स्थिति और लय के नियम से सृष्टि भी क्षणभंगुर है। अतः ऐसी क्षणभंगुर सृष्टि को सत्य कैसे माना जा सकता है! सत्य वह है जो अनादि है। सत्य वह है जो अनन्त है। सत्य वह है जो शाश्वत है। सत्य वह है जो अपरिवर्तनीय है। ऐसी सत्य वस्तु एकमेवाद्वितीयम् परब्रह्म है। इसे "एक" भी नहीं कह सकते। क्योंकि "अनेक" की तुलना में एक का ज्ञान होता है। लेकिन परमात्मस्वरूप में अनेकत्व ही का अभाव है। अतः उसे एक भी कैसे कहा जा सकता है? अतः परमात्वस्वरूप के ऊपर दृश्य और द्रष्टा यह भ्रममात्र है। आभासमात्र है। इसको सिद्ध करनेवाले श्रुतिवचन विख्यात हैं। उदा. "सर्वं खलु इदं ब्रह्म", "नेह नानास्ति किंचन" आदि।

मनुष्य वास्तव में चैतन्यरूप परमात्मा का अंश है। लेकिन ऐसा होते हुए भी मनुष्य अपनी देह से इतना एकरूप हो जाता है कि वह "देह" को ही "मैं" मान बैठता है। इसे ही "देहतादात्म्य" कहते है। गहरी निद्रा में से जागने के बाद केवल क्षणभर के लिए "मैं" का शुद्ध ज्ञान होता है। उस ज्ञान में "मैं अमुक व्यक्ति हूँ" ऐसा भाव नहीं होता। इस दृश्यरहित "मैं" के बोध को ही मूल माया कहते हैं। वास्तव में देखा जाय तो परब्रह्म स्वरूप को भी "मैं" इस बोध की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि उसे छोड़कर अन्य सभी का उसमें अ-भाव रहता है। "मैं" कल्पना "तू" कल्पना की तुलना में सिद्ध होती है। "मैं" का अस्तित्व "तू" पर निर्भर है। आगे चल कर "मैं" मन में प्रतिबिंवित होता है और वह प्रतिबिंब ही "मैं" बन जाता है। इसे ही जीवदशा कहते हैं। इस अवस्था में देह जिन सुख-दुखों का अनुभव करता है, वे मेरे ही अनुभव की सृष्टि है ऐसा जीव समझता है और सुख-विलास के पीछे दौड़ पडता है। इस "बोध" के कल्पित देह से प्रस्थापित संबंध को जगद्भाव कहते हैं। जब तक स्वप्न-द्रष्टा का अस्तित्व है, तबतक ही स्वप्नदृश्य भासमान होता है। नींद खुलने पर मनुष्य जाग्रतावस्था में आ जाता है और स्वप्नदृश्य और उसे देखनेवाला स्वप्नद्रष्टा सब नष्ट हो जाते हैं। अतः विश्वद्रष्टा जीव को ही नष्ट करने पर द्रष्टासहित दृश्यरूपी जगत् का नाश होकर नीचे मूल चैतन्य शेष रहेगा। इसे ही "ब्राह्मी" स्थिति कहते हैं। यही "सा काष्टा सा परागति," है। यही "यद गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम" ऐसा शाश्वत स्थान है। यही भूमा-स्वरूप। "यो वै भूमा तत्सुखं नाल्पे सुखमस्ति" इस तरह योगिराज ब्रह्मर्षि नारदजी ने सनत्कुमार को उपदेश दिया था। सर्वत्र "मैं" हूँ, "मेरे" ही सत्य, ज्ञान, अनंत ब्रह्मस्वरूप के ऊपर अनंत कोटी ब्रह्मांड भासमान हो रहे हैं। इस अनुभव का नाम है भूमा होना। यह स्थिति सुख-दुःखों के परे है। "मैं" देह नहीं हूँ। सर्वव्यापी परमात्मा हूँ। मेरे स्वरूप में अन्य कुछ भी नहीं हैं। इल तरह के अनुभव का जो स्वामी है, ऐसा

महात्मा दुर्लभ। रज्जु में साँप दिखाई देता है। लेकिन रज्जु को इसका ज्ञान नहीं होता। सूरज की किरणों के कारण मृगजल दृश्यमान होता है। लेकिन सूरज इस बात को जानता तक नहीं। उसी तरह ज्ञानी महात्मा इस बात को नहीं जानता कि उसके ब्रह्मस्वरूप पर विश्व नामक कोई वस्तु भासमान हो रही है। इसे "ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति" कहते है। इस दशा को शास्त्रों में तुर्यगा अवस्था कहते हैं। इस अवस्था में ज्ञानी का मन विसर्जित हो जाता है। अतः चैतन्य का प्रतिबिंब जिसमें प्रकट होगा ऐसा साधन ही नष्ट हो जाता है। और जीव-दशा के अभाव में जगत् का ज्ञान भी नहीं होता। ' जाग्रती, स्वप्न, सुषुप्ती और तुर्या ऐसी मन की चार अवस्थाएँ (स्थितियाँ, दशाएँ) होती हैं। लेकिन "तुर्यगा" मन की पाँचवी स्थिति नहीं है। क्यों कि यहाँ मन का पूर्णरूपेण अभाव ही है। मन नहीं है, तो फिर उसकी अवस्था कहाँ? इस तुर्यगा के पहले तुर्यावस्था होती है। तुर्यावस्था में "मैं" का ज्ञान रहता है। तुर्यगा में ऐसा कुछ भी नहीं होता। वह ज्ञान-अज्ञान, बोध-अबोध के परे है। पाठकों को समझाने के लिए मैं इतना ही बता सकता हूँ कि तुर्यावस्था की अति परिपक्व अवस्था तुर्यगा है।

तुर्यावस्था में सृष्टि संबंधी ज्ञान का अभाव रहता है। "मेरे" सहित यह विश्व चैतन्यस्वरूप है ऐसा अनुभव तुर्यावस्था में हो जाता है। अतः इस अनुभव को हासील करने के बाद जब योगी की समाधि भंग होती है तब उसे यह सृष्टि फिरसे भासमान होने लगती है। ऐसा होते हुए भी पूर्वानुभव के आधार पर वह उसे चैतन्यस्वरूप ही मानता है। अतः वह उसके आत्मस्वरूप का ही आविष्कार है इसका ज्ञान उसे तुरन्त होता हैं। "वसुधैव कुटुम्बकम्" ऐसी उसकी धारणा होती हैं। चैतन्य शाश्वत है; जरा-मृत्युरहित और सत्-चित्-आनंदघन-स्वरूप है; और वही मेरा स्वरूप है, इस अनुभूति के बाद उसे न व्याधियों का ड़र रहता है, न मृत्यु का। वह सुख-दुःख देह के परे हो जाता है। सुख-दुःख देह के ऊपर भासमान होते हैं। और देह नामक कल्पना मेरे चैतन्यस्वरूप के ऊपर भासमान होती है। अतः मेरा उससे कोई लेनादेना नहीं इस भाव में वह स्थिर हो जाता है। साँप अपनी केंचुली को फेंक देता है और उसे पूर्णरूपेण भूल जाता है। उस त्वचा को लोग छिन्न-विच्छिन्न भी कर दें तो साँप को उसका किंचित् भी ज्ञान नहीं होता। उसी प्रकार देहभाव को पूर्णरूपेण भूलने पर उसे होनेवाले सुख-दुःखों का ज्ञान मुक्तात्मा को नहीं होता। लोग देखते है कि योगी सब कुछ कर रहा है। लेकिन ग्रयोगी उनके परे होता हैं। उसे ऐसी बातों का ज्ञान तक नहीं होता। हम सपने में देखते हैं कि मित्र से हमारा झगड़ा हो गया। मित्र हम से घायल हो गया। लेकिन जाग्रतावस्था में होनेवाले मित्र को इनमें सें किसी का भी पता नहीं होता! उसी तरह ज्ञानीं की सभी क्रियाओं को दुनिया देखती है, लेकिन ज्ञानी उनके बारे में कुछ भी नहीं जानता। वह उनके परे होता है।

स्वप्नदेह नष्ट होते ही स्वप्न भी नष्ट होता है और मनुष्य की नींद भी खुलती है। स्वप्न देह कैसे नष्ट होता है ? हो सकता हैं कि स्वप्न में देखे भयानक दृश्य के प्रभाव से उसका स्वप्न-देह नष्ट हो गया हो। अथवा किसी के जगाने से या स्वप्न के समाप्त होने पर भी गहरी निद्रा समाप्त न होने से वह स्वप्नदेह नष्ट हो गया हो। ये तीनों भी कारण सही हो सकते हैं। वहुत बार ऐसा होता है कि हमारी गहरी नींद एकाएक खुलती है और हम चिल्लाते हुए जागते है। पास में सोनेवाले पूछते हैं, " सपने में ड़र गए क्या ?" हम वताते हैं " सपने में किसी चोर ने मेरा गला दवाया। मैं चिल्लाने लगा और इतने में मेरी नींद खुल गई।" अज्ञान के कारण मनुष्य संकट मे फँस जाता है। जीवन असह्य हो जाता है। फलस्वरूप वह खुदकुशी की बात सोचने लगता है। इसी का ही अर्थ है कि वह इस देह को असहय बोझ समझता है। अथवा यह भी संभावना रहती है कि वह घर-गृहस्थी को छोड़ निवृत्तिवादी बन जाता है और वाकी जीवन ईश्वर की साधना में व्यतीत करता है। ईश्वर-स्मरण करने का अर्थ है धीरे धीरे, कदम व कदम जीवदशा को नष्ट कर परमात्म स्वरूप में घूल-मिल जाना। जीवदशा को समाप्त करने के लिए आत्महत्या यह उचित मार्ग नहीं। आत्यहत्त्या से शरीर नष्ट होगा। लेकिन जन्म-मृत्यु के चक्र से जीव मुक्त नहीं होगा। एक सपना खत्म होकर दूसरा शुरू होगा! महान् संकटों के कारण मनुष्य अनजाने में लेकिन सही अर्थ में परमात्मा की ओर आकर्षित हो जाता है। इसीलिए ही महान सन्तों ने भगवान् के पास संकटों की माँग की है। संकटों और दुःखों की परंपरा में ही मनुष्य भगवान को याद करता है। फूलों की शय्या पर पले किसी अमीर के घर पर ऐशो-आराम के सभी साधन हाज़िर हैं, दरवाजे पर मोटरें खड़ी हैं, नोकर हैं, चाकर हैं, सलाहकार हैं, खुशामदी टट्टू भी हैं। तो फिर वह भगवान् को कव और कैसे याद करेगा? लेकिन उस अमीर का एकलौता वेटा बीमार पड़ जाता है। रोग असाध्य मालूम पड़ता है। इलाज के लिए डाक्टरों का ताँता लग जाता है। तजूरवेकार डाक्टर भी हार मानते हैं। तो फिर उस धनि की लाख रुपए कि आलीशान इम्पाला गाड़ी किसी ज्योतिषी के दरवाजे पर खड़ी होती है। किसी साधु की खोज होती है। घर मे पूजा-पाठ चलता है। मनौती मानी जाती है।

सपना देखनेवाले मनुष्य को जिस प्रकार दूसरा जाग्रत मनुष्य जगा देता है उसी प्रकार जो विश्वस्वप्न से जाग उठा है वही महात्मा किसी सपने में खोए किसी जीव को जगा सकता है। अब पता चलेगा कि आत्मज्ञान के लिए गुरु की आवश्यकता क्यों महसूस होती है। " उत्तिष्ठत, जाग्रत, प्राप्य वरान्निबोधत " यह श्रुति-वचन प्रसिद्ध है। क्या, खुद सपनों की सृष्टि में फँसे हुए जीव वैसे ही अन्य जीवों को जगा सकते हैं? यहाँ गुरु " शाब्दे च परे च निष्णातम् " होना चाहिए। तुर्यगा में पहुँचा महात्मा आत्मज्ञान को वितरित नहीं कर सकता। क्योंकि

उसके पास शब्दों का अभाव होता है। उसका सबकुछ शब्दों के परे होता है। उसी प्रकार केवल वाक्पंडित भी कुछ काम का नहीं। क्योंकि जिन शब्दों के पीछे अनुभव की आधारशिला का अभाव होता है वे शब्द पानी के बुदबुदे मात्र होते हैं।

स्वप्न समाप्त होने के बाद स्वप्न–द्रष्टा स्वाभाविक ढंग से गहरी नींद में खो जाता है। उसी प्रकार जाग्रतावस्था में विचरनेवाला द्रष्टा भी गहरी नींद में खो जाता है। निद्रा एक अज्ञानावस्था है। अत: इस अज्ञानावस्था से बाहर निकलनेवाला मनुष्य अज्ञ ही होता है, और जागने पर उसे यह सृष्टि सत्य प्रतीत होने लगती है। स्वप्न अल्पकालीन अवस्था है। अत: स्वप्नद्रष्टा अनेकों स्वप्नों को देख सकता है। जाग्रतावस्था दीर्घकालीन है। अत: एक ही विश्वस्वप्न बार बार दिखाई देता है। जन्म और जागृति में इतना ही फर्क है।

मनुष्य जीव नहीं, वह सत्-चित्-आनंद परमात्मा है यह ज्ञान साधक को कब हो जाता है ? जन्म-मृत्यु के चक्र से मनुष्य कैसे मुक्त हो जाता है ? ये सनातन प्रश्न हैं। आत्मज्ञान के बाद सुख-दु:ख, आशा-निराशा, जय-पराजय, सफलता-असफलता आदि भाव लुप्त हो जाते हैं। ज्ञानावस्था में सृष्टि का रहस्य खुल जाता है। सारी सृष्टि ज्ञानमय प्रतीत होती है और वह मेरा ही स्वरूप है ऐसी अनुभूति हो जाती है। मैं पहले भी बता चुका हूँ कि मन में प्रतिबिंबित चैतन्यरूप ही जीव कहलाता है। इस प्रतिबिंब को नष्ट करने से जीवदशा नष्ट हो कर साधक ब्रह्म-स्वरूप को प्राप्त होगा। जब तक जीवदशा सत्य प्रतीत होती है, तब तक दृश्य-सृष्टि सत्य है। जब तक साधक ऊपरी दृश्य को देखता रहेगा, दृश्य की आधारशिला को वह नहीं देख पाएगा। सत्य तो वह आधारशिला है जिस के ऊपर सृष्टि की यह इमारत खड़ी है। जब तक साँप भासमान होता हैं, तब तक रज्जु का ज्ञान नहीं होगा। रज्जु का ज्ञान होते ही साँप नष्ट होगा और उस रज्जु के स्थान पर साँप नामक वस्तु पहले भी नहीं थी आज भी नहीं है और कल भी नहीं होगी, इस त्रिकालसिद्ध सत्य का ज्ञान हो कर मन सत्-चित्-आनंदघन स्वरूप हो जाएगा।

इस जगद्भ्रम का, इस भासमान सृष्टि का नाश नहीं किया जा सकता। लेकिन इसके द्रष्टा (जीव) का नाश किया जा सकता है। दृश्य के बिना द्रष्टा कहाँ, और द्रष्टा के बिना दृश्य कहाँ ? ये दोनों अपने आपमें स्वतंत्र नहीं है। दोनों में से द्रष्टा को नष्ट करने पर, दृश्य का भी नाश होगा ओर द्रष्टा दृश्य-रहित चैतन्यस्वरूप में एकरूप हो जाएगा। घट के पानी में सूर्यबिंब प्रतिबिंबित होता है। पानी में दिखाई देनेवाले सूर्यप्रतिबिंब को नष्ट करने का एकमात्र उपाय उस घट में संचित पानी को नष्ट कर देना है। यहाँ पानी द्रष्टा है। यह द्रष्टा नष्ट होने पर रह जाता है केवल सूर्य : सत्य का प्रतीक। जीवदशा का नाश इस शब्दप्रयोग से यह अभिप्राय नहीं है कि आत्महत्त्या के सहारे शरीर को नष्ट कर देना। जीवदशा के नाश का सही अर्थ मन का नाश। मन में प्रतिबिंबित चैतन्य को अहंकार, जीव

आदि नामों से पहचाना जाता है। जब जीवदशा प्रभावशाली होती है तब मनुष्य सत्-चित्-आनंदस्वरूप को भूल जाता है और सोचता रहता है कि, " मैं अल्पज्ञ जीव हूँ। मेरी शक्ति सीमित है। यह मेरी पत्नी है। ये बालबच्चे हैं। " आदि आदि। और यह सरासर भ्रम है।

जीव को नष्ट करने के दो तरीके हैं। विचार और वासना यही यनुष्य के मन की रचना है। विचार और वासना को घटाते जाइए, मन में प्रकट चैतन्य का प्रतिबिंब भी कृष्ण-पक्ष के चाँद के समान घटता जाएगा। विचार और वासना को जड़ से उखाड़ देने पर मन ही नष्ट हो जाएगा और मन के अ-भाव में प्रतिबिंब दिखेगा ही नहीं और साधक को ब्रह्मसत्य का साक्षात्कार होगा। मृगजल के पीछे होनेवाले सूर्यरूपी सत्य का ज्ञान केवल एक बार भी होने से आगे चल कर जब कभी मनुष्य मृगजल को देखता है तब उसे इस सूर्यसत्य की अनुभूति हो जाती है। अतः एक बार ब्रह्मसत्य का साक्षात्कार हो जाने के बाद साधक दृश्यसृष्टि के मोहजाल में नहीं फँसता। पातंजल योगदर्शन में बताई यम-नियमादि क्रियाओं से मनोनाश किया जा सकता है। मनोनाश और मुक्ति समानार्थक (Destruction of mind means liberation) है। गोरखपंथियों का यह महावाक्य है।

अहंकार को नष्ट करना यह मनोनाश का और एक उपाय है। अहंकार को नष्ट करने के लिए भगवान् ने गीता में चार मार्गों का दिग्दर्शन किया है। उनके नाम है : भक्तियोग, ज्ञानयोग, कर्मयोग और राजयोग। अतः इनके बारे में थोडी चर्चा करना उचित होगा।

१ : भक्तियोग : इसमें पूजा-पाठ का इतना महत्त्व नहीं जितना अन्यान्य भाव से ईश्वर की शरण मे जा कर वह जिस स्थिति में रखेगा, उसमें संतुष्टता मान-कर जीवन बीताने की मनोवृत्ति का है। मेरे जीवन की बागडोर मेरे हाथों में नहीं है, वह तो भगवान के हाथों में है। मेरा जीवन भगवान् के संकल्प का फल है। इस भाव को अवश्यमेव दृढ़ बनाना चाहिए। देहगत क्रियाओं का कर्ता मैं नहीं हूँ, ईश्वर हैं। वह जो कुछ करवाता है, मैं वही करता हूँ। इस मानसिक स्थिति तक पहुँचना भक्तियोग की चरम सीमा है। " ईश्वरः सर्वभूतानाम् हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ! " इस गीतावचन का पालन करने से भक्तियोग सिद्ध होता है। भगवान् श्री रामकृष्ण परमहंस " माँ " की अनुमति के बिना कुछ भी नहीं करते थे। सन्त-महात्मा बुद्धि, ज्ञान, विद्वत्ता आदि से भी बढकर भगवद्भाव को ऊँचा स्थान देते थे इसका यही रहस्य है। मेरे जीवन में जो भी भली-बुरी बातें घटती हैं वह ईश्वर की इच्छा का फल है। अतः उनका स्वीकार करना, ईश्वर की इच्छा को प्रमाण मानना मेरा परम कर्तव्य है, इस भाव से जीवन बिताने का नाम भक्तियोग है। भक्तियोग की प्रक्रिया में धीरे धीरे " मैं " नष्ट हो जाता है और चराचर में कर्ता

के रूप में ईश्वर के दर्शन होते हैं। भक्ति की यही उत्कट अवस्था है जिसमें "मैं" का अहंकाररूप पूर्णरूपेण नष्ट हो जाता है। मानसपुष्प को भगवान के चरणों में समर्पित करने की मानसिक विधि का नाम भक्तियोग है। फूल के इस समर्पण से वह निर्माल्य बन जाता है। और यही उसके जीवन की चरितार्थ है । पूजा–पाठ, मंदिरों का निर्माण, दान-धर्म आदि से भगवान वश में नहीं होते। उसके लिए यह जीवन मेरा नहीं है, भगवान का है, इस समर्पणभाव की आवश्यकता है।

२ : ज्ञानयोग : भक्तियोग की प्रारंभिक अवस्था में ईश्वर और जीव इस तरह के द्वैतभाव का अस्तित्व स्पष्टतया दिखाई देता है। लेकिन भक्तियोग की सर्वोच्च सीढी जीव-शिव, आत्मा-परमात्मा का मिलन है। भक्तियोगादि सभी योगमार्गों का चरम विकास ज्ञान है। ज्ञानमार्ग वही है जिसमें साधक सृष्टि, उसका द्रष्टा जीव और ईश्वर इनके बारे में अलग अलग सोचने के बगैर जिस परमात्म-स्वरूप के ऊपर यह सब भासमान होता है, उस मूलाधार परमात्मस्वरूप से जा मिलने का प्रयत्न करता है। "मैं कौन हूँ ?" ("को अहम् ?") इस तरह वह ज़रूर सोचता है। अगर मैं देहमात्र हूँ तो सुषुप्ति में मैं उसे क्यों नहीं अनुभव कर सकता ? मैं छोटा था तब मेरी देह भी छोटी थी। अब शरीर बढ़ गया है। फिर भी शरीर के किसी अंश के नष्ट होने से "मैं" नष्ट नहीं होता हूँ। क्योंकि शरीर अन्नमय है। वह अन्नग्रहण क्रिया का फल है। अत: सदा परिवर्तनशील और अन्न का फल होनेवाला शरीर "में" नहीं हो सकता। तो फिर मैं कौन हूँ ? निद्रा में मेरी श्वसन–क्रिया जारी रहती है। लेकिन मैं उसके बारे में अज्ञ रहता हूँ। प्राणायाम आदि क्रियाओं के समय मेरी साँस बन्द रहती है। फिर भी "मैं" अस्तित्व को खो नहीं देता। अत: "प्राण" मेरा स्वरूप नहीं है। तो क्या मन "मैं" हूँ ? लेकिन मन की वृत्तियाँ सदा बदलती रहती हैं और निद्रा में तो यह मन किसी अज्ञात स्थिति में विलीन हो जाता है। अतः हर क्षण बदलनेवाला, किसी और में विलीन होनेवाला मन "मैं" नहीं हो सकता। तो फिर जो गहरी नींद को अनुभव करता है वह "मैं" हो सकता है ? कतई नहीं। क्योंकि निद्रा अज्ञानावस्था है। उसमें न "में" स्वयं को जान सकता, न दुनिया "मुझे" जानती है। अर्थात् सुषुप्ति अज्ञानावस्था होने के कारण सुषुप्ति "मैं" नहीं। ऊपर वर्णित सभी कोष "मैं" नहीं हो सकते। तो क्या "मैं" सत्--चित्–आनंदघन स्वरूप हूँ । सत्--चित्--आनंद एक अनुभव है। इस अनुभव को करनेवाला इस अनुभव से अलग हो सकता है। अतः "सच्चिदानंद" के भी लुप्त होने पर कुछ रहा ही नहीं जाता। तो फिर द्रष्टा–दृश्य रहित ऐसा द्रष्टा कौन हो सकता है इसका वर्णन "यतो वाचो विवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह", "नेति नेति" इस प्रकार हार मानकर श्रुति में किया गया है। ज्ञानमार्ग वही है जिस में योगी द्रष्टा-दृश्य रहित बोधावस्था में विलीन होने के लिए सदा प्रयत्नशील रहता है।

वह संसारसंबंधी चिंता को मन से हटा देता है। क्योंकि सृष्टि परमात्म–स्वरूप के ऊपर दिखाई देनेवाला एक भ्रम है। रज्जु के ऊपर दिखाई देनेवाले साँप के विष के बारे में सोचना व्यर्थ है। क्योंकि रज्जु का ज्ञान होते ही सर्पकल्पना का अस्त हो जाता है। अतः ज्ञानयोगी की सारी ज्ञानेंद्रियों का लक्ष्य है विश्व का आदिकारण परमात्मस्वरूप। परिवर्तनशील, दृश्य, अशाश्वत सृष्टि से न उसे कुछ लेना है, न उसे कुछ देना है। ज्ञानस्वरूप आत्मा के अस्तित्व में उसका ज्ञानस्वरूप अस्तित्व विलीन होने पर ज्ञानयोगी उससर्वोच्च स्थिति को प्राप्त करता है जो मनुष्यजीवन का अन्तिम लक्ष्य है।

३ : **कर्मयोग** : अज्ञ मनुष्य के सभी कर्मों का लक्ष्य " स्व " होता है। मतलब यही है कि अज्ञ जन जो भी कुछ करता है, अपने निजी लाभ के लिए करता है। अर्थात् ऐसे सभी कर्म " अहंकार " से युक्त होते हैं। अज्ञ जन सोचता है, " मैं " ईश्वर की प्रार्थना करता हूँ। अब ईश्वर मुझे धन देगा। सुखी करेगा आदि। इस तरह सोचने का स्पष्ट अर्थ यह है कि, " मैं " कोई न कोई व्यक्तिविशेष हूँ और किसी न किसी उपाय से अपने को सुखी करना चाहता हूँ। महापंडित भी इस " अहंभाव " से मुक्त नहीं है। मनुष्य सोचता है, मैं ज्ञानी हूँ। मैं दाता हूँ। मैं शक्तिमान हूँ। दयालु हूँ। मैं त्यागी हूँ।" आदि आदि। ऐसे विचारों में " मैं " रूपी अहंभाव की मात्रा सदैव बढ़ती रहती है। जब तक यह अहंकार नष्ट नहीं होगा, तब तब साक्षात्कार असंभव है। अतः जो साधक भक्ति, ज्ञान तथा योग-मार्गों में कठिनाइयों को महसूस करते हैं, उनके लिए कर्मयोग बहुत ही सीधासाधा रास्ता है, जो उन्हें मुक्तिमंदिर की ओर बिना किसी अड़चन के ले जाएगा। " कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन " इस गीतावचन का सच्चा पालन ही निष्काम कर्मयोग है। मेरा कार्य मेरे व्यक्तिगत कल्याण के लिए नहीं, दूसरों के भलाई के लिए काम आवें। इस प्रकार के निःस्वार्थ भाव की इसमें अपेक्षा है। मैं जो भी कुछ इस दृश्य जगत में करता हूँ, वह वास्तव में मेरा कर्तृत्व नहीं है। मैं तो केवल कारणमात्र हूँ। भगवान मेरे द्वारा सब कुछ करा लेते हैं। इस तरह अहंकार-रहित भाव से नियत कर्म करते रहना, इसका ही नाम कर्मयोग है। अज्ञानावस्था में मनुष्य जो कुछ करता है उसमें अहंकार का भाव रहा करता है। अतः ऐसे कर्मों के फलस्वरूप कर्मबंधन निर्माण होता है। अतः इस अवस्था मैं अपने भलेबुरे कर्मों के फल को भोगना अनिवार्य हो जाता है और जीवदशा ज्यों-के-त्यों बनी रहती है। मैं कर्ता नहीं। इस देह के द्वारा भगवान् अपनी इच्छा ही से सब कुछ करा लेते हैं। इस भाव में अहंभाव की जड़ ही कट जाती है और साधक ज्ञानी हो जाता है। " ईशावास्यमिदं सर्व यत्किंच जगत्याम् जगत् " इस श्रुतिवचन के आदर्श पर जगत्, जीव, उसके कर्म, उन कर्मों का फल आदि को परमात्मा मानकर कामनारहित, निरहंकार वृत्ति से कर्माचरण करते रहने से " अहंकार "

से मुक्त हो कर परमात्मा में विलीन होने में क्या अड़चन पैदा हो सकती है ? लेकिन कुछ भी हो, निरपेक्ष बुद्धि से कर्म करते रहना अज्ञान की दशा में कठिन है। अत: अज्ञान यही निरपेक्ष-निष्काम कर्मयोग का शत्रु है । कदम कदम पर " मैं " रूपी अहंकार-जो अज्ञान का रूप है, साधक को अपनी राह से पीछे खींच लेता है। शुद्ध ज्ञानावस्था में भी एक अड़चन पैदा होती है। वह यह है कि पूर्ण ज्ञानी व्यक्ति सकाम और निष्काम कर्मों मे भेद नहीं कर सकता । क्योंकि वह परमात्म स्वरूप हो जाने के कारण ये दोनों कर्म उसके लिए न के वरावर हो जाते हैं। अत: निष्काम कर्मयोग कठिन साधना है। इस साधना में " कर्म त्याग " अपेक्षित नहीं हैं, अपेक्षित है " कर्मफल-त्याग। " फल (लाभ) की इच्छा से जब मनुष्य किसी कार्य को करने निकलता है, तब वह बंधन में फँस जाता है। क्योंकि जब तक भोक्ता है, तब तक मुक्ति कहाँ ?

४ : **राजयोग** :–पातंजलयोगदर्शन का दूसरा सूत्र है " योगश्चित्तवृत्तिनिरोध:"। विचार और वासना को नष्ट करने पर मन निर्मल हो जाता है। और ऐसे मन में चैतन्य प्रतिबिंबित होने पर साधक को साक्षात्कार हो जाता है । यमनियमों का पालन करने के बाद, आसन, प्राणायास, प्रत्याहार, धारणा और ध्यान इनकी दीर्घकाल साधना करने के बाद, अन्त में समाधि-अवस्था को कैसे प्राप्त किया जा सकता हैं , यह विषय राजयोग के अंतर्गत आता है। राजयोग के अभ्यास में जो बाधाएँ आती हैं,उनको दूर करने के उपायों का बडाही रोचक वर्णन ग्रंथोंमें उपलब्ध है। साधक का मन ज्यों ज्यों स्थिर हो जाता है, त्यों त्यों साधक को कुछ कुछ सिद्धियों का लाभ होता हैं । लेकिन ये सिद्धियाँ राजयोग के मार्ग के प्रलोभन हैं; जिसमें साधक को फँसना नहीं है। योगदर्शनकारों की यह सक्त ताकिद है] राज-योग देह की अपेक्षा मन के उदात्तीकरण (Sublimation) को अधिक महत्त्व देता है । प्राणायाम से मन में उद्भावित विचारों की गति मर्यादित हो जाती है। ध्यान-धारणा के कारण मन एकाग्र होता है। समाधि में ध्याता (ध्यान करनेवाला) और ध्येयवस्तु इस द्वंद्व का लोप होने से योगी " स्वरूप " में अधिष्ठित हो जाता है ।

अर्थात जो साधक राजयोग के आचरण में कठिनता को महसूस करते हैं उनके लिए महर्षि पतंजली " ईश्वरप्रणिधानाद्वा " इस सूत्र के द्वारा पूर्णरूपेण ईश्वर की शरण में जाने से भी ईश्वरसाक्षात्कार हो सकता है, ऐसी सिफारीश करते हैं। पूर्ण शरणागत होने का अर्थ ही अहंकार से मुक्त होना है । और अहं-कार का पूर्ण अभाव साक्षात्कार की स्थिति है। फिर भी इश्वरप्रणिधान यह आसान बात नहीं हैं । कदम कदम पर मनुष्य के अहंकार का विस्फोट हो जाता है और इसके फलस्वरूप साधना विफल हो जाती है । राजयोग की साधना से मिलनेवाली अद्भुत सिद्धियों के उतनेही अद्भुत चमत्कारों के रोचक वर्णनों को

पढकर कुछ साधक इतने प्रभावित होते हैं कि वे केवल ऐसी निम्न श्रेणी की सिद्धियों को प्राप्त करने के लिए राजयोग की साधना के पीछे पड़ जाते हैं। अब ऐसे अज्ञ जनों को बचाना कठिन है। सच्चा सत्-चित्-आनंद तो सिद्धियों के पर है। नदी के बहते पानी की मधुर ध्वनि को सुनकर तृष्णा से व्याकुल व्यक्ति का मन उल्लसित हो उठता है। लेकिन वह मधुर ध्वनि प्यास को नहीं बुझा सकती। सिद्धियाँ इस ध्वनि के समान होती हैं। पानी की ध्वनि पानी के नज़दीक होने का संकेत है। सिद्धियों का लाभ अन्तिम सफलता के नज़दीक होने का संकेतमात्र है।

तृष्णार्त सच्चे आनंद को, सच्चे समाधान को, सच्चि शांति को तब पाता है, जब वह उस पवित्र गंगामैया के जल को प्राशन करता है। सिद्धि के परे, परमात्मस्वरूप से मिलन होने में जो सुख है वह ऐसा ही है। फिर भी यह सब शाब्दिक चर्चा है। इस चर्चा से उस "परा" कोटि के आनंद की कल्पना-मात्र ही की जा सकती है। परमात्मस्वरूप का सुख भोगनेवाला परमात्मस्वरूप के सिवाय दूसरा कौन हो सकता हैं ? शक्कर की मिठास तो अपने आप में होती है।

अतः भक्तियोग, ज्ञानयोग, कर्मयोग और राजयोग साक्षात्कार के चार राजमार्ग हैं। भगवान ने गीता में इनके रहस्य का उद्घाटन किया है। मैंने अपने अनुभव और अपनी शक्ति के अनुसार इसके बारे में स्पष्टीकरण किया है। साक्षात्कारी महात्मा किस सुखसागर में विहरता हैं, व्यावहारिक जीवन में उसका बर्ताव कैसा रहता है आदि के वर्णन के बगैर यह अध्याय अधूरा रहेगा। जीवनमुक्तावस्था में योगी का मन पूर्णरूपेण नष्ट होने के कारण मन की जागृति, स्वप्न और सुषुप्ति ये तीन दशाएँ असंभव हो जाती हैं। समूची सृष्टि में परमात्मस्वरूप के सिवाय अन्य कुछ भी नहीं है, इस शाश्वत सत्य को अनुभव करने से वह व्यावहारिक सुख और दुःख के परे हो जाता हैं। उसकी नजरों में न कोई मित्र है, न शत्रु। संसार की हर एक वस्तु में अपने ही चैतन्यस्वरूप को देखने के कारण भला-बुरा, सुख-दुःख, मान-अपमान, हानि-लाभ आदि आदि द्वन्द्वों के वह पार हो जाता है। उसकी दृष्टि सृष्टिरूपी भ्रम से हट कर, उसकी जड में जो शाश्वत ब्रह्मसत्य है उसमें स्थिर हो जाती है। जरा, व्याधि और मृत्यु शरीर का धर्म है। चैतन्यस्वरूप योगी उनसे मुक्त है। इतना ही नहीं तो इन विकारों को भी वह आत्मस्वरूप मान कर " स्व " में समा लेता है। उसकी सभी देहगत क्रियाओं का कारण ईश्वरी प्रेरणा होती है। " मैं अमुक कर रहा हूँ। " ऐसा स्व-अभिमान (अहंकार) उसमें बिलकुल नहीं होता। उसके सिर पर संकट राशी के गिरने पर भी वह विचलित नहीं हो पाता। आसमान में बादल उमड़ते-घुमड़ते हैं, बिजली चमकती है, तूफान चलता है। फिरभी आसमान इनको नहीं जानता। वह इन के परे है। ज्ञानी पुरुष की योगावस्था की अल्प कल्पना हम तभी कर पाएंगे जब हम

सपना खुलनेपर, जाग्रतावस्था में भी उस सपने को देख पाएंगे। यह विश्व त्रिगुणात्मक है । मैं गुणातीत (सत्त्व, रज, तम गुणों के परे) हूँ। अतः मेरा उस सृष्टि से कछ संबंध नहीं है, यह उसका अनुभव रहा करता है । प्रारब्ध-कर्म के अस्तित्व तक, ईश्वर की इच्छा के अनुसार, योगी इस अवनी-तल पर देहरूपेण विचरता रहता है और देह के नष्ट होते ही मुक्त हो जाता है। उसके लिए फिर देह प्राप्ति की दशा नहीं है । क्योंकि ज्ञान-द्वारा उसके संचित कर्म का और भोग भोगने से प्रारब्ध-कर्म का नाश हो जाता है; और ज्ञानस्वरूप को प्राप्त होने के बाद अहंकाररहित किए कर्मों में वह बद्ध नहीं हो सकता ! यही कैवल्य है !!

□ □ □

.२५.

उपसंहार

इस संसार को सत्य माननेवाले जनसाधारण के लिए मैंने इस ग्रंथ की रचना की है। मेरी इस भूमिका को मैं पहले ही स्पष्ट कर चुका हूँ। इस ग्रंथ में जिन साधनाओं की मैंने चर्चा की है उसके पीछे मेरे अनुभव की आधारशिला है। सपने में दिखाई देनेवाले रुग्ण के लिए सपने में ही दवाई देकर सपने में ही इलाज करना पड़ता है। अतः इस संसार में रस लेनेवाले जनसाधारण की मानसिक शक्तियाँ, जो सीमित होती हैं, बढ़ाने के लिए, जो इस संसार में संभव हों, ऐसी ही साधनाओं की नितान्त आवश्यकता है। प्राणायाम आदि साधनाओं को अपनाने से जो सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं वह पहली सीढी है। तथा ज्ञानयोग के द्वारा मन को परमात्मभाव में स्थिर करनेसे होनेवाला साक्षात्कार यह दूसरी सीढ़ी है। कभी कभी बात ऐसी होती है कि ज्ञानी मनुष्य में सिद्धियाँ नहीं प्रकट होती; लेकिन पूर्ण रूपेण अज्ञानी व्यक्ति में अद्‌भुत सिद्धियों का आविष्कार होता है! कभी कभी ज्ञान और सिद्धियों के मिलन की बात भी संभव हो जाती है। भगवान रमण महर्षि ऐसे मुक्तात्मा थे कि जिनके व्यक्तित्व में परमात्मस्वरूप का पूर्णरूपेण आविष्कार हुआ था और फिर भी वे अद्‌भुत् चमत्कारों से दूर थे।

कुछ योगी अथवा फकीर खुद को जमीन के अंदर गाड़ देते हैं। इसे जड़–समाधि कहते हैं। कांच, लोहा इतना ही नहीं तो ऐसिड को भक्षण करनेवाले लोग भी होते हैं। कुछ जादूगर तो अपनी नजरों से वस्तु को यहाँ से वहाँ ले जाते हैं। कुछ ऐसे भी अद्‌भुत व्यक्ति होते हैं जो हवा में से चीजें निकालते हैं। हर देश में ऐसे हिप्नाटिस्ट हैं जो एकाद मनुष्य को संमोहित कर, उससे अद्‌भूत बातें करा लेते हैं। लेकिन ऐसा होते हुए भी, इन सिद्धियों तथा अद्‌भुत चमत्कारों के बावजूद थी, इन लोगों की गणना ज्ञानियों की श्रेणी में नहीं होती। विश्वामित्र ऋषि में ज्ञान और सिद्धियों का वास था। ज्ञानयोग के द्वारा वे परब्रह्मस्वरूप में पहुँच गए

थे और सिद्धियों के बल पर अपने संकल्प के अनुसार उन्होंने प्रतिसृष्टि का निर्माण भी किया था।

लेकिन सच्चा ज्ञानी सिद्धियों में बिककुल रुचि नहीं लेता। क्योंकि उसकी नजरों में सिद्धियों का चमत्कार, उसे देखनेवाले, उसकी प्रशंसा करनेवाले सभी भगवान की लीला के अंशमात्र है। ईश्वर के संकल्प के कारण ये सिद्धियाँ ज्ञानी के व्यक्तित्व में प्रगट होती हैं। फिर भी ज्ञानी को उनका ज्ञान नहीं होता। भगवान ईसा मसीहा के कुर्ते के छोर को स्पर्श करने से लोग व्याधिमुक्त हो जाते थे। लेकिन खुद ईसा मसीहा तो इसके बारे में कुछ भी नहीं जानते थे। पारस का स्पर्श होते ही लोहा सोना बन जाता है। लेकिन क्या, पारस इस बात को जानता है ?

योगवासिष्ठ बार बार ताकीद करता है कि हे साधकों, सिद्धियों के पीछे मत दौडो ! जितना अधिक तुम उनके पीछे जाओगे, सिद्धियाँ उतनी अधिक दूर चली जाएँगी ! यह कथन कितना सत्य है ! जो मनुष्य अपनी छाया के पीछे दौड़ता है, वह उसे कभी भी हस्तगत नहीं कर सकता। लेकिन जो मनुष्य अपनी छाया की ओर पीठ फेर कर चलने लगता है, छाया उसके पीछे पीछे हो आ जाती है। और भी एक बात है। साधक सिद्धियों को प्राप्त कर अपनी कीर्ति वढ़ाना चाहता है। वह चाहता है कि लोग उसका सन्मान करें, साधु अथवा महात्मा के रूप में उसकी पूजा हो। यह अहंकार जितना अधिक बलवान होगा, सिद्धियों को पाने की संभावना उतनी अधिक दूर चली जाएगी। अतः साधनाकाल में तथा उसकी पूर्णता के बाद साधक को चाहिए कि वह पूर्णरूपेण निरहंकार वृत्ति को धारण करे। ईश्वर की तुलना में " मैं " कुछ भी नहीं हूँ। यद्यपि मुझे सिद्धियों का लाभ हुआ, फिर भी वह ईश्वर की महिमा है; मेरी नहीं। इस निरहंकारवृत्ति से साधना करने पर जीवदशा नष्ट होती है और साधक परमात्म-स्वरूप में विलीन हो जाता है। " जीव " अल्पज्ञ है। " जीव " शक्तिहीन है। " मैं " या " अहं " भाव जीवदशा है। यह अहं-भाव जितना अधिक प्रभावी होगा, जीवदशा उतनी अधिक मात्रा में प्रबल होगी। और जीवदशा जितनी अधिक प्रबल होगी, साधक उतना अधिक अल्पज्ञ और शक्तिविहीन होगा। ज्यों ज्यों जीवदशा नष्ट होने लगती है, त्यों त्यों ईश्वर की महिमा साधक में आविष्कृत होती है।

इस ग्रंथ में मैंने जाग्रतमन (बहिर्मन, conscious mind) और अंतर्मन (सुप्त मन, Unconscious mind) ऐसी दो श्रेणियों की चर्चा की है। प्राचीन भारतीय श्रुतियों में इस विचारधारा के लिए प्रमाण मिलते हैं। आधुनिक मनो-विज्ञान में इसके बारे में विस्तृत तथा गंभीरतापूर्ण चर्चा की गई है। मुंडकोपनिषद में " द्वासुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिसस्वजाते " ऐसा वचन है। इस

संसारवृक्ष (देह) पर दो पक्षी हैं। एक पक्षी है कि जो वृक्ष की फुनगी पर महान् शांति के साथ अपनी महिमा में स्थिर बैठा हुआ है। उस वृक्ष पर जो दूसरा पक्षी है वह उस वृक्ष के मीठे तथा कडुवे फलों का स्वाद लेने में मग्न है। इस रूपक में पहला पक्षी हे तुर्यावस्था में स्थिर परमात्मस्वरूप शुद्ध अन्तर्मन और दूसरा पक्षी हैं जाग्रतावस्था का (जाग्रत,) मन। वृक्ष के कडुवे-मीठे फलों को चखने का अर्थ है सांसारिक सुख-दुःखों का भोग। नीचे की टहनी पर बैठा पक्षी फलों को छोड़ कर योंही अपनी नज़र ऊपर उठाता है। (याने साधना को अपनाता है।) उसे वह शिखरस्थ् पक्षी दिखाई देता है। (यही साध्य है।) वह नीचेवाला पक्षी धीरे धीरे ऊपर की ओर जाने लगता है। अब वह अनुभव करने लगता है कि, वह वृक्ष, उसके फल, वह ऊपरवाला पक्षी और वह स्वयं धीरे धीरे अदृश्य हो रहे हैं। (ज्ञान-प्राप्ति से जगत्‌भ्रम दूर हो जाता है।) और जब वह नीचेवाला पक्षी उस ऊपरवाले पक्षी को स्पर्श कर लेता है तब वह ऊपरवाला पक्षी, उसे स्पर्श करनेवाला वह स्वयं, वह वृक्ष, उसके फल, सभी पूर्णरूपेण नष्ट हो जाते हैं। (यही ब्राह्मी स्थिति है।) पाठकों, अल्पज्ञ सांसारिक मनुष्य हजारों पृष्ठों के ग्रंथ लिखते हैं। लेकिन उपनिषद में लिखे एक वाक्य की तुलना में भी वे टिक नहीं सकते! अतः स्वामी रामतीर्थ के एक वचन को हमेशा याद रखना है। वह वचन है : " Only read books written by realised souls. "

जनसाधारण यह भी पूछ सकते हैं कि किसी भी साधना के अपनाने के बिना केवल ईश्वर प्रणिधान के आधार पर साधक इन सिद्धियों को प्राप्त कर सकता है? इसका उत्तर " हाँ " में है। पातंजल-योग-दर्शन में " ईश्वर प्रणिधानाद्वा " ऐसा सूत्र दिया है। ईश्वर प्रणिधान का अर्थ है पूर्णरूपेण ईश्वर की शरण में जा कर, वह जिस स्थिति में रखेगा, उसमें संतुष्ट रहना। धन, दारा, पुत्र, प्रतिष्ठा आदि के लिए ईश्वर की प्रार्थना करना यह सच्ची ईश्वरभक्ति ही नहीं है। इसका कारण स्पष्ट है। ऐसी प्रार्थना करनेवाला ईश्वर को नहीं चाहता। वह चाहता है केवल सांसारिक सुख-भोग। ऐसी प्रार्थना से जीव और ईश्वर यह द्वन्द्व और भी दृढ़ बन जाता है। जब तक जीव स्वयं को ईश्वर से अलग समझता रहता है, तब तक वह अल्पज्ञ एवम् अल्पशक्तिशाली रह जाता है। किसी संकल्प के बिना, निरहंकार वृत्ति से जीवन बिताने का नाम है भक्तियोग। सच्चा साधक मान लेता है कि, जिस तरह इस संसार में घटनेवाली हर एक घटना—चाहे वह भली हो या बुरी, ईश्वर के संकल्प का परिणाम है, उसी तरह मैं भी इस संसार का अंश होने के कारण, मेरा भी जीवन " पराधीन " (पर=वह श्रेष्ठ, सर्वोपरी ईश्वर !) है। जिस तरह उसकी सत्ता के बिना वृक्ष का पत्ता भी नहीं हिल सकता, उसी प्रकार मेरा जीवन भी उसी के सूत्र संचालन से चलता है। सच्चे भगवत् भक्त के मन में यही भाव रहता है। भक्तियोग की

सर्वोच्च सीढ़ी पर एक ईश्वर और उसकी सर्वव्यापी सत्ता इस एकमात्र भाव के सिवाय अन्य कोई भाव भक्त के मन में नहीं रह सकता। भगवान श्रीराम-कृष्ण परमहंस अहंकार से इस कदर मुक्त हो गए थे कि मामूली से मामूली बात को करने के पहले वे "माँ" की अनुमति लेते थे। भगवान हमेशा कहा करते थे कि, "People shed a jugful of tears for their relatives but nobody cries for God !" (अर्थ है, "रिश्तेदारों के लिए आँसुओं की नदी बहानेवाले लोग भगवान के लिए एक बुंद भी नहीं गिराते !") गंगा के किनारे ग्रीष्म की तपती धूप में बालू में माथा रखकर बड़े ही हृदयद्रावक स्वर में भगवान श्रीराम-कृष्ण पुकारते थे, "माँ, तुम कब मिलोगी ? कब मिलोगी ?" सूर्यास्त होने पर उन्हें लगता था कि जीवन का और एक दिन चला गया। लेकिन "माँ" के दर्शन नहीं हुए। और इस विचार से उनका दुःख और भी तीव्र बन जाता। संत तुकाराम की अव्यभिचारी, एकनिष्ठ विठ्ठल-भक्ति को कौन नहीं जानता ? धंदे में उन्हें भारी हानि उठानी पड़ी। अकाल के संकट में बीवीबच्चे दाने दाने को तरसते हुए मृत्यु के आधीन हो गए। सारा गाँव उनके विरोध में खड़ा हुआ। फिर भी सन्त तुकाराम टस से मस नहीं हुए। उनकी विठ्ठल-भक्ति ज्यों के त्यों बनी रही। उन्होंने विठ्ठल भगवान् के चरणों को नहीं छोड़ा। ईश्वर चिंतन के सिवाय अन्य सभी बातों में अरुचि उत्पन्न होना, भक्ति की चरम सीमा है । संक्षेप में अभि-प्राय यह है कि अतूल्य भक्तियोग में जीव अपने कर्तृत्व को पूर्णरूपेण भूलकर अपनी देहयात्रा को ईश्वर के भरोसे छोड़ देता है। अलग कर्तृत्व के अभाव में जीवदशा परमात्मस्वरूप में एकरूप होकर स्वयं साधक ईश्वररूप बन जाता है। ऐसी दुर्लभ स्थिति में ईश्वर की सभी निधियों का लाभ उस योगी को हो जाना स्वाभाविक ही है। लेकिन ऐसा उच्च श्रेणी का भक्तियोग कोई सस्ती चीज़ नहीं है। इस पथ में हर मोड़ पर अहंकार साँप की भाँति अपना फन खड़ा कर देता है और इस अहंकार सर्प के फन को कुचलना बड़ा कठिन कार्य है। भक्तियोग माँगने का नाम नहीं है। त्यागने का नाम भक्तियोग है। अंतिम "मैं" या अहंभाव का त्याग करने से जीव शिव हो जाता है। इस विचार को अपना कर उसके अनुसार बर्ताव करना कठिन है। लेकिन सच्चा भक्तियोग क्या है इसका सही अर्थ में परिचय करा देने के लिए मैंने इतनी दीर्घ चर्चा है।

मन को निर्विचार, एकाग्र तथा एकप्रवाही करने की साधना का क्या महत्त्व है ? इसका उत्तर बहुत आसान है। "निर्विचार मन" वह मन है जिसे "मैं अमुक व्यक्ति हूँ।" इस सांसारिक ज्ञान का ज्ञान नहीं होता। मन की इस स्थिति में क्षणभर के लिए भी क्यों न हो, जीवदशा का नाश हो जाता है। और ऐसी ही निरहंकार (अहंभाव रहित) स्थिति में साधक सिद्धियों का स्वामी बन जाता है। अतः साधकों, इस सत्य को न भूलिए की, जबतक आप अपने व्यक्तित्व के अस्तित्व

को ज्यों के त्यों बना रखकर, एकाद सिद्धि का अद्‌भुत चमत्कार दिखाने के लिए बाहर निकलते रहेंगे, तब तक आप उसमें बिलकुल सफल नहीं होंगे।

हिप्नॉट्ज़िम, विचारसंक्रमण, और विचारग्रहण जैसी निम्न श्रेणी की सिद्धियों की साधना में 'स्व' को पूर्णरूपेण भूलने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन संकल्प-सिद्धि के लिए पूर्ण निर्विचार मन और 'स्व' के ज्ञान का पूर्ण लोप नितांत आवश्यक है। मनुष्य के साधारण संकल्प भी असफल रह जाते हैं इसका कारण यही है कि मन पूर्ण निर्विचार करने में और अहं को पूर्णतया भूलने में वह असफल रहता है।

मेरे इस ग्रंथ का विषय मोहिनी-विद्या और सिद्धियों की साधना है। फिर उनकी तुलना में आत्मज्ञान सिद्धियों की सिद्धि है, इसे नहीं भूलना है। परमात्म-स्वरूपज्ञान, जो जीवन का अन्तिम हेतु है, उसे सफल बनाने के लिए मेरे पाठक भगीरथ प्रयत्न करेंगे, इसके बारे में मेरे मन में कोई भी सन्देह नहीं है। मेरे परम पूज्य गुरुदेव ने जैसे मुझे प्रेरित किया, उसी के अनुसार मैंने इस ग्रंथ की रचना की है। इसमें लिखने के श्रम के अतिरिक्त मेरा कुछ भी नहीं है।

◻ ◻ ◻

.२६.

चिरंजीव जीवन :

भूमिका

जगत् ईशकल्पना है । ईश्वर कल्पक है । अत: इनके अतिरिक्त हर व्यक्ति में प्रगट होनेवाला "अहं" भाव (अहंकार) नष्ट होने पर जीवन्मुक्तावस्था का लाभ होता है । इस अवस्था में ज्ञानी पुरुष को संसार दिखाई देता है । फिर भी अहंकार का नाश होने के कारण वह ज्ञानी पुरुष एक अनुपम सुखावस्था में स्थिर हो जाता है । इस अन्तिम अध्याय में इस सर्वोच्च आनंद का वर्णन करने का मेरा इरादा है । ईश्वर से मेरी प्रार्थना है कि, ईश्वर करें कि, मेरे पाठक एक परमात्मा के सिवाय अन्य कुछ भी नहीं है इसका अनुभव करें और अपने अहंकार का पूर्णरूपेण त्याग कर जीवन्मुक्तावस्था को प्राप्त करें ।

मैं सन्तुष्ट हूँ ।

१) इस सृष्टि-संसारांतर्गत वस्तुमात्र और प्रिय जनों की आसक्ति की मात्रा को घटाकर, मैंने ईश्वर को मेरी ज्ञानेंद्रियों का लक्ष्य वना दिया । इसलिए मैं सुखी हूँ ।

२) इस सारी सृष्टि का स्वामी एकमात्र ईश्वर है और उसके संकल्प से सृष्टि में घटनेवाली सभी घटनाएँ घटती हैं और मेरा जीवन भी उसी के नियंत्रण में है, इसको पहचानने से मैं सुखी हूँ ।

३) हर क्षण को यह संसार बदलता जाता है । मैं संसार का अंग होने के कारण मेरा शरीर और मन भी प्रतिक्षण बदलता जाता है।

मैंने इस रहस्य को जान लिया और प्रतिक्षण बदलनेवाला शरीर और मन "मैं" नहीं हूँ, इसका ज्ञान होने से मैं सुखी हूँ।

४) व्याधियाँ, वृद्धत्व और मृत्यु देहसंबंधी बातें हैं। चिंता, मान-सन्मान और भय मन का भासमान सृजन है। "मैं" आत्मस्वरुप होने के कारण उसपर कोई भी विकार भासमान नहीं होता। इसको पहचान लेने से मैं सुखी हूँ।

५) मैं किसी भी संकल्प को नहीं करता। क्योंकि मेरा जीवन मेरी इच्छा का फल नहीं है। वह ईश्वर की इच्छा से होनेवाली बात है। इस सत्य को पहचानने से मैं सुखी हूँ।

६) वह धनी है, मैं क्यों नहीं? वह विद्वान् है, मैं अज्ञानी क्यों? इस तरह के विचारों से मैं मुक्त हूँ। क्योंकि यह स्थिति ईश्वरी संकल्प का दृश्य फल है। इसे जानने से मैं सुखी हूँ।

७) पंचतत्त्वों की शरीररूपी मूर्ति को रचा कर और उसमें प्रतिबिंबित होकर ईश्वर ही उसके आगेपीछे है इसे जानकर मैं सुखी हूँ।

८) ईश्वर सत्य, उसके संकल्प से बनी पंचमहाभूतात्मक सृष्टि माया। और इन दोनों के सिवाय "मैं" अस्तित्वहीन है। इसे पहचान-कर मैं सुखी हूँ।

९) हे परमात्मन्! अनंत कोटी ब्रह्मांडों को अपने ऊपर भासमान कर के भी तुम इसे नहीं जानते, यह कैसा महान् आश्चर्य है!

१०) ईश्वर की विस्मृति याने मछली का पानी के बाहर रहना। इस अनुभव के कारण मैं सुखी हूँ।

११) मेरा मन गुरुभक्ति और गुरु के प्रति गहरी श्रद्धा से परिपूर्ण होने के कारण मैं सुखी हूँ।

१२) महानतम ईश्वरभक्त भी प्रारब्ध-भोग से मुक्त नहीं है। इस सत्य को पहचान कर मैं सुखी हूँ।

१३) मनरूपी दर्पण में चैतन्य प्रतिबिंबित होता है और अपने स्व-रूप को भूलकर "जीव" दशा को धारण करता है। प्रतिबिंब के नाश के लिए, मन को नष्ट करना है। इसको जानकर मैं सुखी हूँ।

१४) विचार और वासना यही मन की रचना है। वासना और विचारों को रोकना ही मनोनाश है। इसके ज्ञान से मैं सुखी हूँ।

१५) जब तक संसारसंबंधी ज्ञान होता है तब तक मन का अस्तित्व बना रहता है। संसारज्ञान नष्ट होते ही चैतन्यरूप "मैं" के सिवाय कुछ नहीं बच सकता। इस तत्त्व को पहचान कर मैं सुखी हूँ।

१६) जिस प्रकार महारोगादि व्याधियाँ शरीर के लिए अमंगल और भयप्रद सिद्ध होती हैं, उसी प्रकार चिंता, क्रोध, द्वेष आदि मन को अमंगल बना देते हैं। इस सत्य को पहचान कर मैं सुखी हूँ।

१७) नम्रता अहंकार को नष्ट करने की जड़ीबूटी है, इसको जानकर मैं सुखी हूँ।

१८) अहंकार किस बात का? मेरा अल्पज्ञान, ज्ञानस्वरूप परमात्मा का अल्पप्रमाण प्रतिबिंब है। उसमें मेरा कुछ भी नहीं है। मुझे प्राप्त ऐहिक सुख उस परमात्मा के आनंदस्वरूप का प्रतिबिंब हैं। ज्ञान और सुख दोनों भी परमात्मा के प्रतिबिंब हैं इसे पहचानकर मैं सुखी हूँ।

११) भगवान् पर चढ़ाया फूल पवित्र हो जाता है। उसी प्रकार मेरा जीवन-पुष्प ईश्वर के चरणों पर समर्पित करने के कारण मैं पवित्र बन गया हूँ।

२०) परमात्मा के संकल्प से जो भी कार्य मुझे करना पड़ता है, उसे मैं खुशी के साथ निभाता हूँ। अतः मैं सुखी हूँ।

२१) देह-भाव की पूर्ण विस्मृति का ही नाम जीवन्मुक्ति है, इसे अनुभव कर मैं सुखी हूँ।

२२) मेरे आत्मस्वरूप के ऊपर देह और मन मृगजल के समान भासमान होते हैं। उनके अस्तित्व से अथवा नष्ट होने में मेरा कुछ भी हानि-लाभ नहीं। इस सत्य को जानकर मैं सुखी हूँ।

२३) जब तक भोग लेने की इच्छा है, जब तक विश्व सत्य लगता है, तब तक ईश्वर का अस्तित्व भी सत्य है। सपने में प्यासा मनुष्य जिस प्रकार सपने में दिखाई देनेवाले तालाब की ओर दौड़ता है, उसी प्रकार संसार में रहनेवाले मनुष्य ने ईश्वर के चरणों की ओर दौड़ना

चाहिए। इसे पहचानने से ही मैं सुखी हूँ।

२४) स्वप्न समाप्त होने पर न प्यासा मनुष्य रहता है, न उसको प्यास बुझानेवाला सरोवर। उशी प्रकार ब्राह्मी स्थिति में न जीव है न ईश्वर। उसे जानकर मैं सुखी हूँ।

२५) क्रोध करना हो, तो अपने मन पर करो। इच्छा करनी हो, तो चरित्र की इच्छा करो। द्वेष करना हो तो अहंकार का करो। सुख लेना हो तो कामवासना का मत ले ओ, ईश्वर-प्रशंसा का ले लो। इस उपदेश को अपनाने से मैं सुखी हूँ।

२६) मूल सूर्य अनंत शक्ति का भांडार है। लेकिन पानी में प्रतिबिंबित सूर्य में वे शक्तियाँ कहाँ होती है? उसी प्रकार परमात्मा अचिन्त्य शक्तियुक्त है। लेकिन मनुष्य-मन में प्रतिबिंबित उसके रूप में वे शक्तियाँ प्रकट नहीं होती। इस सत्य को पहचान कर मैं सुखी हूँ।

२७) पानी में प्रकट सूर्यप्रतिबिंब मूल सूर्यबिंब कदापि नहीं हो सकता। पानी सूख जाने पर प्रतिबिंबरूप आभास नष्ट होकर केवल सूर्यबिंब रह जाता है। उसी प्रकार मनोनाश होने पर जीवदशा नष्ट होती है और साक्षात् परमात्मा का अस्तित्व सिद्ध होता है। इस परमात्मा का स्वरूप हमारा स्वरूप है, इसे जानने से मैं सुखी हूँ।

२८) यदि रज्जु पर दिखाई देनेवाला साँप, उस रज्जु का स्मरण करने लगेगा, तो उसका सर्पत्व नष्ट होकर मूल रज्जु रह जाएगा। उसी प्रकार चैतन्य के ऊपर भासमान मन जब परमात्मा का स्मरण करने लगेगा, तब वह मन नष्ट होकर परमात्मा ही रहेगा। यह तत्त्व जानने से मैं सुखी हूँ।

२९) त्रिकोण काँच में से पार जानेवाली सूर्यकिरणें सप्तरंग धारण करती हैं। उसी प्रकार मनरुपी काँच में से पार होनेवाली आत्मकिरणें पंचतत्त्वात्मक सृष्टि के रूप में दूसरी तरफ प्रकट होती है। इसको जानकर मैं सुखी हूँ।

३०) मेरे आत्मस्वरूप के ऊपर अन्य कुछ भी नहीं है। अतः मैं किसे पाऊँ और किसका त्याग करूं? इस आनंदमय स्थिति में स्थिर होने से मैं सुखी हूँ।

(३१) मेरे गुरु के उपदेश का निचोड यही है कि, "यह सृष्टि और जिसके संकल्प के फलस्वरूप इस सृष्टि का सृजन हुआ वह परमात्मा इनके सिवाय अन्य कुछ भी संभव नहीं। फिर इसमें "मैं" कहाँ से आया? "मैं" ईश्वरकल्पित, सृष्टि ईश्वरकल्पित और भोग भी ईश्वरकल्पित होने से यह सभी परमात्मा ही है। अतः "मैं" नहीं हूँ ऐसा मानकर जीवन को जीयो।" इस उपदेश को व्यवहार में लाने से मैं सुखी हूँ।

(३२) जिस प्रकार मृगजल में सूर्यकिरणें सत्य होती हैं और वह मृगजल केवल भासमान (भ्रम) होता है, उसी प्रकार "अहं" रूप बोध में चैतन्य सत्यवस्तु है और उसमें "मैं" भासमान है।

(३३) "मैं" विरहित बोधावस्था एकान्त है। वही ब्राह्मी स्थिति है।

(३४) भगवन्! तेरी विस्मृति होते ही यह संसार खड़ा हो जाता है और मैं उसमें खो जाता हूँ। तेरा स्मरण होते ही मेरे साथ यह सारा संसार लुप्त हो जाता है। अतः अनन्त सांसारिक यातनाओं को भोगनेवाला जीव तेरी ही कृपा से स्थिर हो जाता है। इसलिए तेरा नाम अमृतमय है।

(३५) प्रकाशरहित दशा का नाम अंधःकार है। उसी प्रकार आत्मा का विस्मरण माया है। ईश्वर के मधुर नामस्मरण से आत्म-स्वरूप की स्मृति हो आती है। और ऐसी स्मृति माया का नाश करती है। नामस्मरण के कारण माया का पूर्ण नाश होता है और उसके साथ मायाकल्पित देहेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि आदि का नाश हो जाता है और जीव-दशा पूर्णरुपेण नष्ट होकर साधक आत्मरूप बन जाता है।

(३६) लकड़ी को जलाकर उसका नाश करनेवाली अग्नि उसी लकड़ी में सुप्तावस्थामें वास करता है। उसीं प्रकार जीवदशा का नाश करनेवाला ज्ञान हर मनुष्य-प्राणी में गुप्तरूपेण वास करता है।

(३७) नामस्मरण की प्रक्रिया में नामस्मरण करनेवाला और नाम एक दूसरे को नष्ट करते हैं और नामहीन आत्मस्वरूप ही अपनी महिमा में स्थिर हो जाता है।

(३८) किसी जलाशय में होनेवाली मछलियों के समूह में से केवल दो चार मछलियों को उठा ले जानेका काम बगुले जैसा पक्षी करता है। उसी तरह करोडों मनुष्य–प्राणियों में से कुछ इनेगिने भागवानों कों ही ईश्वर अपने पास ले जाकर आत्मस्वरुप में बसा देते हैं।

(३९) जल में दिखाई देनेवाले सूर्यप्रतिबिंब का नाश करने के लिए पहले पानी का नाश करना आवश्यक होता है; और सूरज की किरणें ही इस काम को करती हैं। उसी तरह मन में प्रकट होनेवाले परमात्मा के जीवरूपी प्रतिबिंब को नष्ट करने के लिए आवश्यक मनोनाश करने की क्षमता परमात्मा में ही है। इसे पहचानकर मैं सुखी हो गया हूँ।

(४०) चरित्र मेरा जीवन है। नम्रता मेरी पत्नी है। शुभकर्म मेरी संतान हैं। मनरूपी खेती में कष्ट उठाकर मैं आजीविका चलाता हूँ। उस खेत में मैंने ईश्वरनामरूपी बीज बोए हैं, और परमात्मा की कृपारूपी वर्षा की राह देख रहा हूँ। इस स्थिति में होने के कारण मैं सुखी हूँ।

(४१) संसार में रखना या जीवन्मुक्त कर देना ईश्वर के आधीन है। इस को जानकर मैं सुखी हूँ।

(४२) सपने में जिनको अनुभव किया है, ऐसे भोग, मानसन्मान, अपमान आदि के बारे में, जाग्रत् मनुष्य पूर्णरूपेण उदासीन रहता है। उसो प्रकार ज्ञानी मनुष्य सांसारिक जीवन के बारे में उदासीन होता है।

(४३) जाग्रत् अवस्था की देह स्वप्नसृष्टि कीं यात्रा करने में असमर्थ है। उसी तरह निर्गुण परमात्मा संसार के गोरखधंधे में नहीं आ सकता। परमात्मा की आराधना से ऐहिक सुखप्राप्ति की इच्छा करना मूर्खता है। क्योंकि परमात्मा और यह जड़ संसार इसमें संपर्क नहीं प्रस्थापित होता। मैं इसे जानता हूँ और सुखी हूँ।

(४४) सूरज की रोशनी पाकर चंद्रमा चमकने लगता है। उसी प्रकार परमात्मा के तेज से मेरा जीवन तेजस्वी हो गया है।

(४५) पक्षी आसमान में उड़ान भरता है; लेकिन उसका सारा ध्यान अपने भक्ष्य पर होता है। उसी प्रकार सकाम उपासक साधना के

पंखों से उड़ान भरते हैं; लेकिन उनका ध्यान ऐहिक कीर्ति तथा सांसारिक सुख इनके ऊपर होता है। मैं इसे जानता हूँ। अतः मैं सुखी हूँ।

(४६) परमात्मा सत्य और जीव कल्पना का खेल है। अतः दोनों का मिलन असंभव। जीव–शिव मिलन में जीव कल्पित। अतः उसका नाश हो कर सत्यरूप शिव रह जाता है। जीवदशा का नाश करने का ही अर्थ परमात्मस्वरूप का नीचे रह जाना है। इसे पहचान कर मैं सुखी हूँ।

(४७) अंधेरे में रज्जु के ऊपर सर्प भासमान होता है। लेकिन रज्जु को उसकी कल्पना भी नहीं होती; और मेरी जगह एक सर्प था जो अब नष्ट हो चुका है, ऐसे विचार भी उस रज्जु के मन को स्पर्श नहीं करते। उसी प्रकार " मैं " जीव था, अब वह दशा नष्ट हो कर भी परमात्मस्वरूप बन गया हूँ, ऐसा भाव ज्ञानी में नहीं होता।

(४८) बहुत बडी दूरी पर दिखाई देनेवाले मृगजल में एक मनुष्य खड़ा है। उसे देखनेवाले को लगता है कि वह डूब रहा है। वास्तव में मृगजल में खड़े मनुष्य को मृगजल का बिलकुल ज्ञान नहीं होता। वह अपनी स्थिति में स्थिर होता है ! उसी प्रकार ज्ञानी मनुष्य के ऐहिक सुख-दुःखों को देखने से अज्ञ जन सोचने लगते हैं कि वह भी आसक्ति में फँसा हुवा क्षुद्र जीव है। वास्तव में ज्ञानी पुरुष संसार के परे होने से वह परमात्म भाव में स्थिर होता है। इसे जानकर मैं सुखी हूँ।

(४९) अगर किसी धनी व्यक्ति का नौकर अपने मालिक के घर में से मुट्ठी भर चावल किसी भिखारी को दें, तो वह उसका दान नहीं होता। और कोई भी उस नौकर को दानी नहीं कहता। क्योंकि वह अनाज उस धनी का होता है। उसी प्रकार मेरे पास होनेवाले धन में से कुछ धन का मैं दान करूँ, तो मैं दानी नहीं ठहरूँगा। क्योंकि जो कुछ है, वह ईश्वर का है। मेरा कुछ भी नहीं है। इसे पहचान कर मैं सुखी हूँ।

(५०) जब तक परमात्म भाव की विस्मृति होती है तब तक ईश्वरनामस्मरण की महिमा है, इसे जानकर मैं सुखी हूँ।

(५१) ईश्वरनामरूपी चिंगारी से मन में उद्भावित विचार और वासना जलकर खाक हो जाते हैं, और मन ईश्वरमय हो जाता है। ऐसा मन "मैं परमात्मा हूँ।" इस सत्य को अनुभव करता है। लेकिन ऐसे मन का भी लय हो जाना जीवन्मुक्ति है। इसे पहचानने से मैं सुखी हूँ

(५२) सभी इष्ट तथा अनिष्ट वस्तुएँ ईश्वर संकल्पित सृष्टि के अंग होने के कारण वे ईश्वर के ही अनन्त रूप हैं और वे ईश्वररूप है, इसे जानकर मैं सुखी हूँ।

(५३) तृषार्थ मनुष्य अपनी तृष्णा को शांत करने के लिए नया कुआ खोदने को आरंभ नहीं करता। वह किसी कुए पर जा कर अपनी तृष्णा का समाधान करता है। उसी प्रकार ईश्वरदर्शन के लिए व्याकुल होने पर जप, तप, ध्यान, धारणा आदि के पीछे पड़ने की अपेक्षा म गुरु के चरणों पर गिर पड़ता हूँ। इस उपाय से मै सुखी हूँ।

(५४) हे गुरुदेव ! आपके निकट आते ही मेरी जीवदशा नष्ट होकर मै आत्मरूप बन गया हूँ। आपके चैतन्यरूप आलोक में मेरा जीव दशारूपी अंधःकार नष्ट हो गया है।

(५५) सूर्य पृथ्वी को प्रकाशित करता है। फिर भी वह इसे नहीं जानता। उसी प्रकार सद्गुरु अपने शिष्य पर कृपा की वर्षा करते हैं; लेकिन उनके मन में इसके संवंधी कोई विचार नहीं होता। वह उनका स्वभाव होता है।

(५६) अपने जीवन के लिए सूर्यमुखी को सूर्य के सम्मुख होना पड़ता है। मेरे जीवन के लिए मेरे सद्गुरु मेरे सम्मुख हो जाते है।

(५७) अग्नि की दाहक शक्ति प्रकट कराने का काम लकड़ी करती है। उसी प्रकार गुरु की महिमा का आविष्कार करने का कार्य शिष्य करता है।

(५८) च्यूँकि जीवनमुक्तावस्था में अहंकार का पूर्ण लोप हो जाता है, इसलिए ज्ञानी पुरुष के आशीर्वाद तथा उसकी कृपा की सफलता उसकी इच्छा का कार्य नहीं रह जाता। वह जिस परमात्म-स्वरूप में एकरूप हो जाता है, उस परमात्मा के सत्यसंकल्प का वह आविष्कार होता है। इसे जानकर मैं सुखी हो गया हूँ।

(५९) सूरज के सामने जुगनू का तेज लुप्त हो जाता है। उसी प्रकार आत्मज्ञानी महात्मा के सहवास में पंडितों का पांडित्य लुप्त हो जाता है।

(६०) पंडितों! तुम्हारे पास जो ज्ञानराशी है, उसे प्रकाशित करनेवाला ज्ञानस्वरूप परमात्मा तुम्हीं हो, इसे तुम नहीं पहचानोगे, तो तुम्हारा पांडित्य व्यर्थ है।

(६१) इस विश्व-संसार में एक अकेले परमात्मा के सिवाय मुझे अन्य कुछ भी दिखाई नहीं देता। वह परमात्मा सत्, चित् और आनंद-मय होने के कारण मुझे यत्र तत्र सर्वत्र आनंद और शांति के दर्शन होते हैं।

(६२) मृत्यु परमात्मस्वरूप होने के कारण वह मेरे मन को भाती है।

(६३) गुरु वह है जो इस विश्वस्वप्न में से जाग उठा है। अतः ऐसे गुरु की जाग्रत् भावस्थिति में अपने चित्त को विलीन करना ही गुरु-सेवा है।

(६४) दर्पण में दिखाई देनेवाले दीपज्योति के प्रतिबिंब से अन्य दीपक नहीं जलाया जा सकता। उसी प्रकार विद्वानों के सहवास में जीवस्थान पर ज्ञानदीप नहीं प्रज्वलित किया जा सकता। ज्ञानी महात्माओं के मन का लोप हो जानेके कारण उनका ज्ञान प्रतिबिंबात्मक नहीं होता। वे स्वयंशुद्ध ज्ञानरूपही होते हैं। अतः ऐसे महात्माओं के केवल दर्शन मात्र से ही जीवन सार्थक हो जाता है।

(६५) समाधिमें रुचि लेनेवाले योगियों! समाधि के काल में जिस आनंद और शान्ति को तुम अनुभव करते हो अगर उसे नामरूप संसार में विचरते समय भी पाओगे, तो हो तुम जीवन्मुक्त कहलाओगे।

(६६) जिसके सामने सूर्य भी एक मामूली तारा है, ऐसे महान्-तम तेजोनिधि को हम देख नहीं पाते हैं। उसी प्रकार महाज्ञानी पुरुषो-त्तम को जनसाधारण नहीं देख पाते हैं। क्योंकि वह समाज की मान्यताओं से अलग रहता है।

(६७) दिन में जब सूरज प्रकाशित होता है, तब उसकी तुलना में जिनका तेज लाखों लाख गुणा है, ऐसे तारे-सितारे अस्तंगत हो जाते

है। ऐसा होने पर भी उनकी महिमा को बाधा नहीं पहुँच सकती। उसी प्रकार ज्ञानी सन्तमहात्माओं का बड़प्पन अज्ञ जनों की नजरों में न के बराबर भी क्यों न हो, उनकी महिमा किंचित् भी नहीं घट जाती। इन अज्ञ जनों का ध्यान और उनकी श्रद्धा चमत्कार करनेवाले अनाडी योगियों पर होता है।

(६८) हे ईश्वर ! इस विश्वसंसार का ज्ञान जिस शक्ति के सहारे होता है, वह शक्ति आपके हिसाव से कल्पित है। अतः वह शक्ति आपके परमात्मस्वरूप के दर्शन नहीं कर सकती। उसी प्रकार मृगजल भी (जो स्वयं भ्रम है) सूरज के दर्शन नहीं कर सकता है।

(६९) नामरूपात्मक विश्वसंसार अहंभाव का कार्य है। अतः उसका ही नाश करने पर "अहं" के साथ यह विश्वसंसार ही नष्ट हो जाता है।

(७०) अपनी ही देह को दृश्य मानकर उसके सुख-दुःखों की ओर साक्षीरूप में देखनेवाले को ज्ञानी कहते है।

(७१) मेरी ज़िन्दगी की शाम हो चुकी है। मेरी आत्मा के ऊपर भासमास होनेवाला यह देहरूपी आवरण अव शीघ्र ही दूर होनेवाला है। इसको जानकर मै खुश हूँ। वास्तव में यह आवरण माया का परदा है। अतः उसका रहना या नष्ट होना अपने आपमें कुछ भी मतलव नहीं रखता। फिर भी अज्ञान से पूर्णरूपेण मुक्त होने की महत्वाकांक्षा मनुष्य को शीघ्र ही मुक्ति की ओर ले जाती है।

(७२) भगवन् ! आपके दर्शन इस जीव को दुर्लभ है। फिर भी, आप विश्वरूप होने के कारण मैं उस विश्व के दर्शन अन्तिम बार कर रहा हूँ। यह सृष्टि, उसमें होनेवाले कोटि कोटि जीव, पेड़-पौधे, सुदूर फैली हुई पर्वतश्रेणियाँ, सूर्यचन्द्रादि तेजोगोल और उनके भी आगे चमकनेवाले तारे-सितारे इनको देखकर मेरी वृत्तियाँ प्रभावित हो उठती हैं। जन्मजन्मान्तर में जिस विश्व में मैं वास करता आया हूँ, वह अब मेरे सहित मृगजलवत् अस्तंगत हो जाएगा।

(७३) निर्जन वन में किसी वृक्ष पर, घोंसले में बैठा दृष्टिहीन, अज्ञ ऐसा नवजात पक्षीवालक जिस आतुरतासे और अनन्यभाव से अपनी

माँ की राह देखता है, उसी तरह भगवन् ! मै भी आपसे मिलने के लिए तड़प रहा हूँ।

(७४) आँखमिचौली खेलनेवाले लड़कों में से कुछ लड़के खेल के दरमियान मुक्त हो जाते हैं। लेकिन ईशत् स्पर्श होते हि साधक के साथ विश्वसंसार का ही अस्तित्व समाप्त हो जाता है।

(७५) जिसका सपना टूटा है और जिसकी नींद खुल गई है, वह मनुष्य सपने में बिलकुल दिलचस्पी नहीं लेता। उसी तरह हे भगवन्, । मेरा चित्त इस संसार में घटनेवाली घटनाओं के वारे में पूर्ण उदासीन है।

(७६) जो अमृत पी चुका है, उसके मन में कदान्न के लिए क्या आसक्ति हो सकती है? अतः ईश्वरनामरूपी अमृत मेरे मुख में हमेशा होने के कारण संसार की अन्य किसी भी चीज़ के लिए मेरा मन लालायित नहीं हो उठता।

(७७) लोहचुंबक की शक्ति के दायरे में प्रवेश करनेवाला लोहखंड उस लोहचुंबक की ओर आकर्षित होता है। उसी प्रकार मेरा चित्त ईश्वर प्रेम की कक्षा में होने के कारण उसकी ओंर खींचा जाता हैं। मेरे चित्त पर अब मेरा काबू नहीं है।

(७८) ज्यों ज्यों मेरा चित्त ईश्वर के निकट जाने लगा, त्यों ही त्यों जीवदशा में, नामरूपात्मक सृष्टि में भासमान होनेवाला आनंद उन नामरूपों को छोड़कर मेरें चित्त की ओर दौड़ने लगा हैं।

(७९) स्वप्न में जन्मा तृषार्त सपने में ही अपनी तृष्णा का समाधान करता हैं। अतः चित्त आत्मरूप के ऊपर कल्पित होने के कारण उसके द्वारा अनुभूत आनंद और दुःख कल्पित ही हैं।

(८०) हे भ्रम में फँसे जीव! क्या तू शांति चाहता है? तो फिर अपने चित्त मे भिदी इस विश्वसृष्टि का नाश कर। ईश्वरनामस्मरण से तू यह कर सकता है। परमात्मा की विस्मृति का नाम है माया। यह विस्मृति चित्त को उदित कर देती हैं। ईश्वरनामस्मरण के कारण चित्त परमात्मभाव में स्थिर हों जाता है। और अन्त में उसके चित्तत्व का लय हो जाता है। पूर्ण परमात्मभाव जाग्रत् होने से साधक जीवन्मुक्त हो जाता हैं।

(८१) मनुष्य पर गुजरनेवाले किसी संकट को "दैवी प्रकोप" मानना अज्ञान का लक्षण है। कृपा और प्रेम ईश्वर का स्थायी भाव है।

(८२) भगवन्! आज तककी मेरी सफल देह यात्रा आपकी कृपा का फल है। लेकिन "अहंकार" उसका श्रेय खुदको ले रहा था। लेकिन "स्व" भी आपके परमात्मस्वरुप में विलीन हो रहा है। अतः इस देह के आप ही स्वामी हैं। आपके संकल्प के अनुसार जिस स्थिति में यह देह रहेगी, उस स्थिति को जाननेवाला "मैं" भी आप ही हो गए हैं। भगवन्! आपके नामस्मरण के कारण यह जीव आत्मस्वरूप में स्थिर हो गया है।

(८३) अब चित्त ही परमात्मा बन जाने के कारण कौन, किसी का स्मरण करेगा?

(८४) मन दुःख की आधारशिला है। लेकिन यह मन, हे भगवान्! तुम्हीं हो। इसको जानने से मैं सुखी हूँ।

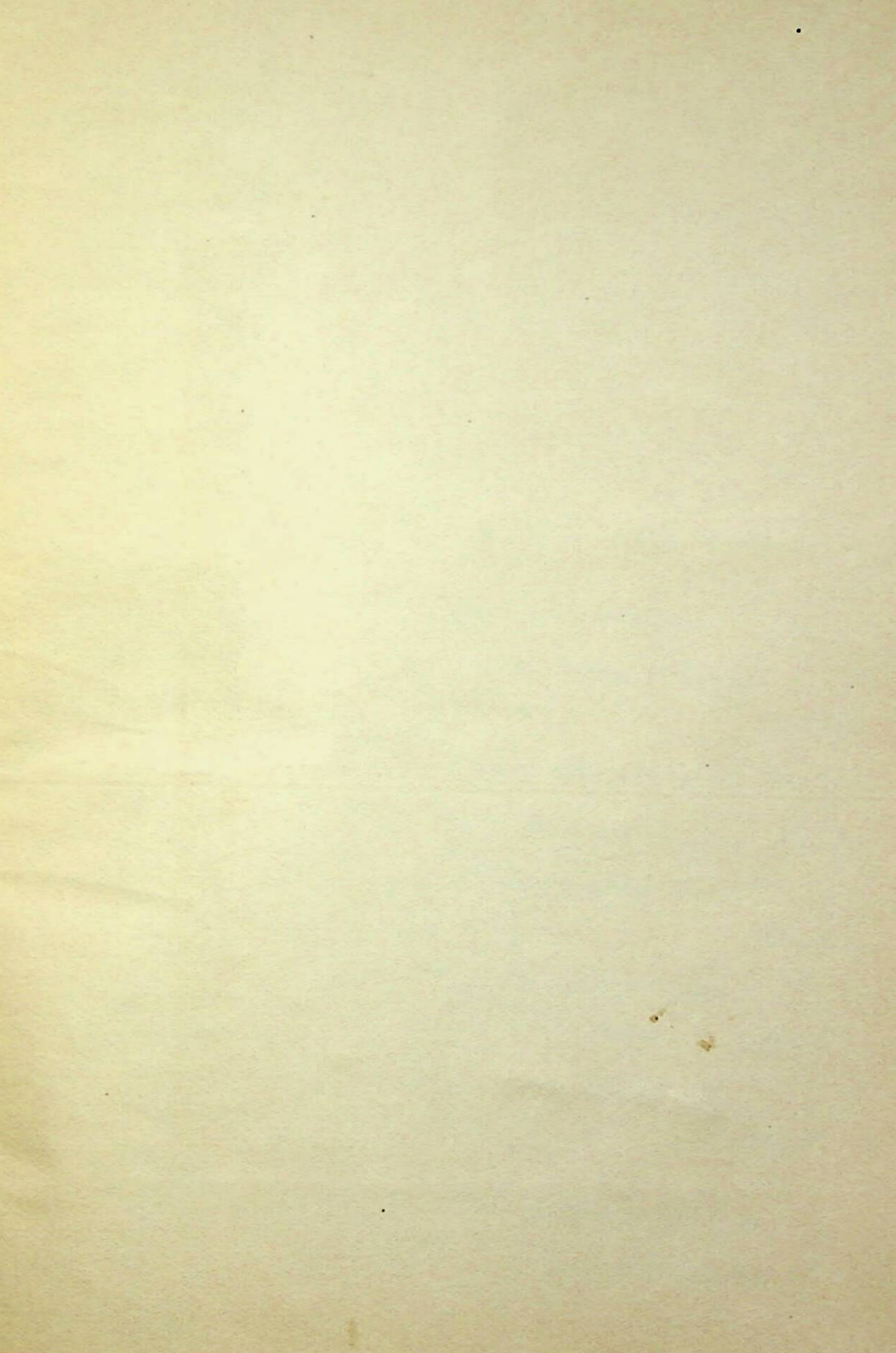
(८५) परमात्मासंकल्प से पैदा हुए भक्तों के लिए इस परमात्म संकल्परूपी ग्रंथ की रचना हुई हैं। इसमें मेरा अपना कुछ भी नहीं हैं, इस सत्य का ज्ञान होने से मैं सुखी हूँ।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

० ० ०

मनुष्य के अन्तर्मन की शक्ति कर्तुम् अकर्तुम् है। साधनाओं के द्वारा आप उसपर काबू पा सकते हैं। इस शक्ति से आपका जीवन प्रभावशाली, सुखी और पवित्र बने, यही प्रार्थना!

□ □ □



हमारी अंग्रेजी पुस्तकें

1	Read your own palm	Rs. 10
2	Mohini Vidya Sadhana & Siddhi	Rs. 15
3	How is today for you ?	Rs. 10
4	Auto Urine cure	Rs. 9
5	Current English for Indians	Rs. 5
6	Indian Student's Guide to Spoken English	Rs. 5
7	Mysterious trinity in Numbers	Rs. 10

मँगाईये :- श्रीगजानन बुक डिपो,

दादर बम्बई ४०००२८

मोहिनीविद्या साधना और सिद्धि

अपनी किस्म की एक बेजोड़ किताब है। मेरी चालीस साल की साधना तथा दीर्घानुभव का यह फल है। इस किताब में संकल्प-शक्ति (Will Power) को बढ़ाने की अनेक गुप्त क्रियाएँ तथा प्राणायाम, त्राटक, न्यास और मानसपूजा का विवरण दिया गया है।

मोहिनीविद्या वह शास्त्र है जिसके अध्ययन से आप ऐसी अदभुत सिद्धियों को हासिल कर सकते हैं जिनके द्वारा आप न केवल किसी अन्य व्यक्ति को अपने वश में कर सकते हैं, अपितु आप सारी दुनिया को भी गुलाम बना सकते हैं।

यह किताब आपको सिखा देगी कि आप अपने मन के संकल्पों को सफल कैसे बना सकते हैं; आप अपने दुःखों तथा संकटों का सामना कर अपना जीवन सुखी कैसे बना सकते हैं।

दारिद्र, बेकारी, असफलताएँ, बीमारियाँ, शत्रु-पीड़ा तथा भय आदि अनेकों समस्याओं के परिणामस्वरूप आज मनुष्य-मन चिंता का शिकार बन कर क्षीण तथा शक्तिहीन हो चुका है। ऐसी विषम परिस्थितियों में आप अपने मन को सदा प्रसन्न एवम् उत्साही कैसे रख सकते हैं? उसे शक्तिशाली कैसे बना सकते हैं? लोगों पर अपना प्रभाव डालकर उन्हें अपने वश में कैसे ला सकते हैं? संकट-काल में अपने मन को सन्तुलित रखते हुए आप संकटों से किस प्रकार मुक्ति पा सकते हैं? आप अपनी संकल्प-शक्ति का असीम विकास कर अपने को कैसे सफल बना सकते हैं? असीम विकसित इच्छाशक्ति का प्रयोग लोगों की भलाई के लिए किस तरह कर सकते हैं?

आपके इन सवालों के जवाबों को ढूंढ़ने में मेरी यह किताब पूरी सहायता करेगी।

इस किताब में वर्णित कतिपय गुप्त साधनाएँ मेरे परमादरणीय गुरु के मुखारबिंदार से मुझे ज्ञात हुई और उनकी आज्ञा से ही मैं उन साधनाओं का रहस्योद्घाटन् पहली बार कर रहा हूँ।

मुखपृष्ठ : सर्वोदय प्रिंटर्स बम्बई ४